-साहित्य माला—२

शिक्षा सिद्धान्त

[PRINCIPLES OF EDUCATION]

(प्रश्नोत्तर शैली में)

लेखक

श्री भाई योगेन्द्र जीत

एम० ए०, एम० एड०

एकाधिकारी विक्रेता—

पुस्तक मन्दिर, आगरा

साहित्य माला—२

शिक्षा सिद्धान्त

[PRINCIPLES OF EDUCATION]

(प्रश्नोत्तर शैली में)

लेखक

श्री भाई योगेन्द्र जीत

एम० ए०, एम० एड०

एकाधिकारी विक्रेता—

पुस्तक मन्दिर, आगरा

११२
शिक्षा

कुछ पुस्तक के सम्बन्ध में

यद्यपि शिक्षा विभाग द्वारा, प्रशिक्षण विद्यालयों के लिए कई पाठ्य-पुस्तकें नियत की जाती हैं परन्तु फिर भी विद्यार्थी ऐसी पुस्तकें चाहते हैं जो प्रश्नोत्तर शैली में लिखी गई हों। विद्यार्थियों की इस आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, यह पुस्तक भी प्रश्नोत्तर शैली में ही लिखी गई है। गम्भीर तथा सूक्ष्म विषय को भी बोधगम्य बनाने का पूरा-पूरा प्रयास किया गया है। आशा है कि बी० टी०, एल० टी० तथा बी० एड० के विद्यार्थी इस से लाभ उठाएंगे।

१-६-१९५९ भाई योगेन्द्र जीत

११२
शिक्षा

कुछ पुस्तक के सम्बन्ध में

यद्यपि शिक्षा विभाग द्वारा, प्रशिक्षण विद्यालयों के लिए कई पाठ्य-पुस्तकें नियत की जाती हैं परन्तु फिर भी विद्यार्थी ऐसी पुस्तकें चाहते हैं जो प्रश्नोत्तर शैली में लिखी गई हों। विद्यार्थियों की इस आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, यह पुस्तक भी प्रश्नोत्तर शैली में ही लिखी गई है। गम्भीर तथा सूक्ष्म विषय को भी बोधगम्य बनाने का पूरा-पूरा प्रयास किया गया है। आशा है कि बी० टी०, एल० टी० तथा बी० एड० के विद्यार्थी इस से लाभ उठाएंगे।

१-६-१६५६ — भाई योगेन्द्र जीत

विषय-सूची

912
शिक्षा
6501

विषय-सूची

शिक्षा का अर्थ और स्वरूप

(The Meaning and Types of Education)

Q 1. "By education I mean an all round drawing out of the best in child and man—body, mind and spirit"—Mahatama Gandhi—Elucidate this, bringing out the meaning and nature of education

("शिक्षा से मेरा तात्पर्य है, बालक तथा मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा में जो सर्वोत्तम है, उसका उद्घाटन करना" महात्मा गान्धी के इस कथन को ध्यान मे रखते हुए शिक्षा के अर्थ एव स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।)

उत्तर—शिक्षा का अर्थ—भिन्न-भिन्न शिक्षा शास्त्रियों ने शिक्षा की परिभाषा भिन्न भिन्न रूप मे की है। पेस्टालाजी (Pestalozzi) के अनुसार "मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों और मूल प्रवृत्तियों के सहज और स्वाभाविक विकास" (a natural harmonious and progressive development of man's innate Powers) का नाम ही शिक्षा है।

स्पेन्स रिपोर्ट (Spens Report on Secondary Education) के अनुसार शिक्षा का अर्थ है "व्यक्ति की विशेष आदतों, रुचियों, मानसिक तथा शारीरिक क्रियाओं, विचारों और नैतिक आदर्शों का विकास"।

रैडिन (Redden) शिक्षा की परिभाषा करता हुआ लिखता है, कि "शिक्षा के द्वारा हम उन प्रभुत्व तथा नियमबद्ध प्रभावों को प्राप्त करते हैं, जिनको समाज अपने तरुण वर्ग पर इस लिए डालता है कि बालक की सभी शक्तियों—शारीरिक, सामाजिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक—का भली भाँति विकास हो।"

शिक्षा का अर्थ और स्वरूप

(The Meaning and Types of Education)

Q 1. "By education I mean an all round drawing out of the best in child and man—body, mind and spirit"—Mahatama Gandhi—Elucidate this, bringing out the meaning and nature of education

("शिक्षा से मेरा तात्पर्य है, बालक तथा मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा में जो सर्वोत्तम है, उसका उद्घाटन करना" महात्मा गान्धी के इस कथन को ध्यान मे रखते हुए शिक्षा के अर्थ एवं स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।)

उत्तर—शिक्षा का अर्थ—भिन्न-भिन्न शिक्षा शास्त्रियों ने शिक्षा की परिभाषा भिन्न भिन्न रूप में की है। पेस्टालाजी (Pestalozzi) के अनुसार "मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों और मूल प्रवृत्तियों के सहज और स्वाभाविक विकास" (a natural harmonious and progressive development of man's innate Powers) का नाम ही शिक्षा है।

स्पेन्स रिपोर्ट (Spens Report on Secondary Education) के अनुसार शिक्षा का अर्थ है "व्यक्ति की विशेष आदतों, रुचियों, मानसिक तथा शारीरिक क्रियाओं, विचारों और नैतिक आदर्शों का विकास"।

रैडिन (Redden) शिक्षा की परिभाषा करता हुआ लिखता है, कि "शिक्षा के द्वारा हम उन अनुभूत तथा नियमबद्ध प्रभावों को प्राप्त करते हैं, जिनको समाज अपने तरुण वर्ग पर इस लिए डालता है कि बालक की सभी शक्तियों—शारीरिक, सामाजिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक—का भली भाँति विकास हो।"

शिक्षा का अर्थ और स्वरूप

(The Meaning and Types of Education)

Q 1 "By education I mean an all round drawing out of the bes in child and man—body, mind and spirit"—Mahatama Gandhi— Elucidate this, bringing out the meaning and nature of education.

("शिक्षा से मेरा तात्पर्य है, बालक तथा मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा में जो सर्वोत्तम है, उसका उद्‌घाटन करना" महात्मा गान्धी के इस कथन को ध्यान मे रखते हुए शिक्षा के अर्थ एव स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।)

उत्तर—शिक्षा का अर्थ—भिन्न-भिन्न शिक्षा शास्त्रियों ने शिक्षा की परिभाषा भिन्न-भिन्न रूप मे की है। पेस्टालाजी (Pestalozzi) के अनुसार "मनुष्य की आन्तरिक शक्तियो और मूल प्रवृत्तियो के सहज और स्वाभाविक विकास" (a natural harmonious and progressive development of man's in nate Powers) का नाम ही शिक्षा है।

स्पेन्स रिपोर्ट (Spens Report on Secondary Education) के अनुसार शिक्षा का अर्थ है "व्यक्ति की विशेष आदतों, रुचियो मानसिक तथा शारीरिक क्रियाओ, विचारों और नैतिक आदर्शों का विकास"।

रैडन (Redden) शिक्षा की परिभाषा करता हुआ लिखता है, कि "शिक्षा के द्वारा हम उन अनुभूत तथा नियमबद्ध प्रभावों को प्राप्त करते हैं जिनको समाज अपने तरुण वर्ग पर इस लिए डालता है कि बालक की सभी शक्तियों—शारीरिक, सामाजिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक—का अच्छी भाँति विकास हो।"

शिक्षा का अर्थ और स्वरूप

(The Meaning and Types of Education)

Q 1 "By education I mean an all round drawing out of the best in child and man—body, mind and spirit"—Mahatama Gandhi—Elucidate this, bringing out the meaning and nature of education.

("शिक्षा से मेरा तात्पर्य है, बालक तथा मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा में जो सर्वोत्तम है, उसका उद्घाटन करना" महात्मा गान्धी के इस कथन को ध्यान में रखते हुए शिक्षा के अर्थ एवं स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।)

उत्तर—शिक्षा का अर्थ—भिन्न-भिन्न शिक्षा शास्त्रियों ने शिक्षा की परिभाषा भिन्न-भिन्न रूप में की है। पेस्टालाजी (Pestalozzi) के अनुसार "मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों और मूल प्रवृत्तियों के सहज और स्वाभाविक विकास" (a natural harmonious and progressive development of man's innate powers) का नाम ही शिक्षा है।

स्पेन्स रिपोर्ट (Spens Report on Secondary Education) के अनुसार शिक्षा का अर्थ है "व्यक्ति की विशेष आदतों, रुचियों, मानसिक तथा शारीरिक क्रियाओं, विचारों और नैतिक आदर्शों का विकास"।

रैडिन (Redden) शिक्षा की परिभाषा करता हुआ लिखता है, कि "शिक्षा के द्वारा हम उन अनुभूत तथा नियमबद्ध प्रभावों को प्राप्त करते हैं जिनको समाज अपने तरुण वर्ग पर इस लिए डालता है कि बालक की सभी शक्तियों—शारीरिक, सामाजिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक—का भली भाँति विकास हो।"

तथा ग्रात्मिक विकास में सहायता करती है। क्योंकि शिक्षा की प्रक्रिया सारे जीवन भर चलती है, इसलिए शिक्षा व्यक्ति में सदा परिवर्तन करती रहती है। दूसरे शब्दों में शिक्षा इन परिवर्तनों का समूह है। इन परिवर्तनों का आधार मानसिक तथा ग्रात्मिक स्तर पर व्यक्तिगत अनुभव, अथवा सामाजिक सम्पर्क के आधार पर, सामाजिक अनुभव, कुछ भी हो सकता है। इसीलिए डिवी (Dewey) के कथनानुसार Education is the process of reconstruction and reconstitution of experience—शिक्षा अनुभवों का गठन व पुनर्गठन है।

शिक्षा का स्वरूप—शिक्षा के अर्थ को भली-भाँति समझने के लिए, हमें शिक्षा के दो रूपों पर भी ध्यान देना होगा। शिक्षा व्यापक भी हो सकती है और संकुचित भी। व्यापक रूप में शिक्षा का व्यापार जीवन पर्यन्त चलता रहता है। जैसे-जैसे मनुष्य के अनुभवों की वृद्धि होती जाती है, वैसे-वैसे वह शिक्षा ग्रहण करता रहता है। इस व्यापक दृष्टिकोण को सामने रखते हुए शिक्षा को केवल विद्यालय तक ही सीमित नहीं किया जा सकता।

हमारी भारतीय संस्कृति में शिक्षा के इस व्यापक स्वरूप को ही लिया गया है। वेदों के अनुसार "विद्या अमृत तत्व को प्राप्त कराती है" उपनिषदों के अनुसार विद्या हमें 'अन्धकार से प्रकाश की ओर,' "असत्य से सत्य की ओर" और "मृत्यु से अमरता की ओर" ले जाने वाली है। गीता में स्पष्ट कहा गया है। "वही विद्या है, जो हमें जन्म मरण के बन्धनों से मुक्त करे।"

फ्रोबेल (Froebel) के अनुसार शिक्षा मनुष्य को इस योग्य बनाती है कि वह प्रकृति और ईश्वर के साथ एकाकार हो सके।

१६ वीं तथा २० वीं शताब्दि में वैज्ञानिक और समाजवादियों की विचार धाराओं ने यद्यपि शिक्षा को आध्यात्मिक स्तर से भौतिक स्तर पर ला खड़ा किया परन्तु इस से शिक्षा की व्यापकता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

श्री वार्ड (Lester F. Ward) के मतानुसार प्राप्त ज्ञान को सब लोगों में बाँट देना ही, शिक्षा है।"

व्यवहारवाद (Pragmatism) के प्रसिद्ध विद्वान विलियम जेम्स (William James) का कथन है कि व्यापक रूप से शिक्षा मानव के

तथा आत्मिक विकास मे सहायता करती है। क्योकि शिक्षा की प्रक्रिया सा जीवन भर चलती है, इसलिए शिक्षा व्यक्ति मे सदा परिवर्तन करती रहती है। दूसरे शब्दो मे शिक्षा इन परिवर्तनो का समूह है। इन परिवर्तनों का आधार मानसिक तथा आत्मिक स्तर पर व्यक्तिगत अनुभव, अथवा सामाजिक सम्पर्क के आधार पर, सामाजिक अनुभव, कुछ भी हो सकता है। इसीलिए डिवी (Dewey) के कथनानुसार Education is the process of reconstruction and reconstitution of experience—शिक्षा अनुभवो का गठन व पुनर्गठन है।

शिक्षा का स्वरूप—शिक्षा के अर्थ को भली-भांति समझने के लिए, हमे शिक्षा के दो रूपों पर भी ध्यान देना होगा। शिक्षा व्यापक भी हो सकती है और संकुचित भी। व्यापक रूप में शिक्षा का व्यापार जीवन पर्यन्त चलता रहता है। जैसे-जैसे मनुष्य के अनुभवो की वृद्धि होती जाती है, वैसे-वैसे वह शिक्षा ग्रहण करता रहता है। इस व्यापक दृष्टिकोण को सामने रखते हुए शिक्षा को केवल विद्यालय तक ही सीमित नहीं किया जा सकता।

हमारी भारतीय संस्कृति में शिक्षा के इस व्यापक स्वरूप को ही लिया गया है। वेदो के अनुसार "विद्या अमृत तत्व को प्राप्त कराती है" उपनिषदों के अनुसार विद्या हमे 'अन्धकार से प्रकाश की ओर," "असत्य से सत्य की ओर" और "मृत्यु से अमरता की ओर" ले जाने वाली है। गीता में स्पष्ट कहा गया है। "वही विद्या है, जो हमें जन्म मरण के बन्धनो से मुक्त करे।"

फोबेल (Froebel) के अनुसार शिक्षा मनुष्य को इस योग्य बनाती है कि वह प्रकृति और ईश्वर के साथ एकाकार हो सके।

१९ वी तथा २० वी शताब्दि मे वैज्ञानिक और समाजवादियो की विचार धाराओं ने यद्यपि शिक्षा को आध्यात्मिक स्तर से भौतिक स्तर पर ला खड़ा किया परन्तु इस से शिक्षा की व्यापकता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

श्री वार्ड (Lester F. Ward) के मतानुसार प्राप्त ज्ञान को सब लोगो में बांट देना ही, शिक्षा है।"

व्यवहारवाद (Pragmatism) के प्रसिद्ध विद्वान विलियम जेम्स (William James) का कथन है कि व्यापक रूप से शिक्षा मानव के

शिक्षण-प्रक्रिया (Educative process) को द्वि-मुखी प्रक्रिया (Bi-polar process) कहा है, जिसका एक मुख अध्यापक है और दूसरा विद्यार्थी। दोनों के पारस्परिक विचारों, भावों, उद्वेगों, भावनाओं आदि के आदान-प्रदान का परिणाम ही शिक्षा है। अपने ज्ञान, बुद्धि, कल्पना, तर्क आदि मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों के आधार पर अध्यापक विद्यार्थी पर अपना प्रभाव डालता है और उसके व्यवहार में परिवर्तन कर उसको पूर्ण बनाने का यत्न करता है। अध्यापक तथा विद्यार्थी, दोनों ही समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए, एक दूसरे के व्यक्तित्व को प्रभावित करते हुए, एक दूसरे के समीप आते हैं।

एडम्स के समान डिवी (Dewey) भी शिक्षा को प्रक्रिया के रूप में स्वीकार करता है। उसके मतानुसार इस प्रक्रिया का मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक आधार भी है। यह मनोवैज्ञानिक आधार ही है जहाँ से शिक्षा का प्रारम्भ होता है। मनोवैज्ञानिक आधार के अनुसार शिक्षक को बालक के स्वभाव, रुचियों, क्षमताओं तथा क्रियाओं का ज्ञान होना आवश्यक है। परन्तु डिवी ने अधिक बल सामाजिक आधार पर ही दिया है। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "डेमोक्रेसी एण्ड एडूकेशन" (Democracy and Education) में वह लिखता है "All education proceeds by the participation of the individual in the social Consciousness of the race" अर्थात् व्यक्ति समाज में रह कर ही अपना विकास करता है। अतः व्यक्तिगत विकास के लिए समाज का विकास आवश्यक है। शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है और बिना सामाजिक हित के, शिक्षा का कोई महत्व नहीं। इसलिए शिक्षा के तत्वों में उसने अध्यापक, विद्यार्थी और समाज को माना है। इस दृष्टि से हम शिक्षा की प्रक्रिया को द्वि-मुखी न कह कर त्रि-मुखी (Tri-polar) कह सकते हैं। शिक्षक सामाजिक आवश्यकताओं (needs and demands) को ध्यान में रख कर विद्यार्थी के व्यक्तित्व को प्रभावित करने का यत्न करता है।

इसी बात को अनेकों शिक्षा शास्त्री, एक अन्य रूप में देखते हैं। यह ठीक है कि शिक्षा की प्रक्रिया में अध्यापक, विद्यार्थी और समाज तीनों

शिक्षण-प्रक्रिया (Educative process) को द्वि-मुखी प्रक्रिया (Bi-polar process) कहा है, जिसका एक मुख अध्यापक है और दूसरा विद्यार्थी। दोनो के पारस्परिक विचारो, भावो, उद्वेगो, भावनाओं आदि के आदान-प्रदान का परिणाम ही शिक्षा है। अपने ज्ञान, बुद्धि, कल्पना, तर्क आदि मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियो के आधार पर अध्यापक विद्यार्थी पर अपना प्रभाव डालता है और उसके व्यवहार मे परिवर्तन कर उसको पूर्ण बनाने का यत्न करता है। अध्यापक तथा विद्यार्थी, दोनो ही समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए, एक दूसरे के व्यक्तित्व को प्रभावित करते हुए, एक दूसरे के समीप आते हैं।

एडम्स के समान डिवी (Dewey) भी शिक्षा को प्रक्रिया के रूप मे स्वीकार करता है। उसके मतानुसार इस प्रक्रिया का मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक आधार भी है। यह मनोवैज्ञानिक आधार ही है जहां से शिक्षा का प्रारम्भ होता है। मनोवैज्ञानिक आधार के अनुसार शिक्षक को बालक के स्वभाव, रुचियो, क्षमताओ तथा क्रियाओ का ज्ञान होना आवश्यक है। परन्तु डिवी ने अधिक बल सामाजिक आधार पर ही दिया है। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "डेमोक्रेसी एन्ड एडूकेशन" (Democracy and Education) मे वह लिखता है "All education proceeds by the participation of the individual in the social Consciousness of the race" अर्थात् व्यक्ति समाज मे रह कर ही अपना विकास करता है। अत. व्यक्तिगत विकास के लिए समाज का विकास आवश्यक है। शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है और बिना सामाजिक हित के, शिक्षा का कोई महत्व नहीं। इसलिए शिक्षा के तत्वों मे उसने अध्यापक, विद्यार्थी और समाज को माना है। इस दृष्टि से हम शिक्षा की प्रक्रिया को द्वि-मुखी न कह कर त्रि-मुखी (Tri-polar) कह सकते है। शिक्षक सामाजिक आवश्यकताओं (needs and demands) को ध्यान मे रख कर विद्यार्थी के व्यक्तित्व को प्रभावित करने का यत्न करता है।

इसी बात को अनेकों शिक्षा शास्त्री, एक अन्य रूप मे देखते हैं। यह ठीक है कि शिक्षा की प्रक्रिया मे अध्यापक, विद्यार्थी और समाज तीनो

स्तव में हमारी भारतीय संस्कृति में गुरु अथवा शिक्षक को बहुत ऊँचा स्थान दिया गया है। बालकों के लिए, माता-पिता के बाद आचार्य ही जनीय समझा जाता था। बालक गुरुकुल में गुरु के परिवार का ही एक सदस्य बन कर रहता था और अपना विकास करता था। गुरु की कृपा ही सके लिए वरदान थी। जीवन के अन्तिम ध्येय निश्रेयस की ओर ले जाने वाला गुरु ही था। ऐसा शिक्षक कितने उच्च विचारों वाला, सच्चरित्र, योग्य तथा ज्ञान सम्पन्न होगा, इसकी हम कल्पना कर सकते हैं। इसी लिए तो कबीर ने भी कहा है —

> गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूँ पांय
> धन्य-धन्य गुरु आपणे, गोविन्द दिया मिलाय।

पाठ्यक्रम —यह न तो विद्यार्थी रूपी तत्व का एक भाग है और न ही अध्यापक रूपी तत्व का एक अग। पाठ्यक्रम दोनो को मिलाता है और उनके कार्यों की सीमा निर्धारित करता है। इस के द्वारा यह निश्चित किया जाता है। कि दोनों को क्या करना है। पाठ्यक्रम व्यक्ति की अभिलाषाओं, विचारों, क्रियाकलापों तथा परिणामों का समूह है जिसको आधार मान कर आगामी पीढ़ी को शिक्षा दी जाती है। जैसी शिक्षा एक राज्य या जाति को सुदृढ़ बनाने के लिए सर्वथा उपयुक्त है, वैसी ही शिक्षा सब को दी जाती है। इस दृष्टि से एक तन्त्रीय राज्य और प्रजातन्त्री राज्य दोनों के पाठ्यक्रम में बड़ा अन्तर होगा। प्रजातन्त्रीय राज्य में सभी को विकास का पूर्ण अवसर होगा। अतः पाठ्यक्रम का शिक्षा की दृष्टि से बड़ा महत्व है। व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करता है परन्तु वह शिक्षा क्या है और कैसे प्राप्त की जा सकती है, पाठ्यक्रम इसकी सीमा बनाता है।

अन्त में हम कह सकते हैं कि शिक्षा की प्रक्रिया त्रि-मुखी (Tri-polar) है, जिसमें शिक्षक, शिक्षार्थी तथा पाठ्यक्रम इन तीनों तत्वों का अपना-अपना अलग स्थान है।

Q 3 Describe the various categories or types under w Education can be placed, also giving its scope

स्थान दिया गया है। बालकों के लिए, माता-पिता के बाद आचार्य ही पूजनीय समझा जाता था। बालक गुरुकुल में गुरु के परिवार का ही एक सदस्य बन कर रहता था और अपना विकास करता था। गुरु की कृपा ही उसके लिए वरदान थी। जीवन के अन्तिम ध्येय निश्रेयस की ओर ले जाने वाला गुरु ही था। ऐसा शिक्षक कितने उच्च विचारों वाला, सच्चरित्र सुयोग्य तथा ज्ञान सम्पन्न होगा, इसकी हम कल्पना कर सकते हैं। इसी लिए तो कबीर ने भी कहा है —

> गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूं पांय
> धन्य-धन्य गुरु आपणे, गोविन्द दिया मिलाय।

पाठ्यक्रम —यह न तो विद्यार्थी रूपी तत्व का एक भाग है

और न ही अध्यापक रूपी तत्व का एक अंग। पाठ्यक्रम दोनों को मिलाता है और उनके कार्यों की सीमा निर्धारित करता है। इस के द्वारा यह निश्चित किया जाता है। कि दोनों को क्या करना है। पाठ्यक्रम व्यक्ति की अभिलाषाओं, विचारों, क्रियाकलापों तथा परिणामों का समूह है जिसको आधार मान कर आगामी पीढ़ी को शिक्षा दी जाती है। जैसी शिक्षा एक राज्य या जाति को सुदृढ़ बनाने के लिए सर्वथा उपयुक्त है, वैसी ही शिक्षा सब को दी जाती है। इस दृष्टि से एक तन्त्रीय राज्य और प्रजातन्त्री राज्य दोनों के पाठ्यक्रम में बड़ा अन्तर होगा। प्रजातन्त्रीय राज्य में सभी को विकास का पूर्ण अवसर होगा। अतः पाठ्यक्रम का शिक्षा की दृष्टि से बड़ा महत्व है। व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करता है परन्तु वह शिक्षा क्या है और कैसे प्राप्त की जा सकती है, पाठ्यक्रम इसकी सीमा बनाता है।

अन्त में हम कह सकते हैं कि शिक्षा की प्रक्रिया त्रि-मुखी (Tri-polar) है, जिसमें शिक्षक, शिक्षार्थी तथा पाठ्यक्रम इन तीनों तत्वों का अपना-अपना अलग स्थान है।

Q 3 Describe the various categories or types under which Education can be placed, also giving its scope

अनियमित शिक्षा का क्षेत्र बड़ा व्यापक होता है। इस व्यापक शिक्षा की अवधि जन्म से मृत्यु पर्यन्त है। जिस किसी स्थान पर भी जैसे-जैसे व्यक्ति को अनुभव प्राप्त होते जाते हैं, शिक्षा का सिलसिला चलता रहता है और व्यक्ति कुछ न कुछ सीखता रहता है। यह शिक्षा किसी प्रकार की संस्था, अनुशासन अथवा व्यवस्था से सीमित नहीं होती।

अध्यापक को दृष्टि में रखते हुए शिक्षा को दो और रूपों में भी बाँटा जा सकता है। इन्हें हम प्रत्यक्ष (Direct) और अप्रत्यक्ष (Indirect) शिक्षा कह सकते हैं। जहाँ शिक्षा, किसी विशेष उद्देश्य को सामने रख कर दी जाती है और उसकी व्यवस्था का विशेष प्रबन्ध किया जाता है, वहाँ प्रत्यक्ष शिक्षा होती है और जब शिक्षा प्रत्यक्ष रूप में किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए नहीं होती, तब वह अप्रत्यक्ष शिक्षा कहलाती है।

कुछ लोग पाठ्यक्रम की दृष्टि से उदार शिक्षा (Liberal Education) और व्यवसायात्मक शिक्षा (Vocational Education) सामान्य शिक्षा और विशेष शिक्षा, यह भेद भी करते हैं। परन्तु जब हम शिक्षा को व्यापक रूप में लेते हैं तो इन में किसी प्रकार का विरोध नहीं दिखता।

अध्यापन पद्धति की दृष्टि से व्यक्तिगत (Individual) और सामूहिक (Collective) शिक्षा नामक दो भेद भी किए जाते हैं। व्यक्तिगत शिक्षा में बालक की व्यक्तिगत आवश्यकताओं का ध्यान में रखा जाता है परन्तु सामूहिक शिक्षण में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि बालक सामाजिक वातावरण के साथ समन्वय स्थापित कर सके।

शिक्षा के स्रोत—जहाँ शिक्षा को व्यापक रूप में लिया जाता है वहाँ उसके कई स्रोत हैं। उन में से मुख्य ये हैं (१) परिवार (२) पाठशाला (३) धर्म (४) समाज (५) राज्य। इन में से, शिक्षा के क्षेत्र में, प्रत्येक का अपना-अपना स्थान है। शिक्षा के साधनों (Agencies) पर विचार करते समय, इन सब पर विस्तार पूर्वक विचार किया जाएगा।

अनियमित शिक्षा का क्षेत्र बड़ा व्यापक होता है। इस व्यापक शिक्षा का अवधि जन्म से मृत्यु पर्यन्त है। जिस किसी स्थान पर भी जैसे-जैसे व्यक्ति को अनुभव प्राप्त होते जाते हैं, शिक्षा का सिलसिला चलता रहता है और व्यक्ति कुछ न कुछ सीखता रहता है। यह शिक्षा किसी प्रकार की संस्था, अनुशासन अथवा व्यवस्था से सीमित नहीं होती।

अध्यापक को दृष्टि में रखते हुए शिक्षा को दो और रूपों में भी बाँटा जा सकता है। इन्हें हम प्रत्यक्ष (Direct) और अप्रत्यक्ष (Indirect) शिक्षा कह सकते हैं। जहाँ शिक्षा, किसी विशेष उद्देश्य को सामने रख कर दी जाती है और उसकी व्यवस्था का विशेष प्रबन्ध किया जाता है, वहाँ प्रत्यक्ष शिक्षा होती है और जब शिक्षा प्रत्यक्ष रूप में किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए नहीं होती, तब वह अप्रत्यक्ष शिक्षा कहलाती है।

कुछ लोग पाठ्यक्रम की दृष्टि से उदार शिक्षा (Liberal Education) और व्यवसायात्मक शिक्षा (Vocational Education) सामान्य शिक्षा और विशेष शिक्षा, यह भेद भी करते हैं। परन्तु जब हम शिक्षा को व्यापक रूप में लेते हैं तो इन में किसी प्रकार का विरोध नहीं दिखता।

अध्यापन पद्धति की दृष्टि से व्यक्तिगत (Individual) और सामूहिक (Collective) शिक्षा नामक दो भेद भी किए जाते हैं। व्यक्तिगत शिक्षा में बालक की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाता है परन्तु सामूहिक शिक्षण में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि बालक सामाजिक वातावरण के साथ समन्वय स्थापित कर सके।

शिक्षा के स्रोत—जहाँ शिक्षा को व्यापक रूप में लिया जाता है वहाँ उसके कई स्रोत हैं। उन में से मुख्य ये हैं (१) परिवार (२) पाठशाला (३) धर्म (४) समाज (५) राज्य। इन में से, शिक्षा के क्षेत्र में, प्रत्येक का अपना-अपना स्थान है। शिक्षा के साधनों (Agencies) पर विचार करते समय, इन सब पर विस्तार पूर्वक विचार किया जाएगा।

अनियमित शिक्षा का क्षेत्र बड़ा व्यापक होता है। इस व्यापक । की अवधि जन्म से मृत्यु पर्यन्त है। जिस किसी स्थान पर भी जैसे-जैसे व्यक्ति को अनुभव प्राप्त होते जाते हैं, शिक्षा का सिलसिला चलता रहता है और व्यक्ति कुछ न कुछ सीखता रहता है। यह शिक्षा किसी प्रकार की सस्था अनुशासन अथवा व्यवस्था से सीमित नहीं होती।

अध्यापक को दृष्टि में रखते हुए शिक्षा को दो और रूपों में भी बाँटा जा सकता है। इन्हें हम प्रत्यक्ष (Direct) और अप्रत्यक्ष (Indirect) शिक्षा कह सकते हैं। जहाँ शिक्षा, किसी विशेष उद्देश्य को सामने रख कर दी जाती है और उसकी व्यवस्था का विशेष प्रबन्ध किया जाता है, वह प्रत्यक्ष शिक्षा होती है और जब शिक्षा प्रत्यक्ष रूप में किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए नहीं होती, तब वह अप्रत्यक्ष शिक्षा कहलाती है।

कुछ लोग पाठ्यक्रम की दृष्टि से उदार शिक्षा (Liberal Education) और व्यवसायात्मक शिक्षा (Vocational Education) सामान्य शिक्षा और विशेष शिक्षा, यह भेद भी करते हैं। परन्तु जब हम शिक्षा को व्यापक रूप में लेते हैं तो इन में किसी प्रकार का विरोध नहीं दिखता।

अध्यापन पद्धति की दृष्टि से व्यक्तिगत (Individual) और सामूहिक (Collective) शिक्षा नामक दो भेद भी किए जाते हैं। व्यक्तिगत शिक्षा में बालक की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाता है परन्तु सामूहिक शिक्षण में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि बालक सामाजिक वातावरण के साथ समन्वय स्थापित कर सके।

. शिक्षा के स्रोत—जहाँ शिक्षा को व्यापक रूप में लिया जाता है वह [illegible] स्रोत हैं। उन में से मुख्य ये हैं (१) परिवार (२) पाठशाला [illegible]) राज्य।—इन में से, शिक्षा के क्षेत्र में, प्रत्येक [illegible] Agencies) पर विचार [illegible] या जाएगा।

अनियमित शिक्षा का क्षेत्र बडा व्यापक होता है। इस व्यापक शिक्षा की अवधि जन्म से मृत्यु पर्यन्त है। जिस किसी स्थान पर भी जैसे-जैसे व्यक्ति को अनुभव प्राप्त होते जाते हैं, शिक्षा का सिलसिला चलता रहता है और व्यक्ति कुछ न कुछ सीखता रहता है। यह शिक्षा किसी प्रकार की संस्था, अनुशासन अथवा व्यवस्था में सीमित नहीं होती।

अध्यापक को दृष्टि में रखते हुए शिक्षा को दो और रूपों में भी बाँटा जा सकता है। इन्हें हम प्रत्यक्ष (Direct) और अप्रत्यक्ष (Indirect) शिक्षा कह सकते हैं। जहाँ शिक्षा, किसी विशेष उद्देश्य को सामने रख कर दी जाती है और उसकी व्यवस्था का विशेष प्रबन्ध किया जाता है, वहाँ प्रत्यक्ष शिक्षा होती है और जब शिक्षा प्रत्यक्ष रूप में किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए नहीं होती, तब वह अप्रत्यक्ष शिक्षा कहलाती है।

कुछ लोग पाठ्यक्रम की दृष्टि से उदार शिक्षा (Liberal Education) और व्यवसायात्मक शिक्षा (Vocational Education) सामान्य शिक्षा और विशेष शिक्षा, यह भेद भी करते हैं। परन्तु जब हम शिक्षा को व्यापक रूप में लेते हैं तो इन में किसी प्रकार का विरोध नहीं दिखता।

अध्यापन पद्धति की दृष्टि से व्यक्तिगत (Individual) और सामूहिक (Collective) शिक्षा नामक दो भेद भी किए जाते हैं। व्यक्तिगत शिक्षा में बालक की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाता है परन्तु सामूहिक शिक्षण में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि बालक सामाजिक वातावरण के साथ समन्वय स्थापित कर सकें।

. शिक्षा के स्रोत—जहाँ शिक्षा को व्यापक रूप में लिया जाता है वहाँ [illegible] स्रोत हैं। उन में से मुख्य ये हैं (१) परिवार (२) पाठशाला [illegible] इन में से, शिक्षा के क्षेत्र में, प्रत्येक [illegible] (Agencies) पर विचार [illegible] या जाता।

अध्यात्मवादी विचार धारा (Idealism) प्रति प्राचीन है तथा इस की नींव बहुत गहरी है। यह विचार धारा आत्मा को सत्य तथा नित्य मान कर चलती है। शिक्षा के उद्देश्यों को निर्धारित करने के लिए यदि अध्यात्मवाद का अवलम्बन लिया जाए, तो स्पष्ट रूप से हमारे उद्देश्य निश्चित सनातन तथा अपरिवर्तनशील होंगे। शिक्षा का यह कार्य होगा कि इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, इनकी ओर बढ़े। इस तथ्य को स्वीकार कर लिया जाता है कि शिक्षा द्वारा इन उद्देश्यों को प्राप्त करना सम्भव है।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए नीचे लिखे साधनों का प्रयोग किया जाता है :—

(१) नियन्त्रण

(२) अनुशासन

(३) सुशिक्षा

अध्यात्मवादी विचार धारा इस बात को नहीं मानती कि समय के परिवर्तन अथवा परिस्थितियों के बदल जाने पर शिक्षा के उद्देश्य भी बदल जाएंगे।

व्यवहारवादी विचार धारा (Pragmatism) मानने वालों के मतानुसार शिक्षा के उद्देश्य, परिस्थिति, काल तथा समय के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं। व्यवहारवाद या प्रयोजनवाद के प्रवर्तक विलियम जेम्स (William James) और डिवी (Dewey) हैं। उनके अनुसार सत्य वही है जो उपयोगी हो। सत्य, सनातन अथवा अटल नहीं है। उसका निरन्तर निर्माण होता रहता है। हमारे नित्यप्रति के होने वाले अनुभवों का संचय ही सत्य है। नए-नए अनुभवों के साथ-साथ सत्य का रूप भी बदलता रहेगा। इस प्रकार व्यवहारवादी विचार धारा के अनुसार, संसार में कुछ भी अटल तथा अपरिवर्तनशील नहीं है। इसलिए शिक्षा के उद्देश्य वही होने चाहिए जिन्हें व्यक्ति अपने अनुभवों द्वारा प्राप्त कर सके।

डिवी (Dewey) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "डैमोक्रेसी एन्ड एडुकेशन" (Democracy and Education) में अच्छे उद्देश्यों की निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

अध्यात्मवादी विचार धारा (Idealism) बहुत प्राचीन है तथा
इस की नींव बहुत गहरी है। यह विचार धारा आत्मा को सत्य तथा नित्य मान कर चलती है। शिक्षा के उद्देश्यों को निर्धारित करने के लिए यदि अध्यात्मवाद का अवलम्बन लिया जाए, तो स्पष्ट रूप से हमारे उद्देश्य निश्चित सनातन तथा अपरिवर्तनशील होंगे। शिक्षा का यह कार्य होगा कि इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, इनकी ओर बढ़े। इस तथ्य को स्वीकार कर लिया जाता है कि शिक्षा द्वारा इन उद्देश्यों को प्राप्त करना सम्भव है।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए नीचे लिखे साधनों का प्रयोग किया जाता है :—

(१) नियन्त्रण
(२) अनुशासन
(३) सुशिक्षा

अध्यात्मवादी विचार धारा इस बात को नहीं मानती कि समय के परिवर्तन अथवा परिस्थितियों के बदल जाने पर शिक्षा के उद्देश्य भी बदल जाएंगे।

व्यवहारवादी विचार धारा (Pragmatism) मानने वालों के मतानुसार शिक्षा के उद्देश्य, परिस्थिति, काल तथा समय के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं। व्यवहारवाद या प्रयोजनवाद के प्रवर्तक विलियम जेम्स (William James) और डिवी (Dewey) हैं। उनके अनुसार सत्य वही है जो उपयोगी हो। सत्य, सनातन अथवा अटल नहीं है। उसका निरन्तर निर्माण होता रहता है। हमारे नित्यप्रति के होने वाले अनुभवों का सचय ही सत्य है। नए-नए अनुभवों के साथ-साथ सत्य का रूप भी बदलता रहेगा। इस प्रकार व्यवहारवादी विचार धारा के अनुसार, ससार में कुछ भी अटल तथा अपरिवर्तनशील नहीं है। इसलिए शिक्षा के उद्देश्य वही होने चाहिए जिन्हें व्यक्ति अपने अनुभवों द्वारा प्राप्त कर सके।

डिवी (Dewey) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "डैमोक्रेसी एन्ड एडुकेशन" (Democracy and Education) में अच्छे उद्देश्यों की निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

Q 7 In what ways can the social and individual with each other in India ? In what manner can the reconciled ? [Panjab 19..

(भारतवर्ष में शिक्षा के सामाजिक तथा व्यक्तिगत उद्देश्यों मे क्या विरोध हो सकता है ? इन दोनों प्रकार के उद्देश्यों में समन्वय किस प्रकार स्थापित किया जा सकता है ?) [पंजाब १९५३ सप्ली०]

Q 8 Commant on "Social Efficiency" as the aim of education How far, in your opinion is this aim, more or less desirable as Compared to others and why ? [Panjab 1955 Suppl]

(इस पर अपने विचार व्यक्त करो कि दूसरे उद्देश्यों की तुलना में "सामाजिक उपयोगिता" ही शिक्षा का उद्देश्य हो सकता है ?)

[पंजाब १९५५ सप्ली०]

Q 9 "The interests of the Social organism and of the individuals comprising it are actually antagonistic. They can never be re conciled and are essentially irreconcilable'

—Benjamin Kidd

Discuss

("समाज के हितों और उसके सदस्यों के हितों में कभी भी सामंजस्य नहीं हो सकता। वे विरोधी ही रहेंगे और निश्चित रूप से एक दूसरे के विरोधी हैं।") —बेंजेमन किड

अपने विचार व्यक्त करो।

उत्तर—शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य—शिक्षा के अन्दर, सामाजिक भाव, लाने का श्रेय हर्बट स्पेंसर (Herbert Spencer) को है। सबसे पहले उसी ने इस बात पर बल दिया कि व्यक्ति को ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिए, जिससे कि वह अपना जीवन, सुख से बिता सके। इस उद्देश्य का दार्शनिक आधार व्यवहारवादी या प्रयोजनवादी विचार धारा (Pragmatism) है। इस विचार धारा की निम्नलिखित मान्यताएँ हैं —

(क) संसार में कुछ भी अटल और अपरिवर्तनशील नहीं है।

Q 7 In what ways can the social and individual a[illegible] with each other in India ? In what manner can the [illegible] reconciled ? [Panjab 19..

(भारतवर्ष में शिक्षा के सामाजिक तथा व्यक्तिगत उद्देश्यों में क्या विरोध हो सकता है ? इन दोनों प्रकार के उद्देश्यों में समन्वय किस प्रकार स्थापित किया जा सकता है ?) [पंजाब १९५३ सप्ली०]

Q 8 Commant on "Social Efficiency" as the aim of education How far, in your opinion is this aim, more or less desirable as Compared to others and why ? [Panjab 1955 Suppl]

(इस पर अपने विचार व्यक्त करो कि दूसरे उद्देश्यों की तुलना में "सामाजिक उपयोगिता" ही शिक्षा का उद्देश्य हो सकता है ?)

[पंजाब १९५५ सप्ली०]

Q 9 "The interests of the Social organism and of the individuals comprising it are actually antagonistic. They can never be re conciled and are essentially irreconcilable '

—Benjamin Kidd

Discuss

("समाज के हितों और उसके सदस्यों के हितों में कभी भी सामंजस्य नहीं हो सकता। वे विरोधी ही रहेंगे और निश्चित रूप से एक दूसरे के विरोधी हैं।")

—बेंजेमन किड

अपने विचार व्यक्त करो।

उत्तर—शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य—शिक्षा के अन्दर, सामाजिक भाव, लाने का श्रेय हर्बर्ट स्पेंसर (Herbert Spencer) को है। सबसे पहले उसी ने इस बात पर बल दिया कि व्यक्ति को ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिए, जिससे कि वह अपना जीवन, सुख से बिता सके। इस उद्देश्य का दार्शनिक आधार व्यवहारवादी या प्रयोजनवादी विचार धारा (Pragmatism) है। इस विचार धारा की निम्नलिखित मान्यताएँ हैं —

(क) संसार में कुछ भी अटल और अपरिवर्तनशील नहीं है।

Q 7 In what ways can the social and individual a[illegible] with each other in India? In what manner can the [illegible] reconciled? [Panjab 19[illegible]

(भारतवर्ष में शिक्षा के सामाजिक तथा व्यक्तिगत उद्देश्यों में क्या विरोध हो सकता है? इन दोनों प्रकार के उद्देश्यों में समन्वय किस प्रकार स्थापित किया जा सकता है?) [पंजाब १९५३ सप्ली०]

Q 8 Comment on "Social Efficiency" as the aim of education How far, in your opinion is this aim, more or less desirable as Compared to others and why? [Panjab 1955 Suppl]

(इस पर अपने विचार व्यक्त करो कि दूसरे उद्देश्यों की तुलना में 'सामाजिक उपयोगिता" ही शिक्षा का उद्देश्य हो सकता है?)

[पंजाब १९५५ सप्ली०]

Q 9 "The interests of the Social organism and of the individuals comprising it are actually antagonistic. They can never be re conciled and are essentially irreconcilable"

—Benjamin Kidd

Discuss

("समाज के हितों और उसके सदस्यों के हितों में कभी भी सामंजस्य नहीं हो सकता। वे विरोधी ही रहेंगे और निश्चित रूप से एक दूसरे के विरोधी हैं।")

—बैंजमन किड

अपने विचार व्यक्त करो।

उत्तर—शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य—शिक्षा के अन्दर, सामाजिक भाव, लाने का श्रेय हर्बर्ट स्पेंसर (Herbert Spencer) को है। सबसे पहले उसी ने इस बात पर बल दिया कि व्यक्ति को ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिए, जिससे कि वह अपना जीवन, सुख से बिता सके। इस उद्देश्य का दार्शनिक आधार व्यवहारवादी या प्रयोजनवादी विचार धारा (Pragmatism) है। इस विचार धारा की निम्नलिखित मान्यताएँ है —

(क) संसार में कुछ भी अटल और अपरिवर्तनशील नहीं है।

Q 7 In what ways can the social and individual a[illegible] with each other in India ? In what manner can the [illegible] reconciled ? [Panjab 19[illegible]

(भारतवर्ष मे शिक्षा के सामाजिक तथा व्यक्तिगत उद्देश्यों में क्या विरोध हो सकता है ? इन दोनों प्रकार के उद्देश्यों में समन्वय किस प्रकार स्थापित किया जा सकता है ?) [पंजाब १९५३ सप्ली०]

Q 8 Comment on "Social Efficiency" as the aim of education How far, in your opinion is this aim, more or less desirable as Compared to others and why ? [Panjab 1955 Suppl]

(इस पर अपने विचार व्यक्त करो कि दूसरे उद्देश्यों की तुलना मे 'सामाजिक उपयोगिता' ही शिक्षा का उद्देश्य हो सकता है ?)

[पंजाब १९५५ सप्ली०]

Q 9 "The interests of the Social organism and of the individuals comprising it are actually antagonistic. They can never be re conciled and are essentially irreconcilable"

—Benjamin Kidd

Discuss

("समाज के हितों और उसके सदस्यों के हितों मे कभी भी सामंजस्य नहीं हो सकता। वे विरोधी ही रहेंगे और निश्चित रूप से एक दूसरे के विरोधी हैं।") —बेंजमिन किड

अपने विचार व्यक्त करो।

उत्तर —शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य—शिक्षा के अन्दर, सामाजिक भाव, लाने का श्रेय हर्बर्ट स्पेंसर (Herbert Spencer) को है। सबसे पहले उसी ने इस बात पर बल दिया कि व्यक्ति को ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिए, जिससे कि वह अपना जीवन, सुख से बिता सके। इस उद्देश्य का दार्शनिक आधार व्यवहारवादी या प्रयोजनवादी विचार धारा (Pragmatism) है। इस विचार धारा की निम्नलिखित मान्यताएं है —

(क) संसार में कुछ भी अटल और अपरिवर्तनशील नहीं है।

ब्रूनो आदि को उनके युग के समाज ने क्या-क्या कष्ट नहीं दिए। ईसा और सुकरात आदि को जो आज युगद्रष्टा के नाम से विख्यात हैं, अपने समाज के द्वारा ठुकरा दिए गये। दूसरे, समाज को व्यक्ति से श्रेष्ठ समझने के कारण और व्यक्ति को समाज का अन्ध भक्त बनाने के परिणाम-स्वरूप ही उस संकीर्णता का पोषण किया जा रहा है जिसका घिनौना रूप राजनीतिक, धार्मिक और जातिवाद की कट्टरता मे दिख रहा है।

बागले (Bagley) और डिवी (Dawey) ने इस उद्देश्य के दूसरे रूप को ही स्वीकार किया है। इसे सामाजिक कुशलता (Social efficiency) का नाम दिया गया है। पश्चिम मे इङ्गलैंड और अमरीका तथा आधुनिक भारत भी इसी उद्देश्य मे विश्वास रखते हैं। सामाजिक कुशलता के अनुसार व्यक्ति को अच्छा नागरिक बनना चाहिए। उसे समाज पर भार-स्वरूप नहीं होना चाहिए। श्री बागले (Bagley) के अनुसार सामाजिक कुशलता मे नीचे लिखी विशेषताएँ है —

(क) आर्थिक कुशलता—व्यक्ति अपना भार स्वयं वहन करे।

(ख) यदि हमारी आकांक्षाएँ, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप मे।

समाज की उन्नति मे सहायक नहीं है, तो उनका त्याग कर देना।

डिवी (Dowey) के अनुसार "सामाजिक कुशलता का अर्थ है, व्यक्ति द्वारा सामूहिक क्रियाओ मे भाग लेने की क्षमता।" (Social efficiency as an educational purpose should mean, cultivation of power to join freely and fully in shared or common activities") एक दूसरे स्थान पर वे कहते हैं कि "सामाजिक कुशलता, व्यक्ति मे सामाजिक हित की भावना का सचार करने एव अपने व दूसरे के अनुभवों और हितो को अलग रखने की भावना को नष्ट करने की प्रवृत्ति है।" ("In the broadest sense, social efficiency is nothnig less than that of socialization of mind which is actively concerned in making enperiences more communicable, in breaking down the barriers of social stratification which make individuals impervious to the interesls of others")

सूनो आदि को उनकेयुग के समाज ने क्या-क्या कष्ट नहीं दिए। ईसा और सुकरात आदि को जो आज युगद्रष्टा के नाम से विख्यात हैं, अपने समाज के द्वारा ठुकरा दिए गये। दूसरे, समाज को व्यक्ति से श्रेष्ठ समझने के कारण और व्यक्ति को समाज का अन्ध भक्त बनाने के परिणाम-स्वरूप ही उस संकीर्णता का पोषण किया जा रहा है जिसका घिनौना रूप राजनीतिक, धार्मिक और जातिवाद की कट्टरता में दिख रहा है।

बागले (Bagley) और डिवी (Dawey) ने इस उद्देश्य के दूसरे रूप को ही स्वीकार किया है। इसे सामाजिक कुशलता (Social efficiency) का नाम दिया गया है। पश्चिम में इङ्गलैंड और अमरीका तथा आधुनिक भारत भी इसी उद्देश्य में विश्वास रखते हैं। सामाजिक कुशलता के अनुसार व्यक्ति को अच्छा नागरिक बनना चाहिए। उसे समाज पर भार-स्वरूप नहीं होना चाहिए। श्री बागले (Bagley) के अनुसार सामाजिक कुशलता में नीचे लिखी विशेषताएँ हैं —

(क) आर्थिक कुशलता—व्यक्ति अपना भार स्वयं वहन करे।

(ख) यदि हमारी आकांक्षाएँ, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से।

समाज की उन्नति में सहायक नहीं हैं, तो उनका त्याग कर देना।

डिवी (Dewey) के अनुसार "सामाजिक कुशलता का अर्थ है, व्यक्ति द्वारा सामूहिक क्रियाओं में भाग लेने की क्षमता।" (Social efficiency as an educational purpose should mean, cultivation of power to join freely and fully in shared or common activities") एक दूसरे स्थान पर वे कहते हैं कि "सामाजिक कुशलता, व्यक्ति में सामाजिक हित की भावना का संचार करने एवं अपने व दूसरे के अनुभवों और हितों को अलग रखने की भावना को नष्ट करने की प्रवृति है।" ("In the broadest sense, social efficiency is nothnig less than that of socialization of mind which is actively concerned in making experiences more communicable, in breaking down the barriers of social stratification which make individuals impervious to the interests of others")

world except in and through the free activities of individual men and women and that educational practice must be shaped to accord with that truth.) सन. शिक्षा को ऐसा रूप देना चाहिए कि व्यक्ति को अपने विकास के लिए, अनुकूल परिस्थितियाँ प्राप्त हो सकें। अपनी पुस्तक के पहले अध्याय में शिक्षा-दर्शन सम्बन्धी दृष्टिकोण स्पष्ट करने के पश्चात्, दूसरे अध्याय में नन (Nun) ने प्राणी शास्त्र (Biology) के द्वारा अपने पक्ष का समर्थन किया है। उनके विचार में समस्त प्राणी-जगत में प्रत्येक प्राणी अपने उच्चतम विकास के लिए प्रयत्न करता है। इसलिए व्यक्तित्व के विकास का उद्देश्य प्रकृति के नियम के अनुकूल है।

यूकेन (Euken) के मतानुसार व्यक्तित्व से हमारा तात्पर्य आध्यात्मिक व्यक्तित्व है। वह कहता है—"हमारे जीवन का मुख्य कार्य है अपने सच्चे स्वरूप का विकास करना तथा आध्यात्मिक व्यक्तित्व के परिवर्धन में उस स्वरूप को निखारना" (The chief movement of our life is to wine our own being completely and to develop spiritual individuality)

इस प्रकार जब हम कहते हैं कि शिक्षा का ध्येय व्यक्तित्व का विकास करना है तो हमारा यह तात्पर्य होता है कि हम अपने व्यक्तित्व को इतना ऊँचा उठाएँ जिससे कि हम विश्व की सर्वोच्च सत्ता के साथ एक रूप हो सकें। व्यक्तित्व के विकास की इस अवस्था को विद्वानों ने आत्म-साक्षात्कार या आत्म बोध (Self-realization) की संज्ञा दी है।

इस लक्ष्य के अनुसार जो पाठ्यक्रम होगा वह बालक की रुचियों के आधार पर होगा। किसी भी विषय को पढ़ाने का उद्देश्य व्यक्ति का विकास होगा। बालकों की रुचियों तथा क्षमताओं में अन्तर होता है, इसलिए पाठ्यक्रम का संगठन इस ढंग से करना होगा कि उसमें आवश्यकता अनुसार हेर-फेर किया जा सके।

सामाजिक और व्यक्तिगत उद्देश्यों में समन्वय (Synthesis between the Social and Individual Aims of Education)—यदि ऊपरी दृष्टि से देखा जाए तो शिक्षा के इन दोनों उद्देश्यों में बहुत

world except in and through the free activities of individual men and women and that educational practice must be shaped to accord with that truth.) अत: शिक्षा को ऐसा रूप देना चाहिए कि व्यक्ति को अपने विकास के लिए, अनुकूल परिस्थितियां प्राप्त हो सकें। अपनी पुस्तक के पहले अध्याय में शिक्षा-दर्शन सम्बन्धी दृष्टिकोण स्पष्ट करने के पश्चात्, दूसरे अध्याय में नन (Nun) ने प्राणी शास्त्र (Biology) के द्वारा अपने पक्ष का समर्थन किया है। उनके विचार में समस्त प्राणी-जगत में प्रत्येक प्राणी अपने उच्चतम विकास के लिए प्रयत्न करता है। इसलिए व्यक्तित्व के विकास का उद्देश्य प्रकृति के नियम के अनुकूल है।

यूकेन (Euken) के मतानुसार व्यक्तित्व से हमारा तात्पर्य आध्यात्मिक व्यक्तित्व है। वह कहता है—"हमारे जीवन का मुख्य कार्य है अपने सच्चे स्वरूप का विकास करना तथा आध्यात्मिक व्यक्तित्व के परिवर्धन में उस स्वरूप को निखारना" (The chief movement of our life is to wine our own being completely and to develop spiritual individuality)

इस प्रकार जब हम कहते हैं कि शिक्षा का ध्येय व्यक्तित्व का विकास करना है तो हमारा यह तात्पर्य होता है कि हम अपने व्यक्तित्व को इतना ऊँचा उठाएँ जिससे कि हम विश्व की सर्वोच्च सत्ता के साथ एक रूप हो सकें। व्यक्तित्व के विकास की इस अवस्था को विद्वानों ने आत्म-साक्षात्कार या आत्म बोध (Self-realization) की संज्ञा दी है।

इस लक्ष्य के अनुसार जो पाठ्यक्रम होगा वह बालक की रुचियों के आधार पर होगा। किसी भी विषय को पढ़ाने का उद्देश्य व्यक्ति का विकास होगा। बालकों की रुचियों तथा क्षमताओं में अन्तर होता है, इसलिए पाठ्यक्रम का संगठन इस ढंग से करना होगा कि उसमें आवश्यकता अनुसार हेर फेर किया जा सके।

सामाजिक और व्यक्तिगत उद्देश्यों में समन्वय (Synthesis between the Social and Individual Aims of Education)—यदि ऊपरी दृष्टि से देखा जाए तो शिक्षा के इन दोनों [illegible]

जब समाज और व्यक्ति दोनों एक दूसरे के बिना नहीं रह सकते तो हमारी शिक्षा योजना इस प्रकार की होनी चाहिए कि जिस के द्वारा व्यक्ति को अपने विकास का पूर्ण अवसर प्राप्त हो तथा साथ ही साथ वह एक कुशल नागरिक बन कर समाज-कल्याण में अपना योग दान दे सके।

Q 10 Give a brief description of the aims of education throwing more light on the aim that appeals to you most.

[Agra 1950, Punjab 1954 (Suppl)]

(शिक्षा के भिन्न-भिन्न उद्देश्यों की चर्चा करते हुए लिखो कि आपके विचार अनुसार शिक्षा का क्या उद्देश्य हो सकता है)।

(पंजाब १९५४ सप्ली, आगरा १९५०)

उत्तर—[शिक्षा के सामाजिक और व्यक्तिगत उद्देश्य ऊपर दिए जा चुके हैं। बाकी के उद्देश्यों की चर्चा की जा रही है]

व्यावसायिक शिक्षा या जीविकोपार्जन का उद्देश्य (Vocational Education)—कुछ लोगों का कथन है कि शिक्षा को जीविकोपार्जन का साधन होना चाहिए। इन लोगों के विचार में जो शिक्षा हमारे आर्थिक जीवन के लिए उपयोगी नहीं है, वह व्यर्थ है। अन्न-वस्त्र हीन व्यक्ति को ऐसी शिक्षा देना जो उसकी सब से बड़ी समस्या को बिना सुलझाए छोड़ दे, एक प्रकार का मानसिक व्यभिचार है। थोथे आदर्शवाद से प्रेरित होकर, हम भले ही आर्थिक दृष्टिकोण की उपेक्षा करने लगें, पर कोई भी पक्षपात रहित व्यक्ति इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि आर्थिक समस्या, हमारी सब से बड़ी समस्या है। शिक्षा का कोई भी सम्बन्ध, यदि जीवन को अधिक सफल अथवा सुखमय बनाने से है, तो उसे जीविकोपार्जन के साधन सुलभ करने ही होंगे। शिक्षा के अन्य उद्देश्य भी रहें किन्तु उसका एक प्रमुख उद्देश्य आर्थिक कठिनाइयों का सफलतापूर्वक सामना करने की शक्ति देना अवश्य ही रहना चाहिए। महात्मा गांधी की प्रेरणा से परिचालित "वर्धा शिक्षा-योजना" (Wardha Scheme of Basic Education) में यही सिद्धान्त काम करता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के मनोवैज्ञानिकों ने

जब समाज और व्यक्ति दोनों एक दूसरे के बिना नहीं रह सकते तो हमारी शिक्षा योजना इस प्रकार की होनी चाहिए कि जिस के द्वारा व्यक्ति को अपने विकास का पूर्ण अवसर प्राप्त हो तथा साथ ही साथ वह एक कुशल नागरिक बन कर समाज-कल्याण में अपना योग दान दे सकें।

Q 10 Give a brief description of the aims of education throwing more light on the aim that appeals to you most.

(Agra 1950, Punjab 1954 (Suppl)

(शिक्षा के भिन्न-भिन्न उद्देश्यों की चर्चा करते हुए लिखो कि आपके विचार अनुसार शिक्षा का क्या उद्देश्य हो सकता है)।

(पंजाब १९५४ सप्ली, आगरा १९५०)

उत्तर—[शिक्षा के सामाजिक और व्यक्तिगत उद्देश्य ऊपर दिए जा चुके हैं। बाकी के उद्देश्यों की चर्चा की जा रही है]

व्यावसायिक शिक्षा या जीविकोपार्जन का उद्देश्य (Vocational Education)—कुछ लोगों का कथन है कि शिक्षा को जीविकोपार्जन का साधन होना चाहिए। इन लोगों के विचार में जो शिक्षा हमारे आर्थिक जीवन के लिए उपयोगी नहीं है, वह व्यर्थ है। अन्न-वस्त्र हीन व्यक्ति को ऐसी शिक्षा देना जो उसकी सब से बड़ी समस्या को बिना सुलझाए छोड़ दे, एक प्रकार का मानसिक व्यभिचार है। योथे आदर्शवाद से प्रेरित होकर, हम भले ही आर्थिक दृष्टिकोण की उपेक्षा करने लगें, पर कोई भी पक्षपात रहित व्यक्ति इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि आर्थिक समस्या, हमारी सब से बड़ी समस्या है। शिक्षा का कोई भी सम्बन्ध, यदि जीवन को अधिक सफल अथवा सुखमय बनाने से है, तो उसे जीविकोपार्जन के साधन सुलभ करने ही होंगे। शिक्षा के अन्य उद्देश्य भी रहें किन्तु उसका एक प्रमुख उद्देश्य आर्थिक कठिनाइयों का सफलतापूर्वक सामना करने की शक्ति देना अवश्य ही रहना चाहिए। महात्मा गांधी की प्रेरणा से परिचालित "वर्धा शिक्षा-योजना" (Wardha Scheme of Basic Education) में इसी सिद्धान्त काम करता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के मनोवैज्ञानिकों ने

is the function which education has discharged and the only rational mode of judging of any educational course is to judge in what degree it discharges such function) मनुष्य का जीवन पूर्णरूप से सुखी बनाने के लिए स्पेन्सर ने निम्नलिखित पाँच क्रियाओं (activities) का विधान किया है —

(क) वे क्रियाएँ जिनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध आत्म रक्षा या हमारे स्वास्थ्य से है। इन क्रियाओं में कुशलता प्राप्त करने के लिए हमें स्वास्थ्य विज्ञान, भौतिक विज्ञान, शरीर विज्ञान तथा रसायन शास्त्र आदि का अध्ययन करना होगा। इसलिए पाठ्यक्रम में इन्हें सर्वप्रथम स्थान देना होगा।

(ख) वे क्रियाएँ जो अप्रत्यक्ष रूप से जीवन स्थिर रखने (जैसे जीविकोपार्जन) में सहायक होती हैं। इन क्रियाओं में सफलता प्राप्त करने के लिए हमें समाज-विज्ञान, प्राणी-शास्त्र, गणित, भौतिक विज्ञान, आदि की सहायता लेनी होगी। पाठ्यक्रम में दूसरा स्थान इन्हीं विषयों को दिया जाएगा।

(ग) वे क्रियाएँ जिनका सम्बन्ध सन्तान उत्पत्ति और सन्तान के पालन-पोषण से है। इन क्रियाओं के सहायक विषय हैं, स्वास्थ्य-विज्ञान, मनोविज्ञान तथा नीति शास्त्र आदि जिन्हें पाठ्यक्रम में तीसरा स्थान दिया जाएगा।

(घ) वे क्रियाएँ जिनका सम्बन्ध हमारे सामाजिक तथा राजनैतिक जीवन से है। इनमें कुशलता प्राप्त करने के लिए इतिहास, अर्थशास्त्र तथा राजनीतिक विज्ञान आदि विषय सहायक सिद्ध होंगे।
पाठ्यक्रम में इनका स्थान चौथा होगा।

(च) अन्त में पाठ्यक्रम में वे क्रियाएँ आएँगी, जिनका सम्बन्ध अवकाश का समय भली-भाँति बिताने से है। इन क्रियाओं का प्रयोग केवल अवकाश के समय ही किया जायगा। ऐसी क्रियाओं में साहित्य, संगीत तथा ललित कलाओं को प्रमुख स्थान दिया जाएगा।

हम देखते हैं कि इन क्रियाओं का महत्व उत्तरोत्तर कम होता गया है। हरबर्ट स्पेन्सर ने अपने समय की शिक्षा की कड़ी आलोचना की और विज्ञान की शिक्षा पर विशे

is the function which education has discharged and the only rational mode of judging of any educational course is to judge in what degree it discharges such function) मनुष्य का जीवन पूर्णरूप से सुखी बनाने के लिए स्पेन्सर ने निम्नलिखित पाँच क्रियाओं (activities) का विधान किया है —

(क) वे क्रियाएँ जिनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध आत्म रक्षा या हमारे स्वास्थ्य से है। इन क्रियाओं में कुशलता प्राप्त करने के लिए हमें स्वास्थ्य विज्ञान, भौतिक विज्ञान, शरीर विज्ञान तथा रसायन शास्त्र आदि का अध्ययन करना होगा। इसलिए पाठ्यक्रम में इन्हें सर्वप्रथम स्थान देना होगा।

(ख) वे क्रियाएँ जो अप्रत्यक्ष रूप से जीवन स्थिर रखने (जैसे जीविकोपार्जन) में सहायक होती हैं। इन क्रियाओं में सफलता प्राप्त करने के लिए हमें समाज-विज्ञान, प्राणी-शास्त्र, गणित, भौतिक विज्ञान, आदि की सहायता लेनी होगी। पाठ्यक्रम में दूसरा स्थान इन्हीं विषयों को दिया जाएगा।

(ग) वे क्रियाएँ जिनका सम्बन्ध सन्तान उत्पत्ति और सन्तान के पालन-पोषण से है। इन क्रियाओं के सहायक विषय हैं, स्वास्थ्य-विज्ञान, मनोविज्ञान तथा नीति शास्त्र आदि जिन्हें पाठ्यक्रम में तीसरा स्थान दिया जाएगा।

(घ) वे क्रियाएँ जिनका सम्बन्ध हमारे सामाजिक तथा राजनैतिक जीवन से है। इनमें कुशलता प्राप्त करने के लिए इतिहास, अर्थशास्त्र तथा राजनीतिक विज्ञान आदि विषय सहायक सिद्ध होंगे।
पाठ्यक्रम में इनका स्थान चौथा होगा।

(च) अन्त में पाठ्यक्रम में वे क्रियाएँ आएँगी, जिनका सम्बन्ध अवकाश का समय भली-भाँति बिताने से है। इन क्रियाओं का प्रयोग केवल अवकाश के समय ही किया जायगा। ऐसी क्रियाओं में साहित्य, संगीत तथा ललित कलाओं को प्रमुख स्थान दिया जाएगा।

हम देखते हैं कि इन क्रियाओं का महत्त्व उत्तरोत्तर कम होता गया है। हरबर्ट स्पेन्सर ने अपने समय की शिक्षा की कड़ी आलोचना की और विज्ञान की शिक्षा पर विशेष रूप से बल दिया।

सर्वाङ्गीण विकास (The Harmonious Development Aim)—अनेकों विद्वानों का कथन है कि व्यक्ति का सर्वाङ्गीण विकास ही शिक्षा का ध्येय होना चाहिए। व्यक्ति के सर्वाङ्गीण विकास से उनका तात्पर्य है सन्तुलित व्यक्तित्व का निर्माण। प्रसिद्ध शिक्षा-विद् पेस्टालाजी (Pestalozzi) का कथन है कि समाज का विकास तथा उसकी उन्नति, व्यक्तिगत विकास के आधार पर ही हो सकती है और उसके लिए इस बात की आवश्यकता है कि व्यक्ति को पूर्ण विकास का अवसर मिले। व्यक्ति के पूर्ण विकास का मतलब है, उसका शारीरिक मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास। इस प्रकार के विकास में, किसी भी बात की रुकावट नहीं होनी चाहिए। शिक्षा का उद्देश्य उन शक्तियों का विकास करना है जिससे व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का निर्बाध पूर्ण विकास कर सके (Education worth the name strive after the perfection of man's powers in their completeness)। यदि व्यक्ति की शक्तियों का पूर्ण-विकास नहीं होता अथवा वह एक ही दिशा में या असन्तुलित होता है तो व्यक्तित्व अपूर्ण रह जाएगा और चरित्र का निर्माण भी नहीं हो सकेगा। इस उद्देश्य के सम्बन्ध में जो सबसे बड़ी कठिनाई है वह यह है कि व्यक्तित्व के सर्वाङ्गीण विकास से हमारा क्या तात्पर्य है, यह समझना अत्यन्त कठिन है। क्या जीविका उपार्जन, सामाजिक उपयोगिता, व्यवहार कुशलता आदि बातें सर्वाङ्गीण विकास में आती हैं। इस उद्देश्य की सीमा क्या है? हमारे पास वह कौन सा ऐसा मापदण्ड है, जिसके आधार पर हम कह सकते हैं कि किसी व्यक्ति विशेष का सर्वाङ्गीण विकास हो गया है। शिक्षा का उद्देश्य बनाने से पूर्व, हमें अनिश्चतता से मुक्त करना होगा।

नागरिकता की शिक्षा (Training for Citizenship)—शिक्षा का एक उद्देश्य यह भी माना गया है कि हम अच्छे नागरिक बनें। शिक्षा का कार्य है, छात्रों में ऐसे गुणों का पैदा करना तथा उन्हें ऐसे अनुभव प्रदान करना, जिससे कि वे वास्तविक जीवन में, समाज के एक उपयोगी सदस्य बन कर रह सकें। एक नागरिक के रूप में हमारे कुछ अधिकार और कर्त्तव्य हैं। शिक्षा हमारे अन्दर यह योग्यता प्रदान करती है जिसके आधार पर हम

सर्वाङ्गीण विकास (The Harmonious Development Aim)—अनेकों विद्वानो का कथन है कि व्यक्ति का सर्वाङ्गीण विकास ही शिक्षा का ध्येय होना चाहिए। व्यक्ति के सर्वाङ्गीण विकास से उनका तात्पर्य है सन्तुलित व्यक्तित्व का निर्माण। प्रसिद्ध शिक्षा-विद् पेस्टालाजी (Pestalozzi) का कथन है कि समाज का विकास तथा उसकी उन्नति, व्यक्तिगत विकास के आधार पर ही हो सकती है और उसके लिए इस बात की आवश्यकता है कि व्यक्ति को पूर्ण विकास का अवसर मिले। व्यक्ति के पूर्ण विकास का मतलब है, उसका शारीरिक मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास। इस प्रकार के विकास में, किसी भी बात की रुकावट नहीं होनी चाहिए। शिक्षा का उद्देश्य उन शक्तियों का विकास करना है जिससे व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का निर्माण पूर्ण विकास कर सके (Education worth the name strive after the perfection of man's powers in their completeness)। यदि व्यक्ति की शक्तियों का पूर्ण-विकास नहीं होता अथवा वह एक ही दिशा में या असन्तुलित होता है तो व्यक्तित्व अपूर्ण रह जायगा और चरित्र का निर्माण भी नहीं हो सकेगा। इस उद्देश्य के सम्बन्ध में जो सबसे बड़ी कठिनाई है वह यह है कि व्यक्तित्व के सर्वाङ्गीण विकास से हमारा क्या तात्पर्य है, यह समझना अत्यन्त कठिन है। क्या जीविका उपार्जन, सामाजिक उपयोगिता, व्यवहार कुशलता आदि बातें सर्वाङ्गीण विकास में आती हैं। इस उद्देश्य की सीमा क्या है ? हमारे पास वह कौन सा ऐसा मापदण्ड है, जिसके आधार पर हम कह सकते हैं कि किसी व्यक्ति विशेष का सर्वाङ्गीण विकास हो गया है। शिक्षा का उद्देश्य बनाने से पूर्व, इसे अनिश्चितता से मुक्त करना होगा।

नागरिकता की शिक्षा (Training for Citizenship)—शिक्षा का एक उद्देश्य यह भी माना गया है कि हम अच्छे नागरिक बनें। शिक्षा का कार्य है, छात्रों में ऐसे गुणों का पैदा करना तथा उन्हें ऐसे अनुभव प्रदान करना, जिससे कि वे वास्तविक जीवन में, समाज के एक उपयोगी सदस्य बन कर रह सकें। एक नागरिक के रूप में हमारे कुछ अधिकार और कर्तव्य हैं। शिक्षा हमारे अन्दर यह योग्यता प्रदान करती है जिसके आधार पर हम

की घोषणा की है उन की प्राप्ति तब तक नहीं हो सकती जब तक कि हमें उन का ज्ञान न होगा।

(ख) यदि हम समझते हैं कि शिक्षा का उद्देश्य है, वातावरण (environment) के साथ सन्तुलन (adjustment) बनाए रखना तो यह उद्देश्य तब तक पूर्ण नहीं होगा जब तक विद्यार्थियों को अपने वातावरण का ज्ञान नहीं होगा।

(ग) यदि हमारा लक्ष्य मानवीय प्रगति और सामाजिक मूल्यों (Values) का निर्माण करना है तो हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम भिन्न भिन्न व्यक्तियों और भिन्न-भिन्न वस्तुओं के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करें।

(घ) व्यक्तित्व के विकास और मूल्यों (Values) के उचित मूल्यांकन (appreciation) के लिए यह आवश्यक है कि हमें उत्तरोत्तर उच्च आध्यात्मिक लोकों (Spiritual Universe) का ज्ञान हो।

(च) यदि हम किसी व्यवसाय में सफल होना चाहते हैं तो भी यह अत्यन्त आवश्यक है कि हमें उस व्यवसाय का पूरा-पूरा ज्ञान हो।

(छ) शैक्षणिक प्रक्रिया के रूप में भी, ज्ञान हमारे मन का उसी प्रकार प्रशिक्षण करता है, जैसे कि भोजन शरीर का।

अतएव ज्ञान की प्राप्ति का जो महत्व है, उस की उपेक्षा नहीं की जा सकती। परन्तु दोष वहाँ उपस्थित होता है जहाँ हम ज्ञान को केवल पुस्तकीय ज्ञान अथवा बौद्धिक शिक्षा तक सीमित कर देते हैं या फिर इसे साधन न समझ कर साध्य मान बैठते हैं। ऊपर ज्ञान की जिन उपयोगिताओं का दिग्दर्शन कराया गया है, उस से यह भलीभाँति स्पष्ट हो जाएगा कि ज्ञानार्जन एक अच्छा साधन तो बन सकता है परन्तु साध्य के रूप में हम इसे नहीं स्वीकार कर सकते।

Q. 11. How far is it true to say that the main aim of education is the formation of character? Discuss the role of school in forming the character of its pupils. —*(Panjab 1956 Suppl)*

(यह कहना कहाँ तक सत्य है कि शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य चरित्र-निर्माण

की घोषणा की है उन की प्राप्ति तब तक नहीं हो सकती जब तक कि हमें उन का ज्ञान न होगा।

(ख) यदि हम समझते हैं कि शिक्षा का उद्देश्य है, वातावरण (environment) के साथ सन्तुलन (adjustment) बनाए रखना तो यह उद्देश्य तब तक पूर्ण नहीं होगा जब तक शिक्षार्थियों को अपने वातावरण का ज्ञान नहीं होगा।

(ग) यदि हमारा लक्ष्य मानवीय प्रगति और सामाजिक मूल्यों (Values) का निर्माण करना है तो हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम भिन्न भिन्न व्यक्तियों और भिन्न-भिन्न वस्तुओं के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करें।

(घ) व्यक्तित्व के विकास और मूल्यों (Values) के उचित मूल्यांकन (appreciation) के लिए यह आवश्यक है कि हमें उत्कृष्टतर उच्च आध्यात्मिक लोकों (Spiritual Universe) का ज्ञान हो।

(च) यदि हम किसी व्यवसाय में सफल होना चाहते हैं तो भी यह अत्यन्त आवश्यक है कि हमें उस व्यवसाय का पूरा-पूरा ज्ञान हो।

(छ) शैक्षणिक प्रक्रिया के रूप में भी, ज्ञान हमारे मन का उसी प्रकार प्रशिक्षण करता है, जैसे कि भोजन शरीर का।

अतएव ज्ञान की प्राप्ति का जो महत्त्व है, उस की उपेक्षा नहीं की जा सकती। परन्तु दोष वहाँ उपस्थित होता है जहाँ हम ज्ञान को केवल पुस्तकीय ज्ञान अथवा बौद्धिक शिक्षा तक सीमित कर देते हैं या फिर इसे साधन न समझ कर साध्य मान बैठते हैं। ऊपर ज्ञान की जिन उपयोगिताओं का दिग्दर्शन कराया गया है, उस से यह भलीभांति स्पष्ट हो जाएगा कि ज्ञानार्जन एक अच्छा साधन तो बन सकता है परन्तु साध्य के रूप में हम इसे नहीं स्वीकार कर सकते।

Q. 11. How far is it true to say that the main aim of education is the formation of character? Discuss the role of school in forming the character of its pupils. *—(Panjab 1956 Suppl)*

(यह कहना कहाँ तक सत्य है कि शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य चरित्र-निर्माण

प्लेटो (Plato) का यह प्रमुख सिद्धान्त था कि शिक्षा में ऐसी किसी बात का समावेश नहीं होना चाहिए जो भले कामों (Virtue) को विकसित न करे।

अध्यापकगण अपने स्वयं के उदाहरण तथा प्रेरणा के द्वारा विद्यार्थियों में सच्चरित्रता का निर्माण कर सकते हैं। इसीलिए प्राचीन भारत तथा यूनान की शिक्षा योजनाओं में चरित्र-निर्माण के उद्देश्य को प्रमुख स्थान दिया गया।

चरित्र-निर्माण का सम्बन्ध सामाजिक मूल्यों से भी है। रॉस (Ross) के मतानुसार नैतिकता का सम्बन्ध समाज से है। नैतिक जीवन, खाली स्थान (Vacuum) में नहीं विकसित हो सकता। उसका विकास तो समाज के अन्दर ही होगा। शिक्षा के इस उद्देश्य और सामाजिक उद्देश्य में कोई विरोध नहीं।

यहाँ एक बात हम ध्यान में रखनी चाहिए। हरबार्ट (Herbart) ने चरित्र शब्द का प्रयोग बड़े व्यापक अर्थ में किया है। उसका अर्थ धार्मिक ग्रन्थों में पाये जाने वाले कुछ सद्गुणों तक ही सीमित नहीं। चरित्र से उसका तात्पर्य मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन से है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मनुष्य को नैतिक आचरण करना चाहिए। नीति अथवा धर्म उसके जीवन का एक भाग मात्र ही न हो अपितु उसका समस्त जीवन धर्ममय हो जाए। प्रत्येक कार्य, तथा प्रत्येक आचरण धर्म-सम्मत होना चाहिए। हरबार्ट के कथन में काफी सीमा तक सत्यता का अंश है। इस बात से कोई इनकार नहीं कर सकता कि आज के एहिकतावादी तथा जड़वादी संसार में, जो इतना दुःख तथा अशान्ति है, उसका मूल कारण, व्यक्तियों में सच्चरित्रता का अभाव है।

पाठशाला और चरित्र निर्माण (The School and the formation of Character)—(१) जैसे कि ऊपर चर्चा की जा चुकी है चरित्र विकास समाज के अन्दर ही रह कर हो सकता है, इस लिए चरित्र विकास का अर्थ है सामाजिक विकास। बालक के नैतिक तथा सामाजिक विकास में जिन प्रवृत्तियों से सहायता ली जा सकती है, वे हैं (i) अनुकरण (Imitation) (ii) निर्देश (Suggestion) और (iii) सहानुभूति

प्लेटो (Plato) का यह प्रमुख सिद्धान्त था कि शिक्षा में ऐसी किसी बात का समावेश नहीं होना चाहिए जो भले कामों (Virtue) को विकसित न करे।

अध्यापकगण अपने स्वयं के उदाहरण तथा प्रेरणा के द्वारा विद्यार्थियों में सच्चरित्रता का निर्माण कर सकते हैं। इसीलिए प्राचीन भारत तथा यूनान की शिक्षा योजनाओं में चरित्र-निर्माण के उद्देश्य को प्रमुख स्थान दिया गया।

चरित्र-निर्माण का सम्बन्ध सामाजिक मूल्यों से भी है। रॉस (Ross) के मतानुसार नैतिकता का सम्बन्ध समाज में है। नैतिक जीवन, खाली स्थान (Vacuum) में नहीं विकसित हो सकता। उसका विकास तो समाज के अन्दर ही होगा। शिक्षा के इस उद्देश्य और सामाजिक उद्देश्य में कोई विरोध नहीं।

यहाँ एक बात हम ध्यान में रखनी चाहिए। हरबार्ट (Herbart) ने चरित्र शब्द का प्रयोग बड़े व्यापक अर्थ में किया है। उसका अर्थ धार्मिक ग्रन्थों में पाये जाने वाले कुछ सद्गुणों तक ही सीमित नहीं। चरित्र से उसका तात्पर्य मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन से है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मनुष्य को नैतिक आचरण करना चाहिए। नीति अथवा धर्म उसके जीवन का एक भाग मात्र ही न हो अपितु उसका समस्त जीवन धर्ममय हो जाए। प्रत्येक कार्य, तथा प्रत्येक आचरण धर्म-सम्मत होना चाहिए। हरबार्ट के कथन में काफी सीमा तक सत्यता का अंश है। इस बात से कोई इनकार नहीं कर सकता कि आज के एहिकतावादी तथा जड़वादी संसार में, जो इतना दुःख तथा अशान्ति है, उसका मूल कारण, व्यक्तियों में सच्चरित्रता का अभाव है।

पाठशाला और चरित्र निर्माण (The School and the formation of Character)—(१) जैसे कि ऊपर चर्चा की जा चुकी है चरित्र विकास समाज के अन्दर ही रह कर हो सकता है, इस लिए चरित्र विकास का अर्थ है सामाजिक विकास। बालक के नैतिक तथा सामाजिक विकास में जिन प्रवृत्तियों से सहायता ली जा सकती है, वे हैं (i) अनुकरण (Imitation) (ii) निर्देश (Suggestion) और (iii) सहानुभूति

उत्तर—रस्क (Rusk) ने एक स्थान पर कहा है कि शिक्षा के उद्देश्य का सम्बन्ध हमारे जीवन के उद्देश्य के साथ है। दर्शन (Philosophy) द्वारा हम बात का निश्चय होता है कि जीवन का उद्देश्य क्या होना चाहिए और शिक्षा द्वारा, उस उद्देश्य को पूरा करने के लिए अनेकों साधनों का प्रयोग किया जाता है। प्रत्येक दशा में किसी न किसी उद्देश्य का होना आवश्यक है। जब तक हमारे सामने कोई उद्देश्य नहीं रहेगा, जिस तक हमें पहुँचना है, तब तक हमारी सभी क्रियाएँ (activities) प्रयोजनहीन (Purposeless) रहेंगी। शिक्षा एक योजनाबद्ध (Planned) क्रिया है, अतः इसके लिए कोई न कोई उद्देश्य होना ही चाहिए। उद्देश्य में ही वह शक्ति है जो किसी क्रिया का संचालन करे। उद्देश्यों के बिना शिक्षा की क्रिया किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाएगी। उसके लिए यह जानना कठिन हो जाएगा कि कौन से मार्ग का अवलम्बन करना चाहिए। किसी विशेष समय शिक्षा का उद्देश्य क्या होगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि उस समय हमारा जीवन के प्रति क्या दृष्टिकोण होगा, दूसरे शब्दों में हम किस जीवन दर्शन को मानते होंगे। यह बात निम्नलिखित कुछ उदाहरणों द्वारा स्पष्ट हो जाएगी।

(१) स्पार्टा (Sparta) की शिक्षा—प्राचीन स्पार्टा में, लोगों के सामने जो मुख्य आदर्श था, वह यह कि जीवन एक संघर्ष है। स्पार्टा के अधिकारी, प्रेम की बजाए, बल प्रयोग द्वारा शासन करते थे। उनका उद्देश्य था योद्धाओं का निर्माण करना। साहित्य और व्यापार में उनकी कोई रुचि नहीं थी। यह स्वाभाविक भी था क्योंकि आए दिन स्पार्टा पर शत्रुओं का आक्रमण होता रहता था। इसलिए वहाँ की शिक्षा का उद्देश्य था इस प्रकार के नव युवक तैयार करना जो युद्ध कला में निपुण हों। कमजोर बच्चों को पहाड़ पर से लुढ़का कर मार दिया जाता था। खेल ऐसे होते थे जिनमें बालकों का शरीर मजबूत बने जैसे—दौड़ना, कूदना, गोला इत्यादि फेंकना, कुश्ती लड़ना, मुक्के बाजी (Boxing)।

उनको जो नैतिक शिक्षा दी जाती थी, उसमें आज्ञा पालन और साहस के कार्यों पर अधिक बल दिया जाता था। चोरी करना साहस का कार्य

उत्तर—रस्क (Rusk) ने एक स्थान पर कहा है कि शिक्षा के [उद्देश्]य का सम्बन्ध हमारे जीवन के उद्देश्य के साथ है। दर्शन (Phi[los]ophy) द्वारा इस बात का निश्चय होना है कि जीवन का उद्देश्य क्या [हो]ना चाहिए और शिक्षा द्वारा, उस उद्देश्य को पूरा करने के लिए अनेकों [सा]धनों का प्रयोग किया जाता है। प्रत्येक दशा में किसी न किसी उद्देश्य का [हो]ना आवश्यक है। जब तक हमारे सामने कोई उद्देश्य नहीं रहेगा, जिस तक [हम] पहुँचना है, तब तक हमारी सभी क्रियाएँ (activities) प्रयोजनहीन (Purposeless) रहेंगी। शिक्षा एक योजनाबद्ध (Planned) क्रिया [है अ]तः, इसके लिए कोई न कोई उद्देश्य होना ही चाहिए। उद्देश्य में ही यह [शक्]ति है जो किसी क्रिया का संचालन करे। उद्देश्यों के बिना शिक्षा की क्रिया [क]र्त्तव्यविमूढ़ हो जाएगी। उसके लिए यह जानना कठिन हो जाएगा कि [कि]न से मार्ग का अवलम्बन करना चाहिए। किसी विशेष समय शिक्षा का [उद्दे]श्य क्या होगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि उस समय हमारा [जी]वन के प्रति क्या दृष्टिकोण होगा, दूसरे शब्दों में हम किस जीवन दर्शन को [मा]नते होंगे। यह बात निम्नलिखित कुछ उदाहरणों द्वारा स्पष्ट हो जाएगी।

(१) स्पार्टा (Sparta) की शिक्षा—प्राचीन स्पार्टा में, लोगों के [सा]मने जो मुख्य आदर्श था, वह यह कि जीवन एक संघर्ष है। स्पार्टा के [अ]धिकारी, प्रेम की बजाए, बल प्रयोग द्वारा शासन करते थे। उनका उद्देश्य [था] योद्धाओं का निर्माण करना। साहित्य और व्यापार में उनकी कोई रुचि [न]हीं थी। यह स्वाभाविक भी था क्योंकि आए दिन स्पार्टा पर शत्रुओं का [आ]क्रमण होता रहता था। इसलिए वहाँ की शिक्षा का उद्देश्य था इस प्रकार [के] नव युवक तैयार करना जो युद्ध कला में निपुण हों। कमजोर बच्चों को [प]हाड़ पर से लुढ़का कर मार दिया जाता था। खेल ऐसे होते थे जिनमें [बा]लकों का शरीर मजबूत बने जैसे—दौड़ना, कूदना, गोला इत्यादि फेंकना, [कु]श्ती लड़ना, मुक्के बाजी (Boxing)।

उनको जो नैतिक शिक्षा दी जाती थी, उसमें आज्ञा पालन और साहस [के] कार्यों पर अधिक बल दिया जाता था। चोरी करना साहस का कार्य

(२) व्यक्ति पर तीन प्रमुख ऋण हैं (i) देव ऋण—इसके लिए यज्ञों का विधान किया गया है। (ii) ऋषि ऋण—इसके लिए ज्ञान की प्राप्ति के और ऋषियों के ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिए। (iii) पितृ-ऋण—इसके लिए उत्तम सन्तान की उत्पत्ति तथा उनकी उचित शिक्षा-दीक्षा का विधान है।

(३) वर्ण-व्यवस्था का विधान—इसके आधार पर ब्राह्मणों का कार्य था, पढ़ना, पढ़ाना, दान देना, दान लेना। क्षत्रियों का काम था समाज की रक्षा करना। वैश्यों का कार्य था व्यापार द्वारा देश की धन दौलत को बढ़ाना और शूद्रों का कार्य था, ऊपर के तीन वर्णों की सेवा करना।

शिक्षा के उद्देश्य—(१) जीवन का चरम लक्ष्य या परम सत्य की प्राप्ति। शिक्षा की योजना इस प्रकार बनाई गई थी कि व्यक्ति इस चरम लक्ष्य-परम सत्य की प्राप्ति, की ओर बढ़ सके।

(२) हिन्दू इस संसार को माया समझते थे और शिक्षा का कार्य था उस परलोक प्राप्ति में सहायता प्रदान करना जहाँ सुख-समृद्धि का साम्राज्य है।

(३) परन्तु इस लोक की भी उपेक्षा नहीं की गई। शिक्षा पद्धति में व्यवसायात्मक शिक्षा का भी आयोजन था जिससे कि व्यक्ति सामाजिक रूप से कुशल बन सके। वर्ण व्यवस्था का आधार भी यही था।

(४) चरित्र-निर्माण, शिक्षा का प्रमुख ध्येय था। चरित्र को ज्ञान प्राप्ति से भी ऊँचा स्थान दिया गया। अध्यापकों का चरित्र बहुत ऊँचा हुआ करता था।

(५) व्यक्तित्व का विकास, शिक्षा का प्रमुख ध्येय था। विद्यार्थियों में, आत्मविश्वास, आत्म-त्याग, आत्माभिमान आदि के भावों द्वारा व्यक्तित्व का विकास किया जाता था।

(६) संस्कृति के संरक्षण और उसके प्रचार की उपेक्षा नहीं गई। समाज का एक वर्ग, सदा, इस बात के लिए तैयार रहता था। वैदिक साहित्य के अध्ययन पर इसीलिये अधिक जोर दिया गया।

(२) व्यक्ति पर तीन प्रमुख ऋण हैं (i) देव ऋण—इसके लिए यज्ञो का विधान किया गया है। (ii) ऋषि ऋण—इसके लिए ज्ञान की प्राप्ति के और ऋषियों के ग्रन्थो का अध्ययन करना चाहिए। (iii) पितृ-ऋण—इसके लिए उत्तम सन्तान की उत्पत्ति तथा उनकी उचित शिक्षा-दीक्षा का विधान है।

(३) वर्ण-व्यवस्था का विधान—इसके आधार पर ब्राह्मणों का कार्य था, पढ़ना, पढ़ाना, दान देना, दान लेना। क्षत्रियो का काम था समाज की रक्षा करना। वैश्यो का कार्य था व्यापार द्वारा देश की धन दौलत को बढाना और शूद्रो का कार्य था, ऊपर के तीन वर्णो की सेवा करना।

शिक्षा के उद्देश्य—(१) जीवन का चरम लक्ष्य या परम सत्य की प्राप्ति। शिक्षा की योजना इस प्रकार बनाई गई थी कि व्यक्ति इस चरम लक्ष्य-परम सत्य की प्राप्ति, की ओर बढ सके।

(२) हिन्दू इस ससार को माया समझते थे और शिक्षा का कार्य था उस परलोक प्राप्ति मे सहायता प्रदान करना जहाँ सुख-समृद्धि का साम्राज्य है।

(३) परन्तु इस लोक की भी उपेक्षा नही की गई। शिक्षा पद्धति मे व्यवसायात्मक शिक्षा का भी आयोजन था जिससे कि व्यक्ति सामाजिक रूप से कुशल बन सके। वर्ण व्यवस्था का आधार भी यही था।

(४) चरित्र-निर्माण, शिक्षा का प्रमुख ध्येय था। चरित्र को ज्ञान प्राप्ति से भी ऊँचा स्थान दिया गया। अध्यापकों का चरित्र बहुत ऊँचा हुआ करता था।

(५) व्यक्तित्व का विकास, शिक्षा का प्रमुख ध्येय था। विद्यार्थियो मे, आत्मविश्वास, आत्म-त्याग, आत्माभिमान आदि के भावों द्वारा व्यक्तित्व का विकास किया जाता था।

(६) संस्कृति के सरक्षण और उसके प्रचार की उपेक्षा नहीं गई। समाज का एक वर्ग, सदा, इस बात के लिए तैयार रहता था। वैदिक [illegible] अध्ययन पर इसीलिये अधिक जोर दिया गया।

(एक तन्त्रवादी राज्य और प्रजातन्त्रवादी राज्य में शिक्षा के जो उद्देश्य हो सकते हैं, उनकी तुलना करो। (पंजाब १९५१)

उत्तर—एक तन्त्रवादी राज्य में, शिक्षा के उद्देश्य क्या हो सकते हैं, इसका विवेचन करने से पूर्व, इस बात का स्पष्टीकरण किया जाएगा कि एकतन्त्रवाद में हमारा क्या तात्पर्य है ?

एकतन्त्रवाद (Totalitarianism) क्या है?—एकतन्त्रवाद को हम एक प्रकार का उग्रवादी (extreme) वैज्ञानिक समाजवाद कह सकते हैं। इसका एक अपना अलग समाज होता है, जहाँ एक विशेष प्रकार की राजनैतिक और आर्थिक प्रणाली तथा एक विशेष प्रकार की शिक्षा प्रणाली होती है। इसके सिद्धान्तों का सारांश नीचे दिया जाता है—

(क) राज्य (State) ही समाज का प्रतिनिधि है। उसका महत्व, व्यक्ति से कहीं अधिक है। राज्य का निर्माण लोगों की भलाई के लिए हुआ है। समाज के लिए उपयोगी वस्तु ही नैतिक कहलाएगी। सब व्यक्ति एक समान हैं इसलिए समाज में भिन्न-भिन्न वर्गों की कोई आवश्यकता नहीं। मनुष्य का कोई भी कार्य सब की भलाई के लिए हो। लोगों में मुकाबले (Competition) की बजाय सहयोग की भावना होनी चाहिए। किसी की कोई व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं है। सब भौतिक सम्पत्ति समाज की है।

(ख) एकतन्त्रवाद में व्यक्ति एक अत्यन्त क्षुद्र जीव है। उसकी अपनी कोई स्वतन्त्र इच्छा (Free will) नहीं। राज्य ही सामूहिक इच्छा का प्रतीक है और व्यक्ति को उसके अधीन रहना चाहिए। किसी के कोई व्यक्तिगत अधिकार नहीं। व्यक्ति को राज्य के प्रति पूरा वफादार (loyal) रहना चाहिए। सभी बातों में राज्य का अधिकार सर्वोपरि है। इसलिए राज्य ही इस बात का निश्चय करेगा कि शिक्षा के उद्देश्य क्या होने चाहिए।

एकतन्त्रवादी राज्य और शिक्षा

(१) व्यापक और अनिवार्य शिक्षा (Universal and Compulsory Education)—एकतन्त्रवादी राज्य में शिक्षा व्यापक तथा अनिवार्य

(एक तन्त्रवादी राज्य और प्रजातन्त्रवादी राज्य में शिक्षा के क्या उद्देश्य हो सकते हैं, उनकी तुलना करो। (पंजाब १९५१)

उत्तर—एक तन्त्रवादी राज्य में, शिक्षा के उद्देश्य क्या हो सकते हैं, इसका विवेचन करने से पूर्व, इस बात का स्पष्टीकरण किया जाएगा कि एकतन्त्रवाद में हमारा क्या तात्पर्य है?

एकतन्त्रवाद (Totalitarianism) क्या है?—एकतन्त्रवाद को हम एक प्रकार का उग्रवादी (extreme) वैज्ञानिक समाजवाद कह सकते हैं। इसका एक अपना अलग समाज होता है, जहाँ एक विशेष प्रकार की राजनैतिक और आर्थिक प्रणाली तथा एक विशेष प्रकार की शिक्षा प्रणाली होती है। इसके सिद्धान्तों का सारांश नीचे दिया जाता है—

(क) राज्य (state) ही समाज का प्रतिनिधि है। उसका महत्व, व्यक्ति से कहीं अधिक है। राज्य का निर्माण लोगों की भलाई के लिए हुआ है। समाज के लिए उपयोगी वस्तु ही नैतिक कहलाएगी। सब व्यक्ति एक समान हैं इसलिए समाज में भिन्न-भिन्न वर्गों की कोई आवश्यकता नहीं। मनुष्य का कोई भी कार्य सब की भलाई के लिए हो। लोगों में मुकाबले (Competition) की बजाय सहयोग की भावना होनी चाहिए। किसी की कोई व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं है। सब भौतिक सम्पत्ति समाज की है।

(ख) एकतन्त्रवाद में व्यक्ति एक अत्यन्त क्षुद्र जीव है। उसकी अपनी कोई स्वतन्त्र इच्छा (Free will) नहीं। राज्य ही सामूहिक इच्छा का प्रतीक है और व्यक्ति को उसके अधीन रहना चाहिए। किसी के कोई व्यक्तिगत अधिकार नहीं। व्यक्ति को राज्य के प्रति पूरा वफादार (loyal) रहना चाहिए। सभी बातों में राज्य का अधिकार सर्वोपरि है। इसलिए राज्य ही इस बात का निश्चय करेगा कि शिक्षा के उद्देश्य क्या होने चाहिए।

एकतन्त्रवादी राज्य और शिक्षा

(१) व्यापक और अनिवार्य शिक्षा (Universal and Compulsory Education)—एकतन्त्रवादी राज्य में शिक्षा व्यापक तथा अनिवार्य है

(ii) व्यापक, अनिवार्य तथा नि:शुल्क शिक्षा द्वारा समाज मे एकता के भाव उत्पन्न होते हैं, एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अधिक अच्छी तरह समझने लगता है।

(iii) शिक्षा और अन्य सामाजिक संस्थाओं, जैसे उद्योग आदि मे सहयोग लाभप्रद है। इससे शिक्षा का सम्बन्ध जीवन से हो जाता है और उसमे वास्तविकता और उपयोगिता आ जाती है।

(iv) शिक्षा का सम्बन्ध केवल मानसिक श्रम से ही नहीं, अपितु शारीरिक श्रम से भी है। ऐसा दृष्टिकोण अपनाने से बालक के सर्वाङ्गीण विकास मे सहायता मिलती है।

एकतन्त्रवादी शिक्षा की त्रुटियाँ

(i) धार्मिक तथा आध्यात्मिक मूल्यो (values) का अभाव होने से, व्यक्ति की शिक्षा अधूरी रहती है।

(ii) एकता और समानता के नाम पर व्यक्तित्व का हनन किया जाता है।

(iii) राज्य द्वारा केवल एक ही विचारधारा का प्रचार करने से, व्यक्ति तथा समाज का दृष्टिकोण संकुचित हो जाता है।

प्रजातन्त्रवाद (Democracy) क्या है? प्रजातन्त्रवाद, राजनैतिक अर्थ मे, एक ऐसा शासन है जो जनता की भलाई के लिए हो, और जिसे जनता स्वय चुने। इतना होने पर भी हम समाज मे, धर्म, जाति तथा धन के आधार पर शोषण की प्रवृत्ति पाते हैं। प्रजातन्त्रवाद का वास्तविक आदर्श है एक सुखी और समृद्धिशाली जीवन व्यतीत करने के लिए सब को समान अवसर प्रदान करना। इसके मुख्य सिद्धान्त नीचे दिए जारहे हैं :—

(क) व्यक्ति की स्वतन्त्रता (Freedom of Individual)— व्यक्ति के विकास में किसी प्रकार की बाधा नहीं उपस्थित की जाती।

(ख) सबको समान अवसर (Equality of Oppartunity)— प्रजातन्त्रवाद में सब व्यक्ति एक समान हैं। रग-रूप, जाति आदि के आधार

(ii) व्यापक, अनिवार्य तथा नि:शुल्क शिक्षा द्वारा समाज में एकता के भाव उत्पन्न होते हैं, एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अधिक अच्छी तरह समझने लगता है।

(iii) शिक्षा और अन्य सामाजिक संस्थाओं, जैसे उद्योग आदि में सहयोग लाभप्रद है। इसमें शिक्षा का सम्बन्ध जीवन से हो जाता है और उसमें वास्तविकता और उपयोगिता आ जाती है।

(iv) शिक्षा का सम्बन्ध केवल मानसिक श्रम से ही नहीं, अपितु शारीरिक श्रम से भी है। ऐसा दृष्टिकोण अपनाने से बालक के सर्वाङ्गीण विकास में सहायता मिलती है।

एकतन्त्रवादी शिक्षा की त्रुटियाँ

(i) धार्मिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों (values) का अभाव होने से, व्यक्ति की शिक्षा अधूरी रहती है।

(ii) एकता और समानता के नाम पर व्यक्तित्व का हनन किया जाता है।

(iii) राज्य द्वारा केवल एक ही विचारधारा का प्रचार करने से, व्यक्ति तथा समाज का दृष्टिकोण संकुचित हो जाता है।

प्रजातन्त्रवाद (Democracy) क्या है? प्रजातन्त्रवाद, राजनैतिक अर्थ में, एक ऐसा शासन है जो जनता की भलाई के लिए हो, और जिसे जनता स्वयं चुने। इतना होने पर भी हम समाज में, धर्म, जाति तथा धन के आधार पर शोषण की प्रवृत्ति पाते हैं। प्रजातन्त्रवाद का वास्तविक आदर्श है एक सुखी और समृद्धिशाली जीवन व्यतीत करने के लिए सब को समान अवसर प्रदान करना। इसके मुख्य सिद्धान्त नीचे दिए जा रहे हैं :—

(क) व्यक्ति की स्वतन्त्रता (Freedom of Individual)—व्यक्ति के विकास में किसी प्रकार की बाधा नहीं उपस्थित की जाती।

(ख) सबको समान अवसर (Equality of Oppartunity)—प्रजातन्त्रवाद में सब व्यक्ति एक समान हैं। रंग-रूप, जाति आदि के आधार

प्रजातन्त्रवादी शिक्षा की विशेषताएँ—

(१) शिक्षा का विकास करने के लिए सभी व्यक्ति स्वतन्त्र हैं। उन पर किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं।

(२) व्यक्तित्व का हनन नहीं किया जाता। सभी व्यक्तियों को विकास के समान अवसर प्राप्त होते हैं।

(३) शिक्षा द्वारा किसी विशेष विचार धारा का प्रचार नहीं किया जाता।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रजातन्त्रवादी आदर्श, एकतन्त्रवाद के दोषों को दूर कर, जीवन को सच्चे अर्थों में समृद्धिशाली बनाते हैं।

———

प्रजातन्त्रवादी शिक्षा की विशेषताएँ—

(१) शिक्षा का विकास करने के लिए सभी व्यक्ति स्वतन्त्र हैं। उन पर किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं।

(२) व्यक्तित्व का हनन नहीं किया जाता। सभी व्यक्तियों को विकास के समान अवसर प्राप्त होते हैं।

(३) शिक्षा द्वारा किसी विशेष विचार धारा का प्रचार नहीं किया जाता।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रजातन्त्रवादी आदर्श, एकतन्त्रवाद के दोषों को दूर कर, जीवन को सच्चे अर्थों में समृद्धिशाली बनाते हैं।

के वास्तविक तथ्यों से है। एक ऐसे विषय द्वारा, जिसे दुरूह और शुष्क समझा जाता है, हम दैनिक जीवन की वास्तविक समस्याओं का हल किस प्रकार कर सकते हैं ? इसको समझने के लिए यह जानना आवश्यक होगा कि दर्शन और शिक्षा से हमारा क्या तात्पर्य है ?

दर्शन क्या चीज है ?—प्लेटो (Plato) ने अपनी पुस्तक "रिपब्लिक" में लिखा है कि—"जो व्यक्ति ज्ञान प्राप्ति और नई बातों को जानने में रुचि प्रकट करता है और जो कभी सन्तुष्ट नहीं होता उसे दार्शनिक कहा जाएगा" (He who has a taste for every sort of Knowledge and who is curious to learn and is never satisfied may he justly termed a philosopher) ऐसे व्यक्ति के ज्ञान की प्यास कभी नहीं बुझती और वह "ज्ञान के केवल एक भाग का प्रेमी न होकर, उसके पूर्ण रूप का प्रेमी होता है" (a lover, not of a part of wisdom but of a whole)।

यह पूछने पर कि सच्चा दार्शनिक कौन है, सुकरात (Socrates) ने उत्तर दिया—"सच्चे दार्शनिक वे हैं जो सत्य ज्ञान के प्रेमी हैं। यह सत्य ज्ञान उन्हें उस चिरन्तन प्रकृति का दर्शन कराता है जो उत्पत्ति और विकृति से परिवर्तित नहीं होती।" (True philosophers are those who are lovers of the vision of truth which shows them the eternal nature not varying from generation and corruption) अतएव सत्य की खोज करना ही दर्शन शास्त्र का विषय है। "मनुष्य जीवन का आदि और अन्त क्या है ?" "सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र आदि का उद्गम स्थान कौन सा है ?" "क्या मानव जीवन और प्रकृति से परे भी कोई-कोई जीवन या लोक है ?" इत्यादि बातों की खोज द्वारा, दर्शन शास्त्र, उस चिरन्तन सत्य का उद्घाटन करना चाहता है। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रूप में सत्य की खोज कर रहा है। इसलिए तो शॉपनहॉवर (Schopenhauer) ने कहा है कि "संसार का प्रत्येक मनुष्य जन्मजात दार्शनिक है।" (Every man is a born metaphysician) सत्य की खोज करते-करते हम जो वाद-विवाद करेंगे, हम जिन परिणामों पर पहुँचेंगे, वे सभी दर्शन के क्षेत्र में आयेंगे।

के वास्तविक तथ्यों से है। एक ऐसे विषय द्वारा, जिसे दुरूह और शुष्क समझा जाता है, हम दैनिक जीवन की वास्तविक समस्याओं का हल किस प्रकार कर सकते हैं ? इसको समझने के लिए यह जानना आवश्यक होगा कि दर्शन और शिक्षा से हमारा क्या तात्पर्य है ?

दर्शन क्या चीज है ?—प्लेटो (Plato) ने अपनी पुस्तक "रिपब्लिक" मे लिखा है कि—"जो व्यक्ति ज्ञान प्राप्ति और नई बातो को जानने मे रुचि प्रकट करता है और जो कभी सन्तुष्ट नही होता उसे दार्शनिक कहा जाएगा" (He who has a taste for every sort of Knowledge and who is curious to learn and is never satisfied may he justly termed a philosopher) ऐसे व्यक्ति के ज्ञान की प्यास कभी नही बुझती और वह "ज्ञान के केवल एक भाग का प्रेमी न होकर, उसके पूर्ण रूप का प्रेमी होता है" (a lover, not of a part of wisdom but of a whole)।

यह पूछने पर कि सच्चा दार्शनिक कौन है, सुकरात (Socrates) ने उत्तर दिया—"सच्चे दार्शनिक वे हैं जो सत्य ज्ञान के प्रेमी हैं। यह सत्य ज्ञान उन्हें उस चिरन्तन प्रकृति का दर्शन कराता है जो उत्पत्ति और विकृति मे परिवर्तित नहीं होती।" (True philosophers are those who are lovers of the vision of truth which shows them the eternal nature not varying from generation and corruption) अतएव सत्य की खोज करना ही दर्शन शास्त्र का विषय है। "मनुष्य जीवन का आदि और अन्त क्या है ?" "सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र आदि का उद्‌गम स्थान कौन सा है ?" "क्या मानव जीवन और प्रकृति मे परे भी कोई-कोई जीवन या लोक है ?" इत्यादि बातों की खोज द्वारा, दर्शन शास्त्र, उस चिरन्तन सत्य का उद्‌घाटन करना चाहता है। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रूप मे सत्य की खोज कर रहा है। इसलिए तो शॉपनहॉवर (Schopenhauer) ने कहा है कि "संसार का प्रत्येक मनुष्य जन्मजात दार्शनिक है।" (Every man is a born metaphysictian) सत्य की खोज करते-करते हम जो वाद-विवाद करेंगे, हम जिन परिणामो पर पहुँचेगे, वे सभी दर्शन के क्षेत्र मे आयेंगे।

देखना। इसके पश्चात् शिक्षा (व्यवहारिक पक्ष) उन लक्ष्यों तथा विचारों का प्रत्यक्ष सफल अथवा असफल रूप प्रस्तुत करती है।

दार्शनिक का कार्य है – (i) विचार करना (ii) विश्लेषण करना विश्लेषण के आधार पर वह सिद्धान्तों का निर्माण करता है। जब सैद्धान्तिकता व्यवहारिकता में बदल जाती है, तब दर्शन शिक्षा को जन्म देता है।

इस में एक और बात सामने आती है। वह यह कि सभी शिक्षण-पद्धतियाँ निजी विचारों के अनुसार भिन्न-भिन्न होती हैं। इतिहास के अध्ययन से हमें पता चलता है कि आज तक शिक्षा के क्षेत्र में जो परिवर्तन देखने में आए हैं, वे केवल विचारधारा के कथित परिवर्तन के ही कारण। मनुष्य स्वभाव से ही अपने विचारों को लिखित या भाषित रूप में फैलाना चाहता है, ताकि दूसरे उससे प्रभावित हो सकें।

रॉस (Ross) के मतानुसार "यदि इस बात के पक्ष में और युक्ति की आवश्यकता हो कि शिक्षा दर्शन पर आधारित है तो यह तथ्य सामने रखा जा सकता है कि महान दार्शनिक, महान शिक्षा शास्त्री भी हुए हैं।" (If further argument is needed to establish the fundamental dependence of education on ph losophy, it m iv be found in the fact that, on the whole, the great philosophers have been the great educat onists) सुकरात (Socrates) अपने विचारों का अध्यापन सड़क के किनारे कहीं भी खड़ा हो कर करता था। उसकी विधि थी प्रश्न और प्रति प्रश्न करना। उसका शिष्य प्लेटो (Plato) अपने सिद्धान्तों का प्रचार गुरु के वार्तालापों के रूप में लिखित साहित्य प्रस्तुत करके करता है। उसके सांकेतिक शिक्षा लक्ष्य और विधियों में एक नवीनता थी। प्राचीन काल में भारत में सभी अरण्यक-शिक्षक (गुरु) पहले दार्शनिक थे। वेद, वेदांग, उपनिषद्, आरण्यक, ब्राह्मणग्रन्थ, पुराण आदि की रचना करने वाले सभी ऋषि मुनि पहले दार्शनिक थे और फिर निजी सिद्धान्त और निष्कर्षों के अनुसार शिक्षा प्रदान करने वाले भी। इसी प्रकार रूसो, (Rousseau) फ्रोबेल, (Froebel) स्पेन्सर (Spencer) डिवी (Dewey) महात्मा

देखना। इसके पश्चात् शिक्षा (व्यवहारिक पक्ष) उन लक्ष्यों तथा विचारों का प्रत्यक्ष सफल अथवा असफल रूप प्रस्तुत करती है।

दार्शनिक का कार्य है – (1) विचार करना (11) विश्लेषण करना विश्लेषण के आधार पर वह सिद्धान्तो का निर्माण करता है। जब सैद्धान्तिकता व्यवहारिकता मे बदल जाती है, तब दर्शन शिक्षा को जन्म देता है।

इस मे एक और बात सामने आती है। वह यह कि सभी शिक्षण-पद्धतियाँ निजी विचारो के अनुसार भिन्न-भिन्न होती हैं। इतिहास के अध्ययन मे हमें पता चलता है कि आज तक शिक्षा के क्षेत्र मे जो परिवर्तन देखने मे आए हैं, वे केवल विचारधारा के कथित परिवर्तन के ही कारण। मनुष्य स्वभाव से ही अपने विचारो को लिखित या भाषित रूप मे फैलाना चाहता है ताकि दूसरे उससे प्रभावित हो सकें।

रॉस (Ross) के मतानुसार "यदि इस बात के पक्ष मे और युक्ति की आवश्यकता हो कि शिक्षा दर्शन पर आधारित है तो यह तथ्य सामने रखा जा सकता है कि महान दार्शनिक, महान शिक्षा शास्त्री भी हुए हैं।" (If further argument is needed to establish the fundamental dependence of education on ph losophy, it m iy be found in the fact that, on the whole, the great philosophers have been the great educati onists) सुकरात (Socrates) अपने विचारो का अध्यापन सड़क के किनारे कहीं भी खड़ा हो कर करता था। उसकी विधि थी प्रश्न और प्रति प्रश्न करना। उसका शिष्य प्लेटो (Plato) अपने सिद्धान्तों का प्रचार गुरु के वार्तालापो के रूप में लिखित साहित्य प्रस्तुत करके करता है। उसके सांकेतिक शिक्षा लक्ष्य और विधियो मे एक नवीनता थी। प्राचीन काल मे भारत मे सभी अरण्यक-शिक्षक (गुरु) पहले दार्शनिक थे। वेद, वेदांग, उपनिषद्, आरण्यक, ब्राह्मण-ग्रन्थ, पुराण आदि की रचना करने वाले सभी ऋषि मुनि पहले दार्शनिक थे और फिर निजी सिद्धान्त और निष्कर्षों के अनुसार शिक्षा प्रदान करने वाले भी। इसी प्रकार रूसो, (Rousseau) फ्रोबेल, (Froebel) स्पेन्सर (Spencer) डिवी (Dewey) महात्मा

(व्यवहारवादी शिक्षा दर्शन का आलोचनात्मक विवेचन कीजिए।)

[पंजाब १९४९, १९५६, १९५७ सप्ली०]

उत्तर—व्यवहारवाद को हम पश्चिमी देशों में बढ़ रही भौतिकवादी वृत्ति का परिणाम कह सकते हैं। यह विशेष रूप से अमेरिका का जीवन दर्श। यूरोप की औद्योगिक क्रान्ति (Industrial revolution) का प्रभा अमेरिका पर भी हुआ। १९ वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक वहाँ भौतिकवाद विचारधारा इतना घर कर चुकी थी कि नैतिक आदर्श अथवा आध्यात्मि विचारों का कोई मूल्य नहीं रह गया था। इनके सामने क्रिया की एक ह कसौटी थी जिसे हम "परिणाम" कह सकते है। परिणाम सन्तोषजनक त क्रिया उचित, अन्यथा अनुचित। केवल कोरे सिद्धान्तों को सामने रखना, इ वे कायरता समझने लगे थे। उनका लक्ष्य व्यवहारिकता थी, जिससे कु ठोस और भौतिक परिणाम उनके हाथ लगे। सात्विक अनुभव या मानसि भावुकता से वे दूर भागते थे। पाँचों इन्द्रियों के अनुभव के आधार पर। वे किसी आदर्श या सिद्धान्त की सत्यता अथवा असत्यता की परख करते थे चारों ओर उपयोगिता और प्रयोजन का ही शोर मच रहा था। चार्ल्स पि (Charles Pears) पहला व्यक्ति था जिसने इस विचार-धारा प्रैगमैटिज्म (Pragmatism) का नाम दिया। विलियम जेम्स (Willia James) ने इसे लोकप्रिय ... और अन्त में जॉन डिवी (Jo Dewey) के ... के क्षेत्र में उतारा

(व्यवहारवादी शिक्षा दर्शन का आलोचनात्मक विवेचन कीजिए।)

[पंजाब १६४६, १६५६, १६५७ सप्ली०]

उत्तर—व्यवहारवाद को हम पश्चिमी देशों में बढ़ रही भौतिकवादी प्रवृत्ति का परिणाम कह सकते हैं। यह विशेष रूप से अमेरिका का जीवन दर्शन है। यूरोप की औद्योगिक क्रान्ति (Industrial revolution) का प्रभाव अमेरिका पर भी हुआ। १६ वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक वहाँ भौतिकवादी विचारधारा इतना घर कर चुकी थी कि नैतिक आदर्शों अथवा आध्यात्मिक विचारों का कोई मूल्य नहीं रह गया था। इनके सामने क्रिया की एक ही कसौटी थी जिसे हम "परिणाम" कह सकते हैं। परिणाम सन्तोषजनक तो क्रिया उचित, अन्यथा अनुचित। केवल कोरे सिद्धान्तों को सामने रखना, इसे वे कायरता समझने लगे थे। उनका लक्ष्य व्यवहारिकता थी, जिससे कुछ ठोस और भौतिक परिणाम उनके हाथ लगे। सात्विक अनुभव या मानसिक भावुकता से वे दूर भागते थे। पाँचों इन्द्रियों के अनुभव के आधार पर ही, वे किसी आदर्श या सिद्धान्त की सत्यता अथवा असत्यता की परख करते थे। चारों ओर उपयोगिता और प्रयोजन का ही शोर मच रहा था। चार्ल्स पियर्स (Charles Pears) पहला व्यक्ति था जिसने इस विचार-धारा को प्रैग्मेटिज़्म (Pragmatism) का नाम दिया। विलियम जेम्स (William James) ने इसे लोकप्रिय [illegible] और अन्त में जॉन डिवी (John D[illegible]

प्राप्ति का साधन नहीं मानते। उनके मतानुसार शिक्षा उन क्रियाओं (Activities) का समूह है जिनके द्वारा बालक अपने मूल्यों (Values) का निर्माण करता है। इन क्रियाओं का महत्व इस लिए है क्योंकि वे बालक के लिए उपयोगी हैं और उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। एडम्स (Adams) के समान, वे इस तथ्य को स्वीकार नहीं करते कि शिक्षा, दर्शन-शास्त्र का क्रियात्मक (dynamic) रूप है। व्यवहारवादियों के अनुसार दर्शन-शास्त्र का निर्माण, शिक्षा द्वारा होता है। शिक्षा उन मूल्यों का निर्माण करती है, जिनके आधार पर दर्शन शास्त्र खड़ा होता है। सामान्य रूप में दर्शन-शास्त्र, शिक्षा का सैद्धान्तिक पक्ष (Theory of education) ही है।

व्यवहारवाद और शिक्षा के उद्देश्य

व्यवहारवाद, शिक्षा के लिए किन्हीं स्थिर एवं पूर्व-निर्धारित मूल्यों की आवश्यकता को नहीं स्वीकार करता। इसलिए शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण किन्हीं पूर्व-निश्चित मूल्यों के आधार पर न होकर व्यक्तियों के अनुभवों के आधार पर होगा।

व्यवहारवादी शिक्षक, बालक के लिए ऐसा वातावरण प्रस्तुत करेगा जिसमे रह कर, वह अपने लिए स्वयं मूल्यों का निर्माण कर सके। प्रकृतिवाद (Naturalism) के समान व्यवहारवाद भी किसी बाहरी प्रभुत्व (Authority) को बालक के लिए अनिवार्य नहीं समझता। वह बालक का विकास, उसकी रुचियों और क्षमताओं के अनुसार करना चाहता है। व्यवहारवाद के अनुसार ऐसी सामाजिक और सोद्देश्य क्रियाओं द्वारा बालक का पूर्ण विकास हो सकता है जो उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें।

व्यवहारवाद और शिक्षार्थी

व्यवहारवाद एक मानव-वादी विचार शैली है। यह पद्धति बालक को केन्द्र बना कर चलती है। व्यवहारवाद का इस बात में विश्वास है कि बालक परिस्थितियों या वातावरण के अनुसार उचित मूल्यों का सृजन करने की सामर्थ्य रखता है। बालक की आन्तरिक शक्तियाँ ऐसे प्राकृतिक नियमों से

ति का साधन नहीं मानते। उनके मतानुसार शिक्षा उन क्रियाओं (Activities) का समूह है जिनके द्वारा बालक अपने मूल्यों (Values) का निर्माण करता है। इन क्रियाओं का महत्व इस लिए है क्योंकि वे बालक के लिए उपयोगी हैं और उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। एडम्स (Adams) के समान, वे इस तथ्य को स्वीकार नहीं करते कि शिक्षा, दर्शन-शास्त्र का क्रियात्मक (dynamic) रूप है। व्यवहारवादियों के अनुसार दर्शन-शास्त्र का निर्माण, शिक्षा द्वारा होता है। शिक्षा उन मूल्यों का निर्माण करती है, जिनके आधार पर दर्शन शास्त्र खड़ा होता है। सामान्य रूप में दर्शन-शास्त्र, शिक्षा का सैद्धान्तिक पक्ष (Theory of education) ही है।

व्यवहारवाद और शिक्षा के उद्देश्य

व्यवहारवाद, शिक्षा के लिए किन्हीं स्थिर एवं पूर्व-निर्धारित मूल्यों की आवश्यकता को नहीं स्वीकार करता। इसलिए शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण किन्हीं पूर्व-निश्चित मूल्यों के आधार पर न होकर व्यक्तियों के अनुभवों के आधार पर होगा।

व्यवहारवादी शिक्षक, बालक के लिए ऐसा वातावरण प्रस्तुत करेगा जिसमें रह कर, वह अपने लिए स्वयं मूल्यों का निर्माण कर सके। प्रकृतिवाद (Naturalism) के समान व्यवहारवाद भी किसी बाहरी प्रभुत्व (Authority) को बालक के लिए अनिवार्य नहीं समझता। वह बालक का विकास, उसकी रुचियों और क्षमताओं के अनुसार करना चाहता है। व्यवहारवाद के अनुसार ऐसी सामाजिक और सामूहिक क्रियाओं द्वारा बालक का पूर्ण विकास हो सकता है जो उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें।

व्यवहारवाद और शिक्षार्थी

व्यवहारवाद एक मानव-वादी विचार शैली है। यह पद्धति बालक को केन्द्र बना कर चलती है। व्यवहारवाद का इस बात में विश्वास है कि बालक परिस्थितियों या वातावरण के अनुसार उचित मूल्यों का सृजन करने की सामर्थ्य रखता है। बालक की आन्तरिक शक्तियाँ ऐसे प्राकृतिक नियमों से

बातचीत तथा वस्तुओं के निर्माण मे रुचि रखते है, इसलिए प्रारम्भिक
ो मे वाचन, सम्वाद लिखना, हस्तकला, चित्रकला (Drawing)
का ज्ञान कराया जाएगा ।

(iii) एकता या समेकन (Integration) का सिद्धान्त—इस सिद्धांत
ाविक ज्ञान और क्रिया मे एकता स्थापित की जाती है । पाठ्यक्रम के
भिन्न विषय अलग-अलग होते हुए भी एक है जैसे कि शरीर और उसके
न अङ्ग । पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति के लिए इस एकता को समझ लेना
यक है ।

ारवाद और शिक्षण विधियां

व्यवहारवादी शिक्षा-प्रणाली, पाठ्य-विषयो की एकता पर बल देती है ।
ही साथ प्रयोग क्रियाशीलता व्यवहारिकता, अनुभव आदि को भी
ीणता का आधार माना गया है । इसलिए व्यवहारवाद की विधियाँ ऐसी
ी, जिन मे इन सब बातो का समावेश हो । इसके अतिरिक्त बालको की
ों, मनोवृत्तियो सवेदनाओ आदि का भी पूरा-पूरा ध्यान रखा जाना
इन सब बातो के लिए 'प्रयोग-विधि' को अपनाया गया है । पहले यह
किया ही जा चुका है कि किसी वस्तु या क्रिया की सत्यता की जाँच
के लिए उसका प्रयोग की कसौटी पर पूरा उतरना आवश्यक है ।
तिवाद भी प्रयोग विधि को अपनाता है परन्तु वहाँ इस का रूप दूसरा है ।
बालक को प्रकृति के खुले प्रांगण मे स्वय प्रयोग द्वारा मार्ग खोजने के
छोड दिया जाता है परन्तु यहाँ व्यवहारवादी दर्शन के अनुसार बालक
दिए गए विशिष्ट वातावरण मे अपनी रुचि के अनुसार प्रयोग करने होते
ौर परिणामों तक पहुँचना होता है । "प्रयोग—विधि" मे मनोविज्ञान की
ी शिक्षण विधियाँ आजाएगी जैसे सम्बद्ध वातावरण में किसी वस्तु की
आवृत्ति के कारण उसका अकन स्मृतिपटल पर प्राप्त कर लेना, (Condi-
oned Responce) थार्नडाईक (Thorndike) की प्रयुद्ध-प्रयत्नो
Trial and Error) की विधि ।

दूसरी विधि, जिसमे क्रियाशीलता और प्रयोग दोनो का सफल समन्वय

कि बातचीत तथा वस्तुओं के निर्माण मे रुचि रखते है, इसलिए प्रारम्भिक …ों मे वाचन, सम्वाद लिखना, हस्तकला, चित्रकला (Drawing) का ज्ञान कराया जाएगा।

(iii) एकता या समेकन (Integration) का सिद्धान्त—इस सिद्धात …ौतिक ज्ञान और क्रिया मे एकता स्थापित की जाती है। पाठ्यक्रम के …भिन्न विषय अलग-अलग होते हुए भी एक है जैसे कि शरीर और उसके …ंग प्रत्यङ्ग। पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति के लिए इस एकता को समझ लेना …श्यक है।

…हारवाद और शिक्षण विधियां

… व्यवहारवादी शिक्षा-प्रणाली, पाठ्य-विषयो की एकता पर बल देती है। …थ ही साथ प्रयोग क्रियाशीलता व्यवहारिकता, अनुभव आदि को भी …योगिता का आधार माना गया है। इसलिए व्यवहारवाद की विधियाँ ऐसी …ीं, जिन मे इन सब बातो का समावेश हो। इसके अतिरिक्त बालको की …ियों, मनोवृत्तियो सवेदनाओं आदि का भी पूरा-पूरा ध्यान रखा जाता …। इन सब बातों के लिए 'प्रयोग-विधि' को अपनाया गया है। पहले यह …ष्ट किया हो जा चुका है कि किसी वस्तु या क्रिया की सत्यता की जाँच …ने के लिए उसका प्रयोग की कसौटी पर पूरा उतरना आवश्यक है। …ृतिवाद भी प्रयोग विधि को अपनाता है परन्तु वहाँ इस का रूप दूसरा है। …हाँ बालक को प्रकृति के खुले प्राग्ण मे स्वय प्रयोग द्वारा मार्ग खोजने के …ए छोड दिया जाता है परन्तु यहाँ व्यवहारवादी दर्शन के अनुसार बालक …ो दिए गए विशिष्ट वातावरण मे अपनी रुचि के अनुसार प्रयोग करने होते … और परिणामों तक पहुँचना होता है। "प्रयोग—विधि" मे मनोविज्ञान की …भी शिक्षण विधियाँ आजाएगी जैसे सम्वद्ध वातावरण में किसी वस्तु की …नरावृत्ति के कारण उसका अकन स्मृतिपटल पर प्राप्त कर लेना, (Conditioned Responce) थार्नडाईक (Thorndike) की प्रयत्न-प्रयत्नो (Trial and Error) की विधि।

दूसरी विधि, जिसमे क्रियाशीलता और प्रयोग दोनो का सफल समन्वय

(डिवी की शिक्षण विधि, व्यक्तिगत और सामाजिक आधारों का सामञ्जस्य किस सीमा तक करती है ?) [आगरा १९५४]

Q. 22 According to Dewey, "Complete living in the social world of today should be the aim of education" Discuss how this can be achieved. [Agra 1957]

(डिवी के विचारानुसार 'शिक्षा का यह उद्देश्य होना चाहिए कि आज के युग में व्यक्ति, सामाजिक संसार में अपना जीवन पूर्ण सफलता के साथ बिता सके।" भली भाँति स्पष्ट कीजिए कि इस उद्देश्य की पूर्ति किस प्रकार हो सकती है।) [आगरा १९५७]

Q 23 Give a brief critical account of Dewey's conception of education and show how far you agree with his view that growth is the only ideal of education. [Agra. 1956]

(डिवी के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर आलोचनात्मक दृष्टि डालते हुए स्पष्ट कीजिए कि आप उसके इस विचार से कहाँ तक सहमत हैं जिसमें कहा गया है कि विकास ही शिक्षा का एक मात्र आदर्श है।)

[आगरा १९५६]

उत्तर—जान डिवी अमेरिका का प्रसिद्ध दार्शनिक तथा शिक्षा-शास्त्री

(डिवी की शिक्षण विधि, व्यक्तिगत और सामाजिक आधारों का
जस्य किस सीमा तक करती है ?) [आगरा १६५४]

Q. 22 According to Dewey, "Complete living in the social
ld of today should be the aim of education" Discuss how this
be achieved. [Agra 1957]

(डिवी के विचारानुसार ' शिक्षा का यह उद्देश्य होना चाहिए कि आज
युग में व्यक्ति, सामाजिक संसार में अपना जीवन पूर्ण सफलता के साथ बिता
।" भली भांति स्पष्ट कीजिए कि इस उद्देश्य की पूर्ति किस प्रकार हो
ती है।) [आगरा १६५७]

Q 23 Give a brief critical account of Dewey's conception of
ucation and show how far you agree with his view that growth
the only ideal of education. [Agra. 1956]

(डिवी के शिक्षा सम्बन्धी विचारों पर आलोचनात्मक दृष्टि डालते
ए स्पष्ट कीजिए कि आप उसके इस विचार से कहाँ तक सहमत हैं जिसमें
हा गया है कि विकास ही शिक्षा का एक मात्र आदर्श है।)

[आगरा १६५६]

उत्तर—जान डिवी अमेरिका का प्रसिद्ध दार्शनिक तथा शिक्षा-शास्त्री
रा है।

(१) जीवन सम्बन्धी मूल्य और सत्य चिरन्तन और शाश्वत नहीं—सत्य वही है जो उपयोगी हो। कोई भी वस्तु जिसका व्यवहार हम दैनिक जीवन में नहीं कर सकते, असत्य है। सत्य और मूल्य (Values) कोई स्थिर वस्तु नहीं। हम ही उन का निर्माण करते हैं। वे समय और परिस्थिति के अनुसार वे बदलते रहते हैं।

(२) संसार का विकास हो रहा है—डिवी विकासवाद के सिद्धान्त (Theory of Evolution) में विश्वास रखता है इसलिए उसका विश्वास था कि इससे भी अच्छा संसार (better world) अभी आएगा क्योंकि यहाँ नित्यप्रति परिवर्तन हो रहा है। इस परिवर्तन का आधार व्यक्ति है। अतएव व्यक्ति को संसार की सुन्दरता का आनन्द लेने की अपेक्षा, इसके सौन्दर्य को बढाना चाहिए।

(३) बुद्धि और क्रिया मे कोई अन्तर नहीं—डिवी ज्ञान (Knowing) और क्रिया (doing) को एक ही समझता था। दोनों एक दूसरे पर निर्भर हैं और कोई एक दूसरे से बढ़ कर नहीं। मन या बुद्धि का सम्बन्ध विचारों से है और विचार ही हमें क्रिया (action) की ओर ले जाते हैं। एक आदर्श समाज मे प्रत्येक व्यक्ति को समाज हित के लिए विचार करके कार्य करना चाहिए। जो विचार (ideas) क्रिया (activity) मे परिणित न हो सकें, उन्हें छोड दिया जाए।

(४) शिक्षा सम्बन्धी मूल्यों की परीक्षा भी, उनकी उपयोगिता में है—डिवी के मतानुसार वही शिक्षा सम्बन्धी अनुभव (Educational expriences) उपयोगी है जिन से व्यक्तिगत और सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।

(५) प्रकृति ही परिवर्तन का आधार है—उसके अनुसार प्रकृति मे यह गुण है कि वह विकास और पूर्णता (perfection) की ओर ले जाए। व्यक्ति तो प्रकृति के हाथ में खिलौना (instrument) है। इसलिए पूर्णता

(१) जीवन सम्बन्धी मूल्य और सत्य चिरन्तन और शाश्वत नहीं हैं—सत्य वही है जो उपयोगी हो। कोई भी वस्तु जिसका व्यवहार हम दैनिक जीवन में नहीं कर सकते, असत्य है। सत्य और मूल्य (Values) कोई स्थिर वस्तु नहीं। हम ही उन का निर्माण करते हैं। वे समय और परिस्थिति के अनुसार वे बदलते रहते हैं।

(२) संसार का विकास हो रहा है—डिवी विकासवाद के सिद्धान्त (Theory of Evolution) में विश्वास रखता है इसलिए उसका विश्वास था कि इससे भी अच्छा संसार (better world) अभी आगे आएगा क्योंकि यहाँ नित्यप्रति परिवर्तन हो रहा है। इस परिवर्तन का आधार व्यक्ति है। अतएव व्यक्ति को संसार की सुन्दरता का आनन्द लेने की अपेक्षा, इसके सौन्दर्य को बढ़ाना चाहिए।

(३) बुद्धि और क्रिया में कोई अन्तर नहीं—डिवी ज्ञान (Knowing) और क्रिया (doing) को एक ही समझता था। दोनों एक दूसरे पर निर्भर हैं और कोई एक दूसरे से बढ़ कर नहीं। मन या बुद्धि का सम्बन्ध विचारों से है और विचार ही हमें क्रिया (action) की ओर ले जाते हैं। एक आदर्श समाज में प्रत्येक व्यक्ति को समाज हित के लिए विचार करके कार्य करना चाहिए। जो विचार (ideas) क्रिया (activity) में परिणित न हो सकें, उन्हें छोड़ दिया जाए।

(४) शिक्षा सम्बन्धी मूल्यों की परीक्षा भी, उनकी उपयोगिता है—डिवी के मतानुसार वही शिक्षा सम्बन्धी अनुभव (Educational expriences) उपयोगी है जिन से व्यक्तिगत और सामाजिक आवश्यकताएं की पूर्ति हो सके।

(५) प्रकृति ही परिवर्तन का आधार है—उसके अनुसार प्रकृति में य गुण है कि वह विकास और पूर्णता (perfection) की ओर ले जाए व्यक्ति तो प्रकृति के हाथ में खिलौना (instrument) है। इसलिए पूर्णता की ओर बढ़ने का प्रयास प्राकृतिक तथा वैज्ञानिक है।

(६) परिणाम की अपेक्षा प्रक्रिया (process) अधिक उपयोगी है-

उन्हें ऐसे अनुभव प्रदान किये जाएं, जिनसे वह आगे जाकर अच्छे नागरिक बन सकें।

(२) शिक्षा ही विकास है—डिवी के मतानुसार शिक्षा का कार्य है, व्यक्तियों का सभी दृष्टि से विकास करना, केवल-मात्र खाली मन को ज्ञान के टुकड़ों से भरना नहीं। विकास का परिणाम है और विकास। इसी प्रकार शिक्षा का परिणाम है, और शिक्षा। प्रत्येक बालक में विकास के बीज हैं। अध्यापक का कर्त्तव्य है, बालक को ऐसा वातावरण देना, जिस में यह विकास का कार्य बिना किसी प्रकार की बाधा के सम्पन्न हो सके।

(३) शिक्षा अनुभवों का पुनर्निर्माण है—डिवी अनुभवों के समूह (totality of experiences) को ही शिक्षा समझता था। हमारे विचारों, आदर्शों तथा मूल्यों का महत्व, अनुभवों के बिना कुछ भी नहीं। अनुभवों के द्वारा इनकी परीक्षा होती है। एक अनुभव के द्वारा दूसरा अनुभव होता है और इस प्रकार सीखने (learning) का कार्य आगे बढ़ता है। अनुभव एक ओर व्यक्ति का और दूसरी ओर वातावरण का विकास करता है। विकास की प्रक्रिया में अनुभव की प्रधानता है। अतएव अनुभव ही शिक्षा है।

(४) शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है—मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह अकेले रह कर या केवल प्राकृतिक वातावरण में रह कर ही अपने आप

ऐसे अनुभव प्रदान किये जाए, जिनसे वह आगे जाकर अच्छे नागरिक बनें।

(२) शिक्षा ही विकास है—डिवी के मतानुसार शिक्षा का कार्य है, क्यों का सभी दृष्टि से विकास करना, केवल-मात्र खाली मन को ज्ञान टुकड़ों से भरना नहीं। विकास का परिणाम है और विकास। इसी प्रकार ा का परिणाम है, और शिक्षा। प्रत्येक बालक में विकास के बीज हैं। ापक का कर्तव्य है, बालक को ऐसा वातावरण देना, जिस में यह विकास कार्य बिना किसी प्रकार की बाधा के सम्पन्न हो सके।

(३) शिक्षा अनुभवों का पुनर्निर्माण है—डिवी अनुभवों के समूह ntality of experiences) को ही शिक्षा समझता था। हमारे चारों, आदर्शों तथा मूल्यों का महत्व, अनुभवों के बिना कुछ भी नहीं। ुभवों के द्वारा इनकी परीक्षा होती है। एक अनुभव के द्वारा दूसरा ुभव होता है और इस प्रकार सीखने (learning) का कार्य आगे ता है। अनुभव एक ओर व्यक्ति का और दूसरी ओर वातावरण का काम करता है। विकास की प्रक्रिया में अनुभव की प्रधानता है। अतएव नुभव ही शिक्षा है।

उन्हें ऐसे अनुभव प्रदान किये जाए, जिनसे वह आगे जाकर अच्छे नागरिक बन सकें।

(२) शिक्षा हो विकास है—डिवी के मतानुसार शिक्षा का कार्य है, व्यक्तियों का सभी दृष्टि से विकास करना, केवल-मात्र खाली मन को ज्ञान के टुकड़ों से भरना नहीं। विकास का परिणाम है और विकास। इसी प्रकार शिक्षा का परिणाम है, और शिक्षा। प्रत्येक बालक में विकास के बीज हैं। अध्यापक का कर्तव्य है, बालक को ऐसा वातावरण देना, जिस में यह विकास का कार्य बिना किसी प्रकार की बाधा के सम्पन्न हो सके।

(३) शिक्षा अनुभवों का पुनर्निर्माण है—डिवी अनुभवों के समूह (totality of experiences) को ही शिक्षा समझता था। हमारे विचारों, आदर्शों तथा मूल्यों का महत्त्व, अनुभवों के बिना कुछ भी नहीं। अनुभवों के द्वारा इनकी परीक्षा होती है। एक अनुभव के द्वारा दूसरा अनुभव होता है और इस प्रकार सीखने (learning) का कार्य आगे बढ़ता है। अनुभव एक ओर व्यक्ति का और दूसरी ओर वातावरण का विकास करता है। विकास की प्रक्रिया में अनुभव की प्रधानता है। अतएव अनुभव ही शिक्षा है।

(४) शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है—मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह अकेले रह कर या केवल प्राकृतिक वातावरण में रह कर ही अपने आप का विकास नहीं कर सकता। उसका विकास समाज में रह कर ही सम्भव हो सकता है। तीन शक्तियाँ ऐसी हैं जो प्रतिदिन समाज को नया रूप दे रही हैं। वे हैं प्रजातन्त्रवाद (democracy) उद्योग (industry) तथा विज्ञान (science)। इन शक्तियों के कारण, नित्य प्रति समाज में जो परिवर्तन हो रहा है, शिक्षार्थी के लिए उसका जानना आवश्यक होगा। शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति सामाजिक आदान-प्रदान में भाग लेता है। पाठशाला द्वारा सामाजिक वातावरण को सरल किया जाता है।

वैज्ञानिक अनुसन्धानों तथा औद्योगीकरण के कारण सामाजिक समस्याएं

उन्हें ऐसे अनुभव प्रदान किये जाएं, जिनसे वह आगे जाकर अच्छे नागरिक बन सकें।

(२) शिक्षा ही विकास है—डिवी के मतानुसार शिक्षा का कार्य है, व्यक्तियों का सभी दृष्टि से विकास करना, केवल-मात्र खाली मन को ज्ञान के टुकड़ों से भरना नहीं। विकास का परिणाम है और विकास। इसी प्रकार शिक्षा का परिणाम है, और शिक्षा। प्रत्येक बालक में विकास के बीज हैं। अध्यापक का कर्तव्य है, बालक को ऐसा वातावरण देना, जिस में यह विकास का कार्य बिना किसी प्रकार की बाधा के सम्पन्न हो सके।

(३) शिक्षा अनुभवों का पुनर्निर्माण है—डिवी अनुभवों के समूह (totality of experiences) को ही शिक्षा समझता था। हमारे विचारों, आदर्शों तथा मूल्यों का महत्व, अनुभवों के बिना कुछ भी नहीं। अनुभवों के द्वारा इनकी परीक्षा होती है। एक अनुभव के द्वारा दूसरा अनुभव होता है और इस प्रकार सीखने (learning) का कार्य आगे बढ़ता है। अनुभव एक ओर व्यक्ति का और दूसरी ओर वातावरण का विकास करता है। विकास की प्रक्रिया में अनुभव की प्रधानता है। अतएव अनुभव ही शिक्षा है।

(४) शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है—मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह अकेले रह कर या केवल प्राकृतिक वातावरण में रह कर ही अपने आप का विकास नहीं कर सकता। उसका विकास समाज में रह कर ही सम्भव हो सकता है। तीन शक्तियां ऐसी हैं जो प्रतिदिन समाज को नया रूप दे रही हैं। वे हैं प्रजातन्त्रवाद (democracy) उद्योग (industry) तथा विज्ञान (science)। इन शक्तियों के कारण, नित्य प्रति समाज में जो परिवर्तन हो रहा है, शिक्षार्थी के लिए उसका जानना आवश्यक होगा। शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति सामाजिक आदान-प्रदान में भाग लेता है। पाठशाला द्वारा सामाजिक वातावरण को सरल किया जाता है।

वैज्ञानिक अनुसन्धानों तथा औद्योगीकरण के कारण सामाजिक समस्याएं

उत्पादन और उसका बटवारा (production and its distribution) आने जाने के साधन इत्यादि विषय पढ़ाए जा सकते हैं। परन्तु इस बात का ध्यान रखा जाए कि यह विषय क्रिया (activity) द्वारा पढ़ाए जाएँ।

डिवी ने कला (art) और हस्त उद्योग (Handicraft) को भी शिक्षा में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया। उसके मतानुसार इन विषयों की शिक्षा द्वारा, बालक अपने आप को पूरी तरह अभिव्यक्त कर सकेगा।

डिवी ने नैतिक तथा धार्मिक शिक्षा को भी पाठ्यक्रम में स्थान दिया है परन्तु उसने इनके व्यवहारिक पक्ष पर ही अधिक बल दिया है।

Q. 24 Discuss Dewey's views on an ideal school.

[Panjab 1948]

(डिवी के मतानुसार, आदर्श स्कूल का क्या स्वरूप होगा ?)

[पंजाब १९४८]

Q 25. "The school should be a laborartory of social experimentation in the best ways of living together." Give an account of Dewey's scheme for a practical application of this statement [Panjab 1951]

("स्कूल सामाजिक अनुभवों की एक प्रयोगशाला है जहाँ हम आपस में मिल कर रहना सीखते हैं"—डिवी के इस कथन को ध्यान में रखते हुए स्पष्ट कीजिए कि उसने इसे कैसे व्यवहारिक स्वरूप दिया।)

[पंजाब १९५१]

उत्तर—डिवी कहा करता था कि औद्योगिक क्रान्ति (Industrial) (Revolution) तथा सामाजिक—आर्थिक उथल-पुथल (Socio-economic upheaval) ने संसार का रूप ही बदल दिया है। इस लिए वर्तमान स्कूल तथा उनके कार्यक्रम आज के संसार की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकते। शिक्षा की दिशा में लोगों के मार्ग दर्शन के लिए, डिवी ने १८६६ ई० में शिकागो में प्रयोगात्मक विद्यालय (laboratory school) की स्थापना की। उसके अनुसार आदर्श स्कूल की निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए:—

त्पादन और उसका बटवारा (production and its distribution) ाने जाने के साधन इत्यादि विषय पढ़ाए जा सकते हैं। परन्तु इस बात र ध्यान रखा जाए कि यह विषय क्रिया (activity) द्वारा पढाए जाएँ।

डिवी ने कला (art) और हस्त उद्योग (Handicraft) को भी शिक्षा मे महत्वपूर्ण स्थान दिया। उसके मतानुसार इन विषयों की शिक्षा द्वारा, बालक अपने आप को पूरी तरह अभिव्यक्त कर सकेगा।

डिवी ने नैतिक तथा धार्मिक शिक्षा को भी पाठ्यक्रम मे स्थान दिया है परन्तु उसने इनके व्यवहारिक पक्ष पर ही अधिक बल दिया है।

Q. 24 Discuss Dewey's views on an ideal school.

[Panjab 1948]

(डिवी के मतानुसार, आदर्श स्कूल का क्या स्वरूप होगा ?)

[पंजाब १९४८]

Q 25. "The school should be a laborartory of social experimentation in the best ways of living together." Give an account of Dewey's scheme for a practical application of this statement [Panjab 1951]

("स्कूल सामाजिक अनुभवों की एक प्रयोगशाला है जहाँ हम आपस में मिल कर रहना सीखते हैं"—डिवी के इस कथन को ध्यान मे रखते हुए स्पष्ट कीजिए कि उसने इसे कैसे व्यवहारिक स्वरूप दिया।)

[पंजाब १९५१]

उत्तर—डिवी कहा करता था कि औद्योगिक क्रान्ति (Industrial) (Revolution) तथा सामाजिक—आर्थिक उथल-पुथल (Socio-economic upheaval) ने ससार का रूप ही बदल दिया है। इस लिए वर्तमान स्कूल तथा उनके कार्यक्रम आज के ससार की आवश्यकताओं की पूर्ति नही कर सकते। शिक्षा की दिशा मे लोगों के मार्ग दर्शन के लिए, डिवी ने १८९६ ई० मे शिकागो मे प्रयोगात्मक विद्यालय (laboratory school) की स्थापना की। उसके अनुसार आदर्श स्कूल की निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए:—

(२) शिक्षा बालक की रुचि के अनुसार—आज विषयों के चुनाव और वास्तविक शिक्षण में बालकों की रुचियों तथा क्षमताओं पर बहुत बल दिया —— है। यह डिवी ही था जिसने सबसे पहले इस बात पर जोर दिया।

३) अर्थपूर्ण क्रिया (Meaningful activity)—डिवी ने य के लिए किसी भी क्रिया का अनुमोदन नहीं किया। पाठ्यक्रम मे उन्ही क्रियाओ को स्थान दिया जाएगा जो बालक तथा समाज की ते उपयोगी हो। वर्धा योजना मे भी यही भाव पाया जाता है।

४) सामाजिक सम्पर्क—यह डिवी का ही प्रभाव था जिसके कारण विद्यालय और समाज, एक दूसरे के इतने निकट आ गए हैं। डिवी ने मात्र बौद्धिक क्रियाओ, के स्थान पर सामाजिक क्रियाओं पर ही अधिक दया।

(५) पाठ्यक्रम का निर्माण—पाठ्यक्रम के निर्माण में डिवी मे बहुत ता मिलती है। डिवी मे पहले पाठ्यक्रम मे गतिशीलता तथा लचीलेपन भाव था।

(६) नैतिकता, व्यवहारिक अनुभव है—आज पाठशालाओं मे नैतिकता धार्मिकता सम्बन्धी आदर्शों को स्थिर नहीं समझा जाता बल्कि बालको ए वही नैतिक तथा धार्मिक गुण आवश्यक समझे जाते हैं, जिन्हें वे हार मे ला सकें। नैतिकता सम्बन्धी यह दृष्टिकोण डिवी का ही है।

(२) शिक्षा बालक की रुचि के अनुसार—आज विषयों के चुनाव और वास्तविक शिक्षण में बालकों की रुचियों तथा क्षमताओं पर बहुत बल दिया जाता है। यह डिवी ही था जिसने सबसे पहले इस बात पर जोर दिया।

(३) अर्थपूर्ण क्रिया (Meaningful activity)—डिवी ने विद्यालय के लिए किसी भी क्रिया का अनुमोदन नहीं किया। पाठ्यक्रम में केवल उन्हीं क्रियाओं को स्थान दिया जाएगा जो बालक तथा समाज की दृष्टि से उपयोगी हों। वर्धा योजना में भी यही भाव पाया जाता है।

(४) सामाजिक सम्पर्क—यह डिवी का ही प्रभाव था जिसके कारण आज विद्यालय और समाज, एक दूसरे के इतने निकट आ गए हैं। डिवी ने केवल-मात्र बौद्धिक क्रियाओं, के स्थान पर सामाजिक क्रियाओं पर ही अधिक बल दिया।

(५) पाठ्यक्रम का निर्माण—पाठ्यक्रम के निर्माण हमें डिवी से बहुत सहायता मिलती है। डिवी से पहले पाठ्यक्रम में गतिशीलता तथा लचीलेपन का अभाव था।

(६) नैतिकता, व्यवहारिक अनुभव है—आज पाठशालाओं में नैतिकता और धार्मिकता सम्बन्धी आदर्शों को स्थिर नहीं समझा जाता बल्कि बालकों के लिए वही नैतिक तथा धार्मिक गुण आवश्यक समझे जाते हैं, जिन्हें वे व्यवहार में ला सकें। नैतिकता सम्बन्धी यह दृष्टिकोण डिवी का ही है।

के क्षेत्र में भौतिक-विज्ञानों पर आधारित प्रकृतिवाद का कोई महत्व नहीं क्योंकि शिक्षा मानव की प्रक्रिया है, भौतिक विज्ञान का रूप नहीं।

(ii) यान्त्रिक प्रकृतिवाद (Mechanical Naturalism)—यह धारा औद्योगिक प्रगति पर आश्रित है। यद्यपि यह धारा मनुष्य को केवल मशीन समझती है परन्तु रॉस (Ross) के मतानुसार, इस का शिक्षा सम्बन्धी कुछ महत्व भी है क्योंकि इस धारा के आधार पर ही आचरणवादी मनोविज्ञान (Behaviourism) का जन्म हुआ है। इस धारा के अनुसार यह सम्पूर्ण विश्व एक महान यन्त्र के समान है। मनुष्य इस बड़े यन्त्र का एक भाग है और अपने में पूरा यन्त्र भी। इस यन्त्र के चालू होने में किसी भी प्रकार की मन की या आत्मा की शक्ति को स्वीकार नहीं किया जाता। इसी लिए आचरणवादी शिक्षा (Behaviouristic Education) में सम्बन्ध प्रतिक्रिया (Conditioned Response) तथा "कुछ कर के सीखना" के सिद्धान्तों पर इतना बल दिया जाता है।

(iii) जीव-शास्त्रीय प्रकृतिवाद (Biological Naturalism)—यह धारा डार्विन (Darwin) के विकासवाद पर आधारित है। इस धारा के तीन प्रमुख सिद्धान्त यह हैं —(i) परिस्थिति के अनुसार अपने आप को ढाल लेना (Adaptation to environment), (ii) जीवन के लिए संघर्ष (Struggle for existance) तथा (iii) समर्थ की विजय (Survival of the Fittest)। रॉस (Ross) के मतानुसार जीव-शास्त्रीय या विकासवादी प्रकृतिवाद मनुष्य की उस प्रकृति पर बल देता है, जिसे उसने अपने पूर्वजों से प्राप्त किया है। इसी लिए प्रकृतिवाद मनुष्य की प्राकृतिक संवेदनाओं (Natural impulses) और जन्मजात प्रवृत्तियों (Propensities) के पोषण पर इतना अधिक बल देता है। प्रकृतिवाद के इसी स्वरूप ने शिक्षा पर अधिक प्रभाव डाला है।

प्रकृतिवाद और शिक्षा

शिक्षा के क्षेत्र में प्रकृतिवाद की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :—

(१) प्रकृतिवाद शिक्षा के तीन साधनों—प्रकृति, मनुष्य और वस्तुओं,

क्षेत्र में भौतिक-विज्ञानों पर आधारित प्रकृतिवाद का कोई महत्व नहीं क्योंकि शिक्षा मानव की प्रक्रिया है, भौतिक विज्ञान का रूप नहीं।

(ii) यान्त्रिक प्रकृतिवाद (Mechanical Naturalism)—यह धारा औद्योगिक प्रगति पर आश्रित है। यद्यपि यह धारा मनुष्य को केवल मशीन समझती है परन्तु रॉस (Ross) के मतानुसार, इस का शिक्षा सम्बन्धी कुछ महत्व भी है क्योंकि इस धारा के आधार पर ही आचरणवादी मनोविज्ञान (Behaviourism) का जन्म हुआ है। इस धारा के अनुसार यह सम्पूर्ण विश्व एक महान यन्त्र के समान है। मनुष्य इस बड़े यन्त्र का एक भाग है और अपने में पूरा यन्त्र भी। इस यन्त्र के चालू होने मे किसी भी प्रकार की मन की या आत्मा की शक्ति को स्वीकार नहीं किया जाता। इसी लिए आचरणवादी शिक्षा (Behaviouristic Education) में सम्बन्ध प्रतिक्रिया (Conditioned Response) तथा "कुछ कर के सीखना" के सिद्धान्तों पर इतना बल दिया जाता है।

(iii) जीव-शास्त्रीय प्रकृतिवाद (Biological Naturalism)—यह धारा डार्विन (Darwin) के विकासवाद पर आधारित है। इस धारा के तीन प्रमुख सिद्धान्त यह हैं —(i) परिस्थिति के अनुसार अपने आप को ढाल लेना (Adaptation to environment), (ii) जीवन के लिए संघर्ष (Struggle for existance) तथा (iii) समर्थ की विजय (Survival of the Fittest)। रॉस (Ross) के मतानुसार जीव-शास्त्रीय या विकासवादी प्रकृतिवाद मनुष्य की उस प्रकृति पर बल देता है, जिसे उसने अपने पूर्वजों से प्राप्त किया है। इसी लिए प्रकृतिवाद मनुष्य की प्राकृतिक संवेदनाओं (Natural impulses) और जन्मजात प्रवृत्तियों (Propensities) के पोषण पर इतना अधिक बल देता है। प्रकृतिवाद के इसी स्वरूप ने शिक्षा पर अधिक प्रभाव डाला है।

प्रकृतिवाद और शिक्षा

शिक्षा के क्षेत्र में प्रकृतिवाद की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :—

(१) प्रकृतिवाद शिक्षा के तीन साधनों—प्रकृति, मनुष्य और वस्तुओं

does not give Virtue, it protects from Vice, it does not inculcate truth, it protects from error. It disposes the child to take the path that will lead him to truth, when he has reached the age to understand it, and to Goodness, when he has acquired the faculty of recognizing and loving it)

(४) प्रकृतिवादी शिक्षा की चौथी विशेषता बालक की स्वतन्त्रता पर जोर देना है। रूसो (Rousseau) के अनुसार सभी बन्धन मनुष्य रचित हैं। भगवान किसी को बन्धन में नहीं डालता। उसके प्रसिद्ध ग्रन्थ एमील (Emile) का सर्वप्रथम वाक्य ही उसके अन्तर्दर्शन का परिचय देता है,—'प्रकृति के सृजनकर्ता के हाथ से आने वाली प्रत्येक वस्तु मंगलकारी है परन्तु मनुष्य के हाथों उसका ह्रास हो जाता है (God makes all things good, man meddles with them and they become evil)। प्रकृतिवादी शिक्षा-प्रणाली सब प्रकार के बन्धनों, उलझनों और बाधाओं से मुक्त रह कर, बालक के स्वतन्त्र वातावरण में पनपने पर जोर देती है।

(५) एडम्स (Adams) के अनुसार प्रकृतिवादी शिक्षा की एक विशेषता है, इसका बाल-केन्द्रित (Paido—centric) होना। जो शिक्षा बालकों के व्यवहार, आचार, आदि का मनोवैज्ञानिक अध्ययन करती है, वह निश्चित रूप से बाल केन्द्रित होगी ही।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जीव शास्त्रीय या विकासवादी प्रकृतिवाद का शिक्षा से बड़े निकट का सम्बन्ध है।

प्रकृतिवाद और शिक्षा के उद्देश्य

ऊपर यह स्पष्ट किया ही जा चुका है कि भौतिक विज्ञान सम्बन्धी प्रकृतिवाद का शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं। यन्त्रवादी प्रकृतिवाद का शिक्षा से कुछ-कुछ सम्बन्ध है। जीव-शास्त्रीय या विकासवादी प्रकृतिवाद ने शिक्षा पर पर्याप्त प्रभाव डाला है। प्रकृतिवाद के अनुसार शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य होंगे —

(क) यन्त्रवादी प्रकृतिवाद मनुष्य को एक मशीन के समान समझता है,

loes not give Virtue, it protects from Vice, it does not inculcate ruth, it protects from error. It disposes the child to take the path that will lead him to truth, when he has reached the age to understand it, and to Goodness, when he has acquired the faculty of recognizing and loving it)

(४) प्रकृतिवादी शिक्षा की चौथी विशेषता बालक की स्वतन्त्रता पर जोर देना है। रूसो (Rousseau) के अनुसार सभी बन्धन मनुष्य रचित हैं। भगवान किसी को बन्धन में नहीं डालता। उसके प्रसिद्ध ग्रन्थ एमील (Emile) का सर्वप्रथम वाक्य ही उसके मन्तव्यदर्शन का परिचय देता है,— 'प्रकृति के सृजनकर्ता के हाथ से आने वाली प्रत्येक वस्तु मंगलकारी है परन्तु मनुष्य के हाथों उसका ह्रास हो जाता है (God makes all things good, man meddles with them and they become evil)। प्रकृतिवादी शिक्षा-प्रणाली सब प्रकार के बन्धनों, उलझनों और बाधाओं से मुक्त रह कर, बालक के स्वतन्त्र वातावरण में पनपने पर जोर देती है।

(५) एडम्स (Adams) के अनुसार प्रकृतिवादी शिक्षा की एक विशेषता है, इसका बाल-केन्द्रित (Paido—centric) होना। जो शिक्षा बालकों के व्यवहार, आचार, आदि का मनोवैज्ञानिक अध्ययन करती है, वह निश्चित रूप से बाल केन्द्रित होगी ही।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जीव शास्त्रीय या विकासवादी प्रकृतिवाद का शिक्षा से बड़े निकट का सम्बन्ध है।

प्रकृतिवाद और शिक्षा के उद्देश्य

ऊपर यह स्पष्ट किया ही जा चुका है कि भौतिक विज्ञान सम्बन्धी प्रकृतिवाद का शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं। यन्त्रवादी प्रकृतिवाद का शिक्षा से कुछ-कुछ सम्बन्ध है। जीव-शास्त्रीय या विकासवादी प्रकृतिवाद ने शिक्षा पर पर्याप्त प्रभाव डाला है। प्रकृतिवाद के अनुसार शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य होंगे —

(क) यन्त्रवादी प्रकृतिवाद मनुष्य को एक मशीन के समान समझता है,

Q 33 The outcome of all Rousseau's teaching seems that we should in every way develop the child's animal or physical life, retard his intellectual life, and ignore his life as a spiritual and moral being." Is this a correct estimate of Rousseau's educational principles ? [Agra 1955]

(रूसो की शिक्षा का यह परिणाम प्रतीत होता है कि हम बालक का शारीरिक विकास तो करें परन्तु उसके बौद्धिक तथा आध्यात्मिक जीवन की ओर उदासीन रहें"—क्या रूसो के शिक्षा सम्बन्धी सिद्धान्तों का यह ठीक-ठीक मूल्यांकन है ?) [आगरा १९५५]

Q 34 Describe Rousseau's views on moral education and state how far we can adopt them for training the character of Indian youth ? [Agra 1950, Punjab 1955]

(रूसो के नैतिक शिक्षा सम्बन्धी विचारों की चर्चा करो और स्पष्ट करो कि इन विचारों को हम भारतीय नवयुवकों की शिक्षा के लिए कहाँ तक अपना सकते हैं ?) [आगरा १९५० पंजाब १९५५]

Q 35 Estimate critically the general principles of Rousseau's Negative Education. [Agra 1957, Panjab 1955 suppl]

(रूसो की निषेधात्मक शिक्षा के सिद्धान्तों का आलोचनात्मक विवेचन कीजिए।) [आगरा १९५७, पंजाब १९५५]

उत्तर—रूसो का जीवन तथा कार्य—

१८ वीं शताब्दी को हम दो युगों का सन्धिकाल कह सकते हैं। इस शताब्दी के प्रारम्भिक भाग में धोखा-धड़ी और भ्रष्टाचार का बाजार गर्म था। अभिजात वर्ग (Privileged class) के हाथ जनता के खून से रंगे हुए थे। सभी ओर बनावटीपन तथा शोषण का साम्राज्य था। शिक्षा केवल नियमित (Formal) रूप से ही दी जाती थी। बालक को मनुष्य का छोटा रूप समझा जाता था। अनुशासन का ढंग दमनकारी (Repressive) था। जहाँ देखो असन्तोष ही असन्तोष दिखता था। ऐसे वातावरण में रूसो

Q 33 The outcome of all Rousseau's teaching seems that we should in every way develop the child's animal or physical life, retard his intellectual life, and ignore his life as a spiritual and moral being." Is this a correct estimate of Rousseau's educational principles ? [Agra 1955]

(रूसो की शिक्षा का यह परिणाम प्रतीत होता है कि हम बालक का शारीरिक विकास तो करें परन्तु उसके बौद्धिक तथा आध्यात्मिक जीवन की ओर उदासीन रहें"—क्या रूसो के शिक्षा सम्बन्धी सिद्धान्तों का यह ठीक-ठीक मूल्यांकन है ?) [आगरा १९५५]

Q 34 Describe Rousseau's views on moral education and state how far we can adopt them for training the character of Indian youth ? [Agra 1950, Punjab 1955]

(रूसो के नैतिक शिक्षा सम्बन्धी विचारों को चर्चा करो और स्पष्ट करो कि इन विचारों को हम भारतीय नवयुवकों की शिक्षा के लिए कहाँ तक अपना सकते हैं ?) [आगरा १९५० पंजाब १९५५]

Q 35 Estimate critically the general principles of Rousseau's Negative Education. [Agra 1957, Punjab 1955 suppl]

(रूसो की निषेधात्मक शिक्षा के सिद्धान्तों का आलोचनात्मक विवेचन कीजिए।) [आगरा १९५७, पंजाब १९५५]

उत्तर—रूसो का जीवन तथा कार्य—

१८ वीं शताब्दी को हम दो युगों का सन्धिकाल कह सकते हैं। इस शताब्दी के प्रारम्भिक भाग में धोखा-धड़ी और भ्रष्टाचार का बाजार गर्म था। अभिजात वर्ग (Privileged class) के हाथ जनता के खून से रंगे हुए थे। सभी ओर बनावटीपन तथा शोषण का साम्राज्य था। शिक्षा केवल नियमित (Formal) रूप से ही दी जाती थी। बालक को मनुष्य का छोटा रूप समझा जाता था। अनुशासन का ढंग दमनकारी (Repressive) था। जहाँ देखो असन्तोष ही असन्तोष दिखता था। ऐसे वातावरण में रूसो

सम्पर्क से वे दूषित हो जाती हैं" (Everything is good as it comes from the hands of the author of nature; everything degenerates in the hands of man)। रूसो के मतानुसार व्यक्ति का विकास तभी सम्भव हो सकता है जब कि वह प्रकृति की ओर लौट चले। भिन्न-भिन्न सामाजिक संस्थाएं व्यक्ति के जीवन को कृत्रिम बना देती हैं। रूसो के विचार में सभ्यता के प्रथम चरण में मनुष्य अधिक सुखी था। सभ्यता के विकास ने उसके दुःख को बढ़ा दिया है। यदि मनुष्य फिर से सुखी बनना चाहता है तो उसे वह सब कुछ नष्ट कर देना होगा जो उसने सभ्यता से सीखा है। रूसो का उद्‌घोष था "प्रकृति की ओर लौट चलो" (Back to Nature)। प्राचीन भारतीय शिक्षा-पद्धति के समान रूसो भी बालक को, नगरों के कृत्रिम वातावरण से दूर, प्रकृति के मनोरम प्रांगण में शिक्षित करना चाहता है।

"प्रकृति की ओर लौट चलो" से रूसो का यह भी अभिप्राय था कि बालक का विकास, उसकी नैसर्गिक प्रवृत्तियों के अनुसार होना चाहिए। रूसो बालक की शिक्षा के लिए सामाजिक आधार को स्वीकार नहीं करता था। रूसो के हृदय से निकले निम्नलिखित उद्‌गार उसके इन भावों का अच्छी प्रकार से स्पष्टीकरण करते हैं :

(i) "बालक को बालक ही समझा जाए। उसे वयस्क व्यक्तियों के कर्त्तव्यों की शिक्षा न दी जाए" (Let the Child, be a Child first Do not educate him in the duties of adults)।

(ii) "बालक एक ऐसी किताब है, जिसका प्रत्येक पृष्ठ अध्यापक ध्यान से पढ़े" (The Child is book which the teacher must read from page to page)।

शिक्षा-योजना

रूसो ने "एमील" (Emile) नामक पुस्तक में, बड़े मनोरंजक ढंग से अपनी शिक्षा-योजना प्रस्तुत की है। एमील, एक काल्पनिक विद्यार्थी है। लेखक उसकी शिक्षा के लिए प्रकृतिवादी सिद्धान्तों को अमल में लाता है। पुस्तक के पाँच भाग हैं। पहले चार भागों में, एमील की भिन्न-भिन्न

पर्क से वे दूषित हो जाती हैं" (Everything is good as it comes from the hands of the author of nature; everything degenerates in the hands of man)। रूसो के मतानुसार व्यक्ति का विकास तभी सम्भव हो सकता है जब कि वह प्रकृति की ओर लौट चले। भिन्न-भिन्न सामाजिक संस्थाएं व्यक्ति के जीवन को कृत्रिम बना देती हैं। रूसो के विचार में सभ्यता के प्रथम चरण में मनुष्य अधिक सुखी था। सभ्यता के विकास ने उसके दुःख को बढ़ा दिया है। यदि मनुष्य फिर से सुखी बनना चाहता है तो उसे वह सब कुछ नष्ट कर देना होगा जो उसने सभ्यता से सीखा है। रूसो का उद्घोष था "प्रकृति की ओर लौट चलो" (Back to Nature)। प्राचीन भारतीय शिक्षा-पद्धति के समान रूसो भी बालक को, नगरों के कृत्रिम वातावरण से दूर, प्रकृति के मनोरम प्रांगण में शिक्षित करना चाहता है।

"प्रकृति की ओर लौट चलो" से रूसो का यह भी अभिप्राय था कि बालक का विकास, उसकी नैसर्गिक प्रवृत्तियों के अनुसार होना चाहिए। रूसो बालक की शिक्षा के लिए सामाजिक आधार को स्वीकार नहीं करता था। रूसो के हृदय से निकले निम्नलिखित उद्गार उसके इन भावों का अच्छी प्रकार से स्पष्टीकरण करते हैं :

(i) "बालक को बालक ही समझा जाए। उसे व्यस्क व्यक्तियों के कर्तव्यों की शिक्षा न दी जाए" (Let the Child, be a Child first Do not educate him in the duties of adults)।

(ii) "बालक एक ऐसी किताब है, जिसका प्रत्येक पृष्ठ अध्यापक ध्यान से पढ़े" (The Child is book which the teacher must read from page to page)।

शिक्षा-योजना

रूसो ने "एमील" (Emile) नामक पुस्तक में, बड़े मनोरञ्जक ढंग से अपनी शिक्षा-योजना प्रस्तुत की है। एमील, एक काल्पनिक विद्यार्थी है। लेखक उसकी शिक्षा के लिए प्रकृतिवादी सिद्धान्तों को प्रयोग में लाता है। पुस्तक के पाँच भाग हैं। पहले चार भागों में, एमील की भिन्न-भिन्न

विकास के लिए स्वतन्त्रता, खेल, और मनोरंजक क्रियाओं का होना आवश्यक है ।

(ii) पुस्तकीय शिक्षा का अभाव (No Book Learning)—रूसो के विचार में पुस्तकें बालकों के लिए अभिशाप है । जिन बातों को हम नहीं जानते वे उनके सम्बन्ध में कोरी बातें करना सिखाती हैं ("I hate books because they are curse to children, They teach us talk only that which we do not know") इसका अर्थ यह है कि बालक जो कुछ सीखे अपने प्रयत्नों द्वारा सीखे । दूसरों का ज्ञान उस पर थोपा न जाए ।

(iii) किसी भी आदत का न होना (No Habit Formation)—रूसो बालक में कोई भी आदत नहीं डालना चाहता था ("The only habit which the child should allowed to form is to contract no habit at all"). वह बालकों को आदतों का दास नहीं बनाना चाहता था । इससे उनके स्वाभाविक विकास में बाधा पड़ती है ।

(iv) नियमित नैतिक शिक्षा का अभाव (No Direct Moral Education)—पहले यह बताया ही जा चुका है कि रूसो किसी भी प्रकार की नियमित, नैतिक, शिक्षा का विरोधी था । उसके अनुसार बालक को भूल करने दो करने दो और उसे प्राकृतिक परिणाम (Natural Consequences) भुगतने दो ।

विकास के लिए स्वतन्त्रता, खेल, और मनोरंजक क्रियाओं का होना आवश्यक है।

(ii) पुस्तकीय शिक्षा का अभाव (No Book Learning)—रूसो के विचार में पुस्तकें बालकों के लिए अभिशाप है। जिन बातों को हम नहीं जानते वे उनके सम्बन्ध में कोरी बातें करना सिखाती हैं ("I hate books because they are curse to children, They teach us talk only that which we do not know") इसका अर्थ यह है कि बालक जो कुछ सीखे अपने प्रयत्नों द्वारा सीखे। दूसरों का ज्ञान उस पर थोपा न जाए।

(iii) किसी भी आदत का न होना (No Habit Formation)—रूसो बालक में कोई भी आदत नहीं डालना चाहता था ("The only habit which the child should allowed to form is to contract no habit at all"). वह बालकों को आदतों का दास नहीं बनाना चाहता था। इससे उनके स्वाभाविक विकास में बाधा पड़ती है।

(iv) नियमित नैतिक शिक्षा का अभाव (No Direct Moral Education)—पहले यह बताया ही जा चुका है कि रूसो किसी भी प्रकार की नियमित, नैतिक, शिक्षा का विरोधी था। उसके अनुसार बालक को भूल करता है करने दो और उसे प्राकृतिक परिणाम (Natural Consequences) भुगतने दो।

(v) समाज से दूर होना (Away from Society)—प्राचीन समाज का वातावरण इतना दूषित हो गया था कि रूसो विद्यार्थी को समाज के बुरे प्रभाव से बचाने के लिए, उसकी शिक्षा, समाज से दूर, प्रकृति के प्रांगण में आयोजित करना चाहता था। इसी लिए वह 'एमील' को समाज से दूर ले जाता है।

रूसो की निषेधात्मक शिक्षा की बहुत सी बातों को आजकल के [illegible] शिक्षकों तथा मनोवैज्ञानिकों ने विधेयात्मक (positive) रूप में स्वीकार कर लिया है परन्तु आगे चल कर हम इन्हें सीमा का अतिक्रमण [illegible] कहेंगे।

था वह पुरुषो और स्त्रियों की शिक्षा मे इतना अन्तर न रखता। उसके
चारों को वर्तमान युग की तुला से तौलना उचित न होगा।

सो और नैतिक शिक्षा—

रूसो अपने छात्र 'एमील' को पन्द्रह वर्ष से पूर्व, किसी भी प्रकार की नैतिक
क्षा नही देना चाहता था। उसके मतानुसार बालक मूल्यों (Values)
शिक्षा अपने अनुभवों के आधार पर ग्रहण करे। नैतिक गुणो की शिक्षा
ह प्राकृतिक परिणामो द्वारा सीखेगा। "यदि बालक खिड़की का काच
ड़ता है तो उसे सुधारने का यत्न न किया जाए। वह दिन और रात ठन्डी
वाओ को सहन करे।" उसे अपने किये का परिणाम भुगतने दो। रूसो
सी भी प्रकार के मौखिक अभिभाषण तथा दण्ड का विरोधी है। रूसो
अनुसार बालको को किसी भी प्रकार का उपदेश नहीं करना चाहिए।
ससे हानि की ही अधिक सम्भावना है क्योंकि बालक उन शब्दों का कुछ
और ही अर्थ निकालकर भ्रम में पड़ जाएगे ("Much more than good is
one by your careless preaching moralizing and pedantry. Chil-
dren are confused by your verbiage, pervert your meaning, and
draw conclusions, directly contrary to your intent")।

बालक के गलत आचरणों का कारण, नैतिक आदर्शों की कमी न
होकर शारीरिक दुर्बलता अथवा अधिक क्रियाशीलता हो सकती है।
("when a child is bad it is because he is weak, to keep him good,
therefore, add to his power. When he destroys or hurts, it is
not because he is bad, but because his surplus a activity must
be expended.")।

अन्यथा वह पुरुषों और स्त्रियों की शिक्षा मे इतना अन्तर न रखता। उसके विचारों को वर्तमान युग की तुला से तौलना उचित न होगा।

रूसो और नैतिक शिक्षा—

रूसो अपने छात्र 'एमील' को पन्द्रह वर्ष से पूर्व, किसी भी प्रकार की नैतिक शिक्षा नही देना चाहता था। उसके मतानुसार बालक मूल्यों (Values) की शिक्षा अपने अनुभवों के आधार पर ग्रहण करे। नैतिक गुणों की शिक्षा वह प्राकृतिक परिणामों द्वारा सीखेगा। "यदि बालक खिड़की का कांच तोड़ता है तो उसे सुधारने का यत्न न किया जाए। वह दिन और रात ठण्डी हवाओं को सहन करे।" उसे अपने किये का परिणाम भुगतने दो। रूसो किसी भी प्रकार के मौखिक अभिभाषण तथा दण्ड का विरोधी है। रूसो के अनुसार बालकों को किसी भी प्रकार का उपदेश नहीं करना चाहिए। इससे हानि की ही अधिक सम्भावना है क्योंकि बालक उन शब्दों का कुछ और ही अर्थ निकालकर भ्रम मे पड़ जाएगे ("Much more than good is done by your careless preaching moralizing and pedantry. Children are confused by your verbiage, pervert your meaning, and draw conclusions, directly contrary to your intent")।

बालक के गलत आचरणों का कारण, नैतिक आदर्शों की कमी न होकर शारीरिक दुर्बलता अथवा अधिक क्रियाशीलता हो सकती है। (when a child is bad it is because he is weak, to keep him good, therefore, add to his power. When he destroys or hurts, it is not because he is bad, but because his surplus a activity must be expended.")।

"पन्द्रह वर्ष की अवस्था मे "एमील" को नैतिक शिक्षा प्रदान की जाएगी। उसके व्यक्तित्व का विकास हो चुका है। अब उस मे सामाजिक भाव भरे जाएंगे। परन्तु यहाँ भी बालक को किसी प्रकार का उपदेश नहीं दिया जाएगा। उसमें सहानुभूति, दया, प्रेम, त्याग आदि की भावनाएं विकसित करने के लिए उसका परिचय, अस्पतालों, जेलखानों, अनाथालयों तथा ऐतिहासिक रचनाओं से कराया जाएगा। उसे ठगों, चोरों, चापलूसों, व

अन्यथा वह पुरुषों और स्त्रियों की शिक्षा में इतना अन्तर न रखता। उसके विचारों को वर्तमान युग की तुला से तोलना उचित न होगा।

रूसो और नैतिक शिक्षा—

रूसो अपने छात्र 'एमील' को पन्द्रह वर्ष से पूर्व, किसी भी प्रकार की नैतिक शिक्षा नहीं देना चाहता था। उसके मतानुसार बालक मूल्यों (Values) की शिक्षा अपने अनुभवों के आधार पर ग्रहण करे। नैतिक गुणों की शिक्षा वह प्राकृतिक परिणामों द्वारा सीखेगा। "यदि बालक खिड़की का कांच तोड़ता है तो उसे सुधारने का यत्न न किया जाए। वह दिन और रात ठण्डी हवाओं को सहन करे।" उसे अपने किये का परिणाम भुगतने दो। रूसो किसी भी प्रकार के मौखिक अभिभाषण तथा दण्ड का विरोधी है। रूसो के अनुसार बालकों को किसी भी प्रकार का उपदेश नहीं करना चाहिए। इससे हानि की ही अधिक सम्भावना है क्योंकि बालक उन शब्दों का कुछ और ही अर्थ निकालकर भ्रम में पड़ जाएगें ("Much more than good is done by your careless preaching moralizing and pedantry. Children are confused by your verbiage, pervert your meaning, and draw conclusions, directly contrary to your intent")।

बालक के गलत आचरणों का कारण, नैतिक आदर्शों की कमी न होकर, शारीरिक दुर्बलता अथवा अधिक क्रियाशीलता हो सकती है। ("When a child is bad it is because *he is weak, to keep him good,* therefore, add to his power - When he destroys or hurts, it is not because he is bad, but because his surplus a activity must be expended,")।

पन्द्रह वर्ष की अवस्था में "एमील" को नैतिक शिक्षा प्रदान की जाएगी। उसके व्यक्तित्व का विकास हो चुका है। अब उस में सामाजिक भाव भरे जाएंगे। परन्तु यहाँ भी बालक को किसी प्रकार का उपदेश नहीं किया जाएगा। उसमें सहानुभूति, दया, प्रेम, त्याग आदि की भावनाएं विकसित करने के लिए उसका परिचय, अस्पतालों, जेलखानों, अनाथालयों तथा साहित्यिक रचनाओं से कराया जाएगा। उसे ठगों, चोरों, चापलूसों, प

अन्यथा वह पुरुषों और स्त्रियों की शिक्षा में इतना अन्तर न रखता। उसके विचारों को वर्तमान युग की तुला से तोलना उचित न होगा।

रूसो और नैतिक शिक्षा—

रूसो अपने छात्र 'एमील' को पन्द्रह वर्ष से पूर्व, किसी भी प्रकार की नैतिक शिक्षा नहीं देना चाहता था। उसके मतानुसार बालक मूल्यों (Values) की शिक्षा अपने अनुभवों के आधार पर ग्रहण करे। नैतिक गुणों की शिक्षा वह प्राकृतिक परिणामों द्वारा सीखेगा। "यदि बालक खिड़की का कांच तोड़ता है तो उसे सुधारने का यत्न न किया जाए। वह दिन और रात ठण्डी हवाओं को सहन करे।" उसे अपने किये का परिणाम भुगतने दो। रूसो किसी भी प्रकार के मौखिक अभिभाषण तथा दण्ड का विरोधी है। रूसो के अनुसार बालकों को किसी भी प्रकार का उपदेश नहीं करना चाहिए। इसमें हानि की ही अधिक सम्भावना है क्योंकि बालक उन शब्दों का कुछ और ही अर्थ निकालकर भ्रम में पड़ जाएंगे ("Much more than good is done by your careless preaching moralizing and pedantry. Children are confused by your verbiage, pervert your meaning, and draw conclusions, directly contrary to your intent")।

बालक के गलत आचरणों का कारण, नैतिक आदर्शों की कमी न होकर शारीरिक दुर्बलता अथवा अधिक क्रियाशीलता हो सकती है। ("When a child is bad it is because he is weak, to keep him good, therefore, add to his power - When he destroys or hurts, it is not because he is bad, but because his surplus a activity must be expended,")।

पन्द्रह वर्ष की अवस्था में "एमील" को नैतिक शिक्षा प्रदान की जाएगी। उसके व्यक्तित्व का विकास हो चुका है। अब उस में सामाजिक भाव भरे जाएंगे। परन्तु यहाँ भी बालक को किसी प्रकार का उपदेश नहीं किया जाएगा। उसमें सहानुभूति, दया, प्रेम, त्याग आदि की भावनाएं विकसित करने के लिए उसका परिचय, अस्पतालों, जेलखानों, अनाथालयों तथा साहित्यिक रचनाओं से कराया जाएगा। उसे ठगों, चोरों, खूनियों, पर

विकास के लिए स्वतन्त्रता, खेल, और मनोरंजक क्रियाओं का होना आवश्यक है।

(ii) पुस्तकीय शिक्षा का अभाव (No Book Learning)—रूसो के विचार में पुस्तकें बालकों के लिए अभिशाप हैं। जिन बातों को हम नहीं जानते वे उनके सम्बन्ध में कोरी बातें करना सिखाती हैं ("I hate books becouse they are curse to children, They teach us talk only that which we do not know") इसका अर्थ यह है कि बालक को कुछ सीखे अपने प्रयत्न द्वारा सीखे। दूसरों का ज्ञान उस पर थोपा न जाए।

(iii) किसी भी आदत का न होना (No Habit Formation)—रूसो बालक में कोई भी आदत नहीं डालना चाहता था ("The only habit which the child should allowed to form is to contract no habit at all") वह बालकों को आदतों का दास नहीं बनाना चाहता था। इससे उनके स्वाभाविक विकास में बाधा पड़ती है।

(iv) नियमित नैतिक शिक्षा का अभाव (No Direct Moral Education)—पहले यह बताया ही जा चुका है कि रूसो किसी भी प्रकार की नियमित, नैतिक, शिक्षा का विरोधी था। उसके अनुसार बालक जो कुछ करता है करने दो और उसे प्राकृतिक परिणाम (Natural Consequences) भुगतने दो।

(v) समाज से दूर होना (Away from Society)—फ्रांसीसी समाज का वातावरण इतना दूषित हो गया था कि रूसो विद्यार्थी को समाज के बुरे प्रभाव से बचाने के लिए, उसकी शिक्षा, समाज से दूर, प्रकृति के प्रांगण में आयोजित करना चाहता था। इसी लिए वह 'एमील' को समाज से दूर ले जाता है।

रूसो की निषेधात्मक शिक्षा की बहुत सी बातों को आजकल के शिक्षा-शास्त्रियों तथा मनोवैज्ञानिकों ने विधेयात्मक (positive) रूप में स्वीकार कर लिया है परन्तु अपने मूल रूप में हम इन्हें सीमा का अतिक्रमण कह सकते हैं।

विकास के लिए स्वतन्त्रता, खेल, और मनोरंजक क्रियाओं का होना आवश्यक है।

(ii) पुस्तकीय शिक्षा का अभाव (No Book Learning)—रूसो के विचार में पुस्तकें बालकों के लिए अभिशाप हैं। जिन बातों को हम नहीं जानते वे उनके सम्बन्ध में कोरी बातें करना सिखाती हैं ("I late books becouse they are curse to children, They teach us talk only that which we do not know") इसका अर्थ यह है कि बालक को कुछ सीखे अपने प्रयत्नों द्वारा सीखे। दूसरों का ज्ञान उस पर थोपा न जाए।

(iii) किसी भी आदत का न होना (No Habit Formation)—रूसो बालक में कोई भी आदत नहीं डालना चाहता था ("The only habit which the child should allowed to form is to contract no habit at all") वह बालकों को आदतों का दास नहीं बनाना चाहता था। इससे उनके स्वाभाविक विकास में बाधा पड़ती है।

(iv) नियमित नैतिक शिक्षा का अभाव (No Direct Moral Education)—पहले यह बताया ही जा चुका है कि रूसो किसी भी प्रकार की नियमित, नैतिक, शिक्षा का विरोधी था। उसके अनुसार बालक जो कुछ करता है करने दो और उसे प्राकृतिक परिणाम (Natural Consequences) भुगतने दो।

(v) समाज से दूर होना (Away from Society)—फ्रांसीसी समाज का वातावरण इतना दूषित हो गया था कि रूसो विद्यार्थी को समाज के बुरे प्रभाव से बचाने के लिए, उसकी शिक्षा, समाज से दूर, प्रकृति के प्रांगण में आयोजित करना चाहता था। इसी लिए वह 'एमील' को समाज से दूर ले जाता है।

रूसो की निषेधात्मक शिक्षा की बहुत सी बातों को आजकल के शिक्षा-शास्त्रियों तथा मनोवैज्ञानिकों ने विधेयात्मक (positive) रूप में स्वीकार कर लिया है परन्तु अपने मूल रूप में हम इन्हें सीमा का अतिक्रमण कह सकते हैं।

प्रभावोत्पादकता, परिपक्वता तथा आकर्षण के दर्शन होते हैं। वह सदा
ता की ओर अग्रगामी होता है। उसमें शान्ति है, स्नेह है। इस प्रकार
पूर्ण रूप से आदर्शवादी भावनाओं का प्रतीक है।

आदर्शवाद और अध्यापक

प्रकृतिवाद, अध्यापक की आवश्यकता का अनुभव नहीं करता परन्तु
आदर्शवाद में अध्यापक का स्थान बहुत ऊंचा है। अध्यापक और विद्यार्थी
दोनों मिलकर उद्देश्य की पूर्ति में सलग्न होते हैं। और वह उद्देश्य है बालक
के व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण विकास करना। आत्मज्ञान, आत्म-निर्देशन, आत्म-
क्रियाशीलता, आन्तरिक-आध्यात्मिक विकास आदि उपकरण, अध्यापक को
बहुत प्रिय हैं। अपने इन गुणों का प्रभाव वह बालक पर डालता है। विद्यार्थी
उसके निर्देशन में, उसके जीवन से शिक्षा ग्रहण करता हुआ, अपने विकास को
परिपूर्ण बनाने का यत्न करता है।

फ्रोबेल ने एक उदाहरण द्वारा आदर्शवादी अध्यापक के कार्य को बड़े
सुन्दर ढङ्ग से पेश किया है। उसके विचारानुसार पाठशाला एक उद्यान है।
अध्यापक एक माली है और बालक एक पौदा। पौदे का विकास ठीक प्रकार
से हो सके, उसके लिए आवश्यक है कि माली ठीक-ठीक वातावरण प्रस्तुत
करे जैसे पौदे को पानी तथा खाद देना, उसे धूप, सर्दी आदि से बचाना।
अध्यापक भी माली के समान बालक के लिए ऐसा वातावरण प्रस्तुत करता है
कि उसका सभी दृष्टियों से सम्यक विकास हो सके।

आदर्शवाद और पाठ्यक्रम

आदर्शवादी पाठ्यक्रम में, विद्यार्थी के भौतिक, बौद्धिक, मानसिक तथा
आध्यात्मिक विकास को ध्यान में रखा जाता है। प्लेटो के अनुसार हमारे
जीवन का परम लक्ष्य है पूर्णता या ब्रह्म की प्राप्ति। पाठ्यक्रम भी हमें इस
पूर्णता की प्राप्ति में सफलता प्रदान करे। पूर्णता के लिए हमें जिन मूल्यों की
आवश्यकता होगी वे हैं, सत्य, शिवं, सुन्दरं। यह मूल्य जिन मानवीय क्रियाओं
को शामिल करेंगे वे हैं बौद्धिक, नैतिक तथा सौंदर्यपरक। बौद्धिक क्रियाओं
(...ectual activities) के लिए हमें निम्नलिखित विषयों का

प्रभावोत्पादकता, परिपक्वता तथा आकर्षण के दर्शन होते हैं। वह सदा पूर्णता की ओर अग्रगामी होता है। उसमें शान्ति है, स्नेह है। इस प्रकार वह पूर्ण रूप से आदर्शवादी भावनाओं का प्रतीक है।

आदर्शवाद और अध्यापक

प्रकृतिवाद, अध्यापक की आवश्यकता को अनुभव नहीं करता परन्तु आदर्शवाद में अध्यापक का स्थान बहुत ऊंचा है। अध्यापक और विद्यार्थी दोनों मिलकर उद्देश्य की पूर्ति में सलग्न होते हैं। और वह उद्देश्य है बालक के व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण विकास करना। आत्मज्ञान, आत्म-निर्देशन, आत्म-क्रियाशीलता, आन्तरिक-आध्यात्मिक विकास आदि उपकरण, अध्यापक को बहुत प्रिय हैं। अपने इन गुणों का प्रभाव वह बालक पर डालता है। विद्यार्थी उसके निर्देशन में, उसके जीवन से शिक्षा ग्रहण करता हुआ, अपने विकास को परिपूर्ण बनाने का यत्न करता है।

फ्रोबेल ने एक उदाहरण द्वारा आदर्शवादी अध्यापक के कार्य को बड़े सुन्दर ढङ्ग से पेश किया है। उसके विचारानुसार पाठशाला एक उद्यान है। अध्यापक एक माली है और बालक एक पौदा। पौदे का विकास ठीक प्रकार से हो सके, उसके लिए आवश्यक है कि माली ठीक-ठीक वातावरण प्रस्तुत करे जैसे पौदे को पानी तथा खाद देना, उसे धूप, सर्दी आदि से बचाना। अध्यापक भी माली के समान बालक के लिए ऐसा वातावरण प्रस्तुत करता है कि उसका सभी दृष्टियों से सम्यक विकास हो सके।

आदर्शवाद और पाठ्यक्रम

आदर्शवादी पाठ्यक्रम में, विद्यार्थी के भौतिक, बौद्धिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास को ध्यान में रखा जाता है। प्लेटो के अनुसार हमारे जीवन का परम लक्ष्य है पूर्णता या ब्रह्म की प्राप्ति। पाठ्यक्रम भी हमें इस पूर्णता की प्राप्ति में सफलता प्रदान करे। पूर्णता के लिए हमें जिन मूल्यों की आवश्यकता होगी वे हैं, सत्य, शिवं, सुन्दरं। यह मूल्य जिन मानवीय क्रियाओं को शामिल करेंगे वे हैं बौद्धिक, नैतिक तथा सौन्दर्यपरक। बौद्धिक क्रियाओं (Intellectual activities) के लिए हमें निम्नलिखित विषयों का

वादी अनुशासन को प्रभावात्मक अनुशासन (Impressionistic discipline) कह सकते हैं।

आदर्शवाद और शिक्षा के उद्देश्य

प्लेटो (Plato) के अनुसार "शिक्षा का उद्देश्य है, शरीर और आत्मा को पूर्णता प्रदान करना" ("Education consists in giving to the body and the soul all the perfection of which they are susceptible.")।

फ्रोबेल (Froebel) के विचार में इस भूमण्डल पर जितनी भी वस्तुएँ हैं उन सब में दैवी एकता है। यही एकता ब्रह्म (God) है। शिक्षा का कार्य है मानव को इस बात के लिए प्रेरित करना कि उसमें और प्रकृति की भिन्न वस्तुओं में जो दैवी एकता है उस दैवी एकता को समझ कर उसके साथ एकाकार हो सके ("In all things there lives and reigns an eternal law This all pervading law is based on eternal Unity. This Unity is God Education should lead and guide man to face with nature and to Unity with God.")

यजुर्वेद के अनुसार "विद्ययाऽमृतमश्नुते"। विद्या अमरता अथवा कैवल्य की ओर ले जाती है। यही अन्तिम साध्य है।

केनोपनिषद् में कहा गया है "विद्यया विन्दतेऽमृतम्" अर्थात् विद्या से अमरत्व की प्राप्ति होती है।

श्रीमद् भगवद्गीता का भी यह मर्म है—"सा विद्या या विमुक्तये"।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि आदर्शवाद के अनुसार शिक्षा का चरम लक्ष्य है व्यक्ति के सर्वाङ्गीण विकास के द्वारा आत्म-ज्ञान की प्राप्ति जिसमें कि वह ब्रह्म के साथ आत्म साक्षात्कार करता हुआ, अपने को उसी का ही रूप समझ सके। हार्न (Horne) ने भी इसी भाव को इन शब्दों में प्रकट किया है:—

"Education in the final analysis is the upbuilding of humanity in the image of Divinity"

आदर्शवाद और शिक्षण विधियाँ

शिक्षण विधि के सम्बन्ध में आदर्शवाद को किसी विशेष विधि से मोह नहीं है। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए कोई भी विधि अपनाई जा सकती है।

वादी अनुशासन को प्रभावात्मक अनुशासन (Impressionistic discipline) कह सकते हैं।

आदर्शवाद और शिक्षा के उद्देश्य

प्लेटो (Plato) के अनुसार "शिक्षा का उद्देश्य है, शरीर और आत्मा को पूर्णता प्रदान करना" ("Education consists in giving to the body and the soul all the perfection of which they are susceptible.")।

फ्रोबेल (Froebel) के विचार मे इस भूमण्डल पर जितनी भी वस्तुएँ हैं उन सब मे दैवी एकता है। यही एकता ब्रह्म (God) है। शिक्षा का कार्य है मानव को इस बात के लिए प्रेरित करना कि उसमे और प्रकृति की भिन्न वस्तुओं में जो दैवी एकता है उस दैवी एकता को समझ कर उसके साथ एकाकार हो सके ("In all things there lives and reigns an eternal law. This all pervading law is based on eternal Unity. This Unity is God. Education should lead and guide man to face with nature and to Unity with God.")

यजुर्वेद के अनुसार "विद्ययाऽमृतमश्नुते"। विद्या अमरता अथवा कैवल्य की ओर ले जाती है। यही अन्तिम साध्य है।

केनोपनिषद् मे कहा गया है "विद्यया विन्दतेऽमृतम्" अर्थात् विद्या से अमरत्व की प्राप्ति होती है।

श्रीमद् भगवद्गीता का भी यह मर्म है—"सा विद्या या विमुक्तये"।

संक्षेप मे हम कह सकते हैं कि आदर्शवाद के अनुसार शिक्षा का चरम लक्ष्य है व्यक्ति के सर्वाङ्गीण विकास के द्वारा आत्म-ज्ञान की प्राप्ति जिसमे कि वह ब्रह्म के साथ आत्म साक्षात्कार करता हुआ, अपने को उसी का ही रूप समझ सके। हार्न (Horne) ने भी इसी भाव को इन शब्दों मे प्रकट किया है:—

"Education in the final analysis is the upbuilding of humanity in the image of Divinity."

आदर्शवाद और शिक्षण विधियाँ

शिक्षण विधि के सम्बन्ध मे आदर्शवाद को किसी विशेष विधि से मोह नहीं है। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए कोई भी विधि अपनाई जा सकती है।

सी अपनाई जाएगी, इसका निर्णय, शिक्षार्थी की योग्यता, रुचि, क्षमता तथा उसके वातावरण के आधार पर ही किया जाएगा।

Q. 39 Compare and contrast Naturalism Idealism and pragmatism as regards the aims, curriculum, discipline, methods and the position of the teacher.

(प्रकृतिवाद, आदर्शवाद तथा व्यवहारवाद का तुलनात्मक विवेचन करते हुए स्पष्ट कीजिए कि इन तीनों ने शिक्षा के उद्देश्यों, पाठ्यक्रम, अनुशासन, शिक्षण-विधियों तथा शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापक के सम्बन्ध में क्या सुझाव दिए हैं ?)

उत्तर—पिछले कुछ पृष्ठों मे, अलग-अलग रूप से, इस बात का विस्तार-पूर्वक उत्तर दिया जा चुका है कि शिक्षा के उद्देश्यों, शिक्षा के लिए पाठ्यक्रम, अनुशासन, शिक्षण-प्रविधियों तथा शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापक के सम्बन्ध मे प्रकृतिवाद, व्यवहारवाद तथा आदर्शवाद की क्या-क्या मान्यताएँ हैं। इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए केवल इतना करना होगा कि इन समस्याओं के सम्बन्ध मे तीनों विचार धाराओं को दृष्टि से एक साथ विचार किया जाए और अन्तिम निष्कर्ष के रूप मे अपने विचार देदिए जायें। हार्न (Horne) ने अपना निर्णय इन शब्दों मे दिया है—"हमारे विचार मे व्यवहारवाद जो मानव केन्द्रित है, प्रकृतिवाद से उत्तम है क्योंकि उसमे मानवीय क्रियाशीलता को स्वीकार किया गया है। आदर्शवाद जो आत्मा पर आधारित है, व्यवहारवाद से उत्तम है क्योंकि वह क्रियाशीलता के साथ-साथ पूर्ण मन और मानव के व्यक्तित्व को भी बनाये रखना है" (In our own judgment pragmatism, centering in man is better than naturalism because it saves man's creativity, and idealism centering in spirit is better than pragmatism because in addition, to creativity, it seves both the absolute mind and the human personality.)।

सी अपनाई जाएगी, इसका निर्णय, शिक्षार्थी की योग्यता, रुचि, क्षमता तथा उसके वातावरण के आधार पर ही किया जाएगा।

Q. 39 Compare and contrast Naturalism Idealism and pragmatism as regards the aims, curriculum, discipline, methods and the position of the teacher.

(प्रकृतिवाद, आदर्शवाद तथा व्यवहारवाद का तुलनात्मक विवेचन करते हुए स्पष्ट कीजिए कि इन तीनों ने शिक्षा के उद्देश्यों, पाठ्यक्रम, अनुशासन, शिक्षण-विधियों तथा शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापक के सम्बन्ध में क्या सुझाव दिए हैं ?)

उत्तर—पिछले कुछ पृष्ठों मे, अलग-अलग रूप से, इस बात का विस्तार-पूर्वक उत्तर दिया जा चुका है कि शिक्षा के उद्देश्यों, शिक्षा के लिए पाठ्यक्रम, अनुशासन, शिक्षण-प्रविधियों तथा शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापक के सम्बन्ध मे प्रकृतिवाद, व्यवहारवाद तथा आदर्शवाद की क्या-क्या मान्यताएँ हैं। इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए केवल इतना करना होगा कि इन समस्याओं के सम्बन्ध मे तीनों विचार धाराओं की दृष्टि से एक साथ विचार किया जाए और अन्तिम निष्कर्ष के रूप मे अपने विचार देदिए जायें। हार्न (Horne) ने अपना निर्णय इन शब्दों में दिया है—"हमारे विचार मे व्यवहारवाद जो मानव केन्द्रित है, प्रकृतिवाद से उत्तम है क्योंकि उसमे मानवीय क्रियाशीलता को स्वीकार किया गया है। आदर्शवाद जो आत्मा पर आधारित है, व्यवहारवाद से उत्तम है क्योंकि वह क्रियाशीलता के साथ-साथ पूर्ण मन और मानव के व्यक्तित्व को भी बनाये रखता है" (In our own judgment pragmatism, centering in man is better than naturalism because it saves man's creativity, and idealism centering in spirit is better than pragmatism because in addition, to creativity, it seves both the absolute mind and the human personality.)।

पर श्रमिक वर्ग की यह माँग है कि काम करने का समय (working hours) कम किया जाए। आज इङ्गलैंड जैसे उन्नत देशों में श्रमिक वर्ग को सप्ताह में केवल पाँच दिन ही काम करना पड़ता है। जैसे-जैसे औद्योगिक प्रगति होगी, वैसे-वैसे अवकाश का समय भी बढ़ता जायगा। इस औद्योगिक सभ्यता (Industrial civilization) की एक समस्या यह भी है कि इस अवकाश के समय का उपयोग किस प्रकार किया जाए।

ठीक यही स्थिति आज पाठशाला में भी है। जिस प्रकार कारखाने में काम करने वाला व्यक्ति, अपने कार्य से सन्तुष्ट न होकर और अवकाश चाहता है, उसी प्रकार एक विद्यार्थी भी अपनी पढ़ाई (studies) से सन्तुष्ट नहीं। आज की सारी शिक्षा शाब्दिक है। वह केवल पुस्तकों पर आधारित है। उसका जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं। शिक्षा पद्धति का पूरा बल परीक्षा पास करने पर है। परीक्षा में उत्तीर्ण होना, यही शिक्षा का उद्देश्य रह गया है। पाठान्तर क्रियाओं (Extra-curricular activities) में भाग लेना, समय का विनाश, गिना जाता है।

बालक के सर्वाङ्गीण विकास के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसकी भिन्न-भिन्न रुचियाँ (many-sided intererats) विकसित की जाएँ। इसके लिए आवश्यक है कि पढ़ाई के अतिरिक्त बालक के पास काफी समय ऐसा हो जिसमें भिन्न-भिन्न रोचक कार्यों की व्यवस्था की जा सके। आजकल के प्रगतिशील विद्यालयों (progressive schools) में, इस बात की ओर पूरा-पूरा ध्यान दिया जाता है।

अवकाश के लिए शिक्षा (Education for leisure) से हमारा तात्पर्य यह है कि बालक अवकाश के समय का उपयोग उचित तथा सन्तोषप्रद रीति से कर सके। अवकाश के समय में कुछ मनोरंजक क्रियाओं का आयोजन कर देना ही यथेष्ट नहीं। इन क्रियाओं का रचनात्मक तथा शिक्षा सम्बन्धी महत्व भी होना चाहिए। आज शिक्षा का अर्थ व्यापक रूप में ग्रहण किया जाता है। कक्षा-गृह में दी जाने वाली शिक्षा को ही केवल शिक्षा नहीं समझा जाता। जन्म से लेकर मृत्यु तक, काम के समय में अथवा अवकाश के समय में की जाने वाली प्रत्येक क्रिया हमें किसी न किसी रूप में शिक्षा

पर श्रमिक वर्ग की यह माँग है कि काम करने का समय (working hours) कम किया जाए। आज इङ्गलैंड जैसे उन्नत देशों में श्रमिक वर्ग को सप्ताह में केवल पाँच दिन ही काम करना पड़ता है। जैसे-जैसे औद्योगिक प्रगति होगी, वैसे-वैसे अवकाश का समय भी बढ़ता जायगा। इस औद्योगिक सभ्यता (Industrial civilization) की एक समस्या यह भी है कि इस अवकाश के समय का उपयोग किस प्रकार किया जाए।

ठीक यही स्थिति आज पाठशाला में भी है। जिस प्रकार कारखाने में काम करने वाला व्यक्ति, अपने कार्य से सन्तुष्ट न होकर और अवकाश चाहता है, उसी प्रकार एक विद्यार्थी भी अपनी पढ़ाई (studies) से सन्तुष्ट नहीं। आज की सारी शिक्षा शाब्दिक है। वह केवल पुस्तकों पर आधारित है। उसका जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं। शिक्षा पद्धति का पूरा बल परीक्षा पास करने पर है। परीक्षा में उत्तीर्ण होना, यही शिक्षा का उद्देश्य रह गया है। पाठान्तर क्रियाओं (Extra-curricular activities) में भाग लेना, समय का विनाश, गिना जाता है।

बालक के सर्वाङ्गीण विकास के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसकी भिन्न-भिन्न रुचियाँ (many-sided interests) विकसित की जाएँ। इसके लिए आवश्यक है कि पढ़ाई के अतिरिक्त बालक के पास काफी समय ऐसा हो जिसमें भिन्न-भिन्न रोचक कार्यों की व्यवस्था की जा सके। आजकल के प्रगतिशील विद्यालयों (progressive schools) में, इस बात की ओर पूरा-पूरा ध्यान दिया जाता है।

अवकाश के लिए शिक्षा (Education for leisure) से हमारा तात्पर्य यह है कि बालक अवकाश के समय का उपयोग उचित तथा सन्तोषप्रद रीति से कर सके। अवकाश के समय में कुछ मनोरंजक क्रियाओं का आयोजन कर देना ही यथेष्ट नहीं। इन क्रियाओं का रचनात्मक तथा शिक्षा सम्बन्धी महत्व भी होना चाहिए। आज शिक्षा का अर्थ व्यापक रूप में ग्रहण किया जाता है। कक्षा-गृह में दी जाने वाली शिक्षा को ही केवल शिक्षा नहीं समझा जाता। जन्म से लेकर मृत्यु तक, काम के समय में अथवा अवकाश के समय में की जाने वाली प्रत्येक क्रिया हमें किसी न किसी रूप में शिक्षा

कहा जाता है। राज्य का सदस्य होने के कारण व्यक्ति को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं—

सामाजिक अधिकार

(i) जीवन का अधिकार (Right of life)
(ii) सम्पत्ति का अधिकार
(iii) भाषण देने का तथा समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता का अधिकार
(iv) कानून की दृष्टि में समानता का अधिकार
(v) व्यवसाय की स्वतन्त्रता का अधिकार
(vi) शिक्षा का अधिकार
(vii) संस्थाओं के निर्माण (Freedom of association) का अधिकार
(viii) परम्परागत जीवन व्यतीत करने का अधिकार

राजनैतिक अधिकार

(i) मत देने का अधिकार
(ii) पद ग्रहण करने का अधिकार
(iii) न्याय सम्बन्धी अधिकार

अधिकारों और कर्त्तव्य का बड़ा निकट का सम्बन्ध है। अधिकार का बोध होने से कर्त्तव्य का भी बोध हो जाता है। हमारे कुछ अधिकार हैं, इस का तात्पर्य यह है कि अन्य लोगों का अधिकार, हमारे अधिकारों में बाधा न पहुँचाएँ। यह देखना राज्य का काम है कि दूसरे लोग हमारे अधिकारों में हस्तक्षेप न करें। हमें कुछ अधिकार प्राप्त हैं, इसका अर्थ यह भी है कि हमारे कुछ कर्त्तव्य भी हैं। जिस प्रकार हमें कुछ अधिकार प्राप्त हैं, प्रकार दूसरों को भी। हमारा पहला कर्त्तव्य यह है कि हम ऐसा कोई न करें, जिससे दूसरों के अधिकारों में रुकावट पड़े। दूसरे कोई भी अकेला रह कर अधिकारों का उपभोग नहीं कर सकता। यदि। उपभोग समाज में ही रह कर हो सकता है। इसीलिए हमारा यह

कहा जाता है। राज्य का सदस्य होने के कारण व्यक्ति को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं—

सामाजिक अधिकार

(i) जीवन का अधिकार (Right of life)
(ii) सम्पत्ति का अधिकार
(iii) भाषण देने का तथा समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता का अधिकार
(iv) कानून की दृष्टि में समानता का अधिकार
(v) व्यवसाय की स्वतन्त्रता का अधिकार
(vi) शिक्षा का अधिकार
(vii) संस्थाओं के निर्माण (Freedom of association) का अधिकार
(viii) परम्परागत जीवन व्यतीत करने का अधिकार

राजनैतिक अधिकार

(i) मत देने का अधिकार
(ii) पद ग्रहण करने का अधिकार
(iii) न्याय सम्बन्धी अधिकार

अधिकारों और कर्त्तव्य का बड़ा निकट का सम्बन्ध है। अधिकार का बोध होने से कर्त्तव्य का भी बोध हो जाता है। हमारे कुछ अधिकार हैं, इस का तात्पर्य यह है कि अन्य लोगों का अधिकार, हमारे अधिकारों में बाधा न पहुँचाएँ। यह देखना राज्य का काम है कि दूसरे लोग हमारे अधिकारों में हस्तक्षेप न करें। हमें कुछ अधिकार प्राप्त हैं, इसका अर्थ यह भी है कि हमारे कुछ कर्त्तव्य भी हैं। जिस प्रकार हमें कुछ अधिकार प्राप्त हैं, प्रकार दूसरों को भी। हमारा पहला कर्त्तव्य यह है कि हम ऐसा कोई न करें, जिससे दूसरों के अधिकारों में रुकावट पड़े। दूसरे कोई भी अकेला रह कर अधिकारों का उपभोग नहीं कर सकता। यदि। उपभोग समाज में ही रह कर हो सकता है। इसीलिए हमारा यह

कहा जाता है। राज्य का सदस्य होने के कारण व्यक्ति को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं—

सामाजिक अधिकार

(i) जीवन का अधिकार (Right of life)
(ii) सम्पत्ति का अधिकार
(iii) भाषण देने का तथा समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता का अधिकार
(iv) कानून की दृष्टि में समानता का अधिकार
(v) व्यवसाय की स्वतन्त्रता का अधिकार
(vi) शिक्षा का अधिकार
(vii) सस्थाओं के निर्माण (Freedom of association) का अधिकार
(viii) परम्परागत जीवन व्यतीत करने का अधिकार

राजनैतिक अधिकार

(i) मत देने का अधिकार
(ii) पद ग्रहण करने का अधिकार
(iii) न्याय सम्बन्धी अधिकार

अधिकारों और कर्त्तव्य का बड़ा निकट का सम्बन्ध है। अधिकार क बोध होने से कर्त्तव्य का भी बोध हो जाता है। हमारे कुछ अधिकार हैं, इ का तात्पर्य यह है कि अन्य लोगों का अधिकार, हमारे अधिकारों में बाधा पहुँचाएं। यह देखना राज्य का कार्य है कि दूसरे लोग हमारे अधिकारों हस्तक्षेप न करें। हमें कुछ अधिकार प्राप्त हैं, इसका अर्थ यह भी है हमारे कुछ कर्त्तव्य भी हैं। जिस प्रकार हमें कुछ अधिकार प्राप्त है, इ प्रकार दूसरों को भी। हमारा पहला कर्त्तव्य यह है कि हम ऐसा कोई क न करें, जिससे दूसरों के अधिकारों में रुकावट पड़े। दूसरे कोई भी व्यि अकेला रह कर अधिकारों का उपभोग नहीं कर सकता। अधिकारों उपभोग समाज में ही रह कर हो सकता है। इसीलिए हमारा यह कर्त्त

कहा जाता है। राज्य का सदस्य होने के कारण व्यक्ति को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं—

सामाजिक अधिकार

(i) जीवन का अधिकार (Right of life)
(ii) सम्पत्ति का अधिकार
(iii) भाषण देने का तथा समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता का अधिकार
(iv) कानून की दृष्टि में समानता का अधिकार
(v) व्यवसाय की स्वतन्त्रता का अधिकार
(vi) शिक्षा का अधिकार
(vii) संस्थाओं के निर्माण (Freedom of association) का अधिकार
(viii) परम्परागत जीवन व्यतीत करने का अधिकार

राजनैतिक अधिकार

(i) मत देने का अधिकार
(ii) पद ग्रहण करने का अधिकार
(iii) न्याय सम्बन्धी अधिकार

अधिकारों और कर्त्तव्य का बड़ा निकट का सम्बन्ध है। अधिकार का बोध होने से कर्त्तव्य का भी बोध हो जाता है। हमारे कुछ अधिकार हैं, इस का तात्पर्य यह है कि अन्य लोगों का अधिकार, हमारे अधिकारों में बाधा न पहुँचाएँ। यह देखना राज्य का कार्य है कि दूसरे लोग हमारे अधिकारों में हस्तक्षेप न करें। हमें कुछ अधिकार प्राप्त हैं, इसका अर्थ यह भी है कि हमारे कुछ कर्त्तव्य भी हैं। जिस प्रकार हमें कुछ अधिकार प्राप्त है, इसी प्रकार दूसरों को भी। हमारा पहला कर्त्तव्य यह है कि हम ऐसा कोई कार्य न करें, जिससे दूसरों के अधिकारों में रुकावट पड़े। दूसरे कोई भी व्यक्ति अकेला रह कर अधिकारों का उपभोग नहीं कर सकता। अधिकारों का उपभोग समाज में ही रह कर हो सकता है। इसीलिए हमारा यह कर्त्तव्य

(ग) नागरिकता के गुण उत्पन्न करने के लिए पाठशालाओं में ऐसी क्रियाओं का आयोजन, जिनमें सामाजिक आदान प्रदान हो।

(घ) नेतृत्व के उचित अवसर प्रदान करना।

(क) कक्षा-गृहों में यदि बालकों को ऐसे सामाजिक उत्तरदायित्व वहन करने का अवसर प्राप्त होता है, जिन मे वे मिलकर काम करें तो इस के द्वारा प्रारम्भिक सामाजिक मूल्यों का भली भांति विकास किया जा सकता है। इस समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए अध्यापकों तथा बालकों को मिल कर सहयोग की भावना से काम करना होगा। कक्षा के प्रत्येक बालक को अपनी अवस्था (Status) का ज्ञान होना चाहिए। उसे अपने तथा दूसरों के अधिकारों और कर्त्तव्यों की, पूरी-पूरी जानकारी होनी चाहिए। विद्यालय, समाज का छोटा सा स्वरूप होगा। इस छोटे से समाज में रहकर, छोटे-छोटे बालक, विद्यालय के हित के लिए, अपने-अपने उत्तरदायित्वों का पालन करेंगे।

(ख) प्रत्येक बालक को इस बात का ज्ञान कराना होगा कि सामाजिक सुगठन के लिए, मनुष्य को क्या-क्या संघर्ष करना पड़ा है। परिवार, पाठशाला, धर्म, विधान सभा जैसी सामाजिक संस्थाओं का निर्माण तथा विकास कैसे हुआ ? सभ्य और असभ्य व्यवहार में क्या अन्तर है ? इस दृष्टि से नागरिक शास्त्र का अध्ययन अपरिहार्य होगा। अन्य विषयों की शिक्षा भी हम इसी उद्देश्य से देंगे अर्थात नागरिकता की भावना का विकास करना। इतिहास हमें बतलाएगा कि भूतकाल की सहायता से कैसे हम वर्तमान को समझ सकते हैं, कैसे अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव उत्पन्न किया जा सकता है। मानव मानव की एकता का ज्ञान हमें भूगोल से होगा।

(ग) पाठशालाओं में ऐसी क्रियाओं की व्यवस्था होनी चाहिए जिन मे सामाजिक आदान-प्रदान के भाव निहित हों। इन्हीं क्रियाओं के द्वारा नागरिकता के गुणों का विकास किया जाएगा। अतएव इस प्रकार की क्रियाएं उचित परिमाण में होनी चाहिए। बालक इन मे भाग लेंगे और सामाजिक अनुभवों तथा सामाजिक आदान प्रदान द्वारा

(ग) नाकरिकता के गुण उत्पन्न करने के लिए पाठशालाओं में ऐसी क्रियाओं का आयोजन, जिनमें सामाजिक आदान प्रदान हो।

(घ) नेतृत्व के उचित अवसर प्रदान करना।

(क) कक्षा-गृहों में यदि बालकों को ऐसे सामाजिक उत्तरदायित्व वहन करने का अवसर प्राप्त होता है, जिन में वे मिलकर काम करें तो इस के द्वारा प्रारम्भिक सामाजिक मूल्यों का भली भाँति विकास किया जा सकता है। इस समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए अध्यापकों तथा बालकों को मिल कर सहयोग की भावना से काम करना होगा। कक्षा के प्रत्येक बालक को अपनी अवस्था (Status) का ज्ञान होना चाहिए। उसे अपने तथा दूसरों के अधिकारों और कर्त्तव्यों की, पूरी-पूरी जानकारी होनी चाहिए। विद्यालय, समाज का छोटा सा स्वरूप होगा। इस छोटे से समाज में रहकर, छोटे-छोटे बालक, विद्यालय के हित के लिए, अपने-अपने उत्तरदायित्वों का पालन करेंगे।

(ख) प्रत्येक बालक को इस बात का ज्ञान कराना होगा कि सामाजिक सुगठन के लिए, मनुष्य को क्या-क्या संघर्ष करना पड़ा है। परिवार, पाठशाला, धर्म, विधान सभा जैसी सामाजिक संस्थाओं का निर्माण तथा विकास कैसे हुआ ? सभ्य और असभ्य व्यवहार में क्या अन्तर है ? इस दृष्टि से नागरिक शास्त्र का अध्ययन अपरिहार्य होगा। अन्य विषयों की शिक्षा भी हम इसी उद्देश्य से देंगे अर्थात नागरिकता की भावना का विकास करना। इतिहास हमें बतलाएगा कि भूतकाल की सहायता से कैसे हम वर्तमान को समझ सकते हैं, कैसे अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव उत्पन्न किया जा सकता है। मानव मानव की एकता का ज्ञान हमें भूगोल से होगा।

(ग) पाठशालाओं में ऐसी क्रियाओं की व्यवस्था होनी चाहिए जिन में सामाजिक आदान-प्रदान के भाव निहित हों। इन्हीं क्रियाओं के द्वारा नागरिकता के गुणों का विकास किया जाएगा। अतएव इस प्रकार की क्रियाएं उचित परिमाण में होनी चाहिए। बालक इन में भाग लेंगे और सामाजिक अनुभवों तथा सामाजिक आदान प्रदान द्वारा, वे नागरिकता की

होगी"—इस कथन को स्पष्ट करते हुए लिखें कि प्रजातन्त्रवादी शिक्षा से आपका क्या तात्पर्य है और इस प्रकार की शिक्षा कैसे दी जा सकती है ?

[पंजाब १९५४]

Q. 44 In what different forms does the democratic tendency in education manifest itself today ?

(आज शिक्षा के क्षेत्र में, प्रजातन्त्रवादी भावना के दर्शन किस-किस रूप मे होते हैं ?)

प्रजातन्त्रवाद क्या है ?

उत्तर—"प्रजातन्त्रवाद" एक ऐसा शब्द है जिसकी व्याख्या भिन्न-भिन्न रूपों के अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकती है। अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन (Abraham Lincoln) के अनुसार यह एक ऐसा सगठन है जो जनता का हो, जनता के लिए हो तथा जनता के द्वारा चुना गया हो। (Government of the people, for the people and by the people)। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को शासन व्यवस्था मे भाग ने का अधिकार है। शासन व्यवस्था का भार इक्के-दुक्के व्यक्तियों के हाथ नहीं दिया जा सकता। यह प्रजातन्त्रवाद की राजनैतिक व्याख्या है। इसी कार आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से भी प्रजातन्त्रवाद की व्याख्या की जा कती है। आर्थिक प्रजातन्त्रवाद (Economic democracy) से हमारा त्पर्य ऐसे प्रजातन्त्रवाद से है जहाँ सामूहिक रूप से जनता के हाथ में ह र्थिक शक्ति हो। केवल कुछ पूँजीपति ही इस आर्थिक शक्ति को हस्तगत न र लें। हर एक व्यक्ति को उसकी योग्यता और दक्षता के अनुसार काम दिय एगा। सामाजिक प्रजातन्त्रवाद (Social Democracy) मे जन्म ाति, वर्ग तथा सम्पत्ति आदि के आधार पर किसी भी प्रकार का भेद भाव हीं किया जाता। सभी व्यक्तियों को प्रगति करने के लिए समान अवसर ाप्त हैं। इस प्रकार व्यापक अर्थ में प्रजातन्त्रवाद एक प्रकार का जीवन ा ढंग (a way of living) तथा एक इकाई के रूप मे जातीय

होगी"—इस कथन को स्पष्ट करते हुए लिखें कि प्रजातन्त्रवादी शिक्षा से आपका क्या तात्पर्य है और इस प्रकार की शिक्षा कैसे दी जा सकती है ?

[पंजाब १९५४]

Q. 44 In what different forms does the democratic tendency in education manifest itself today ?

(आज शिक्षा के क्षेत्र में, प्रजातन्त्रवादी भावना के दर्शन किस-किस रूप में होते हैं ?)

प्रजातन्त्रवाद क्या है ?

उत्तर—"प्रजातन्त्रवाद" एक ऐसा शब्द है जिसकी व्याख्या भिन्न-भिन्न रूपों के अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकती है। अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन (Abraham Lincoln) के अनुसार यह एक ऐसा संगठन है जो जनता का हो, जनता के लिए हो तथा जनता के द्वारा चुना गया हो। (Government of the people, for the people and by the people)। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को शासन व्यवस्था में भाग लेने का अधिकार है। शासन व्यवस्था का भार इक्के-दुक्के व्यक्तियों के हाथ में नहीं दिया जा सकता। यह प्रजातन्त्रवाद की राजनैतिक व्याख्या है। इसी प्रकार आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से भी प्रजातन्त्रवाद की व्याख्या की जा सकती है। आर्थिक प्रजातन्त्रवाद (Economic democracy) से हमारा तात्पर्य ऐसे प्रजातन्त्रवाद से है जहाँ सामूहिक रूप से जनता के हाथ में ही आर्थिक शक्ति हो। केवल कुछ पूँजीपति ही इस आर्थिक शक्ति को हस्तगत न कर लें। हर एक व्यक्ति को उसकी योग्यता और दक्षता के अनुसार काम दिया जाएगा। सामाजिक प्रजातन्त्रवाद (Social Democracy) में जन्म, जाति, वर्ग तथा सम्पत्ति आदि के आधार पर किसी भी प्रकार का भेद भाव नहीं किया जाता। सभी व्यक्तियों को प्रगति करने के लिए समान अवसर प्राप्त हैं। इस प्रकार व्यापक अर्थ में प्रजातन्त्रवाद एक प्रकार का जीवन का ढंग (a way of living) तथा एक इकाई के रूप में जातीय संगठन है।

होगी"—इस कथन को स्पष्ट करते हुए लिखें कि प्रजातन्त्रवादी शिक्षा से आपका क्या तात्पर्य है और इस प्रकार की शिक्षा कैसे दी जा सकती है ?

[पंजाब १९५४]

Q 44 In what different forms does the democratic tendency in education manifest itself today ?

(आज शिक्षा के क्षेत्र में, प्रजातन्त्रवादी भावना के दर्शन किस-किस रूप में होते हैं ?)

प्रजातन्त्रवाद क्या है ?

उत्तर—"प्रजातन्त्रवाद" एक ऐसा शब्द है जिसकी व्याख्या भिन्न-भिन्न रूपों के अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकती है। अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन (Abraham Lincoln) के अनुसार यह एक ऐसा संगठन है जो जनता का हो, जनता के लिए हो तथा जनता के द्वारा चुना गया हो। (Government of the people, for the people and by the people)। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को शासन व्यवस्था में भाग लेने का अधिकार है। शासन व्यवस्था का भार इक्के-दुक्के व्यक्तियों के हाथ में नहीं दिया जा सकता। यह प्रजातन्त्रवाद की राजनैतिक व्याख्या है। इसी प्रकार आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से भी प्रजातन्त्रवाद की व्याख्या की जा सकती है। आर्थिक प्रजातन्त्रवाद (Economic democracy) से हमारा तात्पर्य ऐसे प्रजातन्त्रवाद से है जहाँ सामूहिक रूप से जनता के हाथ में ही आर्थिक शक्ति हो। केवल कुछ पूँजीपति ही इस आर्थिक शक्ति को हस्तगत न कर लें [illegible]
जाएगा [illegible]
जाति, [illegible]
नहीं किया जाता। सभी व्यक्तियों को प्रगति करने के लिए समान अवसर प्राप्त हैं। इस प्रकार व्यापक अर्थ में प्रजातन्त्रवाद एक प्रकार का जीवन का ढंग (a way of living) तथा एक इकाई के रूप में जातीय संगठन है।

होगी"—इस कथन को स्पष्ट करते हुए लिखें कि प्रजातन्त्रवादी शिक्षा से आपका क्या तात्पर्य है और इस प्रकार की शिक्षा कैसे दी जा सकती है ?

[पंजाब १६५४]

Q 44 In what different forms does the democratic tendency in education manifest itself today ?

(आज शिक्षा के क्षेत्र में, प्रजातन्त्रवादी भावना के दर्शन किस-किस रूप में होते हैं ?)

प्रजातन्त्रवाद क्या है ?

उत्तर—"प्रजातन्त्रवाद" एक ऐसा शब्द है जिसकी व्याख्या भिन्न-भिन्न रूपों के अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकती है। अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन (Abraham Lincoln) के अनुसार यह एक ऐसा सगठ है जो जनता का हो, जनता के लिए हो तथा जनता के द्वारा चुना गया हो (Government of the people, for the people and by th people)। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को शासन व्यवस्था मे भा लेने का अधिकार है। शासन व्यवस्था का भार इक्के-दुक्के व्यक्तियों के ह में नहीं दिया जा सकता। यह प्रजातन्त्रवाद की राजनैतिक व्याख्या है। इ प्रकार आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से भी प्रजातन्त्रवाद की व्याख्या की सकती है। आर्थिक प्रजातन्त्रवाद (Economic democracy) से हमा तात्पर्य ऐसे प्रजातन्त्रवाद से है जहां सामूहिक रूप मे जनता के हाथ में आर्थिक शक्ति हो। केवल कुछ पूँजीपति ही इस आर्थिक शक्ति को हस्तगत कर लें [illegible]

जाएगा [illegible]

जाति, [illegible]

नहीं किया जाता। सभी व्यक्तियों को प्रगति करने के लिए समान अव प्राप्त हैं। इस प्रकार व्यापक अर्थ मे प्रजातन्त्रवाद एक प्रकार का जी का ढंग (a way of living) तथा एक इकाई के रूप मे आ संगठन है।

प्रजातन्त्रवादी शिक्षा (Democracy in Education) अपने वास्तविक रूप मे तभी सफल हो सकती है जब कि शिक्षा के क्षेत्र मे रूप-रंग, जाति, वर्ग आदि के आधार पर किसी भी प्रकार का भेद-भाव न किया जाए। शिक्षा प्राप्त करना सभी व्यक्तियो का जन्म सिद्ध अधिकार है। शिक्षा के द्वारा ही बालक का सामाजीकरण होता है। वह समाज के अन्दर रहना सीखता है।

जिस प्रकार प्रजातन्त्रवाद के आदर्शों की पूर्ति के लिए शिक्षा की सहायता अपेक्षित है उसी प्रकार शिक्षा को भी प्रजातन्त्रवाद की सहायता चाहिए। दोनो एक दूसरे के बिना अपूर्ण हैं।

प्रजातन्त्रवादी शिक्षा के उद्देश्य

(क) सामाजिक मूल्यों के प्रति श्रद्धा—पाठशाला मे इस प्रकार के क्रियाशीलनों (activities) का आयोजन किया जाए, जिनके द्वारा विद्यार्थियो मे सामाजिक मूल्यो के प्रतिश्रद्धा के भाव उत्पन्न हो।

(ख) उचित रुचियों का विकास—विद्यालय अपनी भिन्न-भिन्न क्रियाओं द्वारा, शिक्षार्थियो मे इस प्रकार की रुचियों का विकास करे जिन से, भविष्य में, वे सन्तुलित व्यक्तित्व वाले तथा उपयोगी नागरिक बन सकें।

(ग) विचार करने की शक्ति का विकास—शिक्षण संस्थाओं में जो भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्यक्रम हो वे ऐसे हो जिन से बालक विचार करना सीखें। यदि बालकों की विचार शक्ति का उचित विकास हुआ तो आगे जाकर जीवन की कठिन से कठिन समस्या को हल करने में उन्हें किसी भी प्रकार की असुविधा नहीं होगी।

(घ) सामाजिक भावना का विकास—पाठशाला के विभिन्न कार्यक्रमो के द्वारा बालक सीखेंगे कि किसी भी महत्वपूर्ण काम को करने के लिए सहयोग की आवश्यकता है।

(च) व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था—विद्यार्थी समाज के उपयोगी सदस्य बन सकें, इस के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा के पाठ्यक्रम मे ऐसे कौशल (Skills) तथा हस्त उद्योग (Crafts) हों जो उन्हें व्यवसायिक रूप मे सहायक हों।

प्रजातन्त्रवादी शिक्षा (Democracy in Education) अपने वास्तविक रूप में तभी सफल हो सकती है जब कि शिक्षा के क्षेत्र में रूप-रंग, जाति, वर्ग आदि के आधार पर किसी भी प्रकार का भेद-भाव न किया जाए। शिक्षा प्राप्त करना सभी व्यक्तियों का जन्म सिद्ध अधिकार है। शिक्षा के द्वारा ही बालक का सामाजीकरण होता है। वह समाज के अन्दर रहना सीखता है।

जिस प्रकार प्रजातन्त्रवाद के आदर्शों की पूर्ति के लिए शिक्षा की सहायता अपेक्षित है उसी प्रकार शिक्षा को भी प्रजातन्त्रवाद की सहायता चाहिए। दोनों एक दूसरे के बिना अपूर्ण हैं।

प्रजातन्त्रवादी शिक्षा के उद्देश्य

(क) सामाजिक मूल्यों के प्रति श्रद्धा—पाठशाला में इस प्रकार के क्रियाशीलनों (activities) का आयोजन किया जाए, जिनके द्वारा विद्यार्थियों में सामाजिक मूल्यों के प्रतिश्रद्धा के भाव उत्पन्न हों।

(ख) उचित रुचियों का विकास—विद्यालय अपनी भिन्न-भिन्न क्रियाओं द्वारा, विद्यार्थियों में इस प्रकार की रुचियों का विकास करे जिन से, भविष्य में, वे सन्तुलित व्यक्तित्व वाले तथा उपयोगी नागरिक बन सकें।

(ग) विचार करने की शक्ति का विकास—शिक्षण संस्थाओं में जो भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्यक्रम हों वे ऐसे हों जिन से बालक विचार करना सीखें। यदि बालकों की विचार शक्ति का उचित विकास हुआ तो आगे जाकर जीवन की कठिन से कठिन समस्या को हल करने में उन्हें किसी भी प्रकार की असुविधा नहीं होगी।

(घ) सामाजिक भावना का विकास—पाठशाला के विभिन्न कार्यक्रमों के द्वारा बालक सीखेंगे कि किसी भी महत्त्वपूर्ण काम को करने के लिए सहयोग की आवश्यकता है।

(च) व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था—विद्यार्थी समाज के उपयोगी सदस्य बन सकें, इस के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा के पाठ्यक्रम में ऐसे कौशल (Skills) तथा हस्त उद्योग (Crafts) हों जो उन्हें व्यवसायिक रूप में सहायक हों।

प्रजातन्त्रवादी शिक्षा (Democracy in Education) अपने वास्तविक रूप में तभी सफल हो सकती है जब कि शिक्षा के क्षेत्र में रूप-रंग, जाति, वर्ग आदि के आधार पर किसी भी प्रकार का भेद-भाव न किया जाए। शिक्षा प्राप्त करना सभी व्यक्तियों का जन्म सिद्ध अधिकार है। शिक्षा के द्वारा ही बालक का सामाजीकरण होता है। वह समाज के अन्दर रहना सीखता है।

जिस प्रकार प्रजातन्त्रवाद के आदर्शों की पूर्ति के लिए शिक्षा की सहायता अपेक्षित है उसी प्रकार शिक्षा को भी प्रजातन्त्रवाद की सहायता चाहिए। दोनो एक दूसरे के बिना अपूर्ण हैं।

प्रजातन्त्रवादी शिक्षा के उद्देश्य

(क) सामाजिक मूल्यों के प्रति श्रद्धा—पाठशाला मे इस प्रकार के क्रियाशीलनों (activities) का आयोजन किया जाए, जिनके द्वारा विद्यार्थियो मे सामाजिक मूल्यो के प्रतिश्रद्धा के भाव उत्पन्न हों।

(ख) उचित रुचियों का विकास—विद्यालय अपनी भिन्न-भिन्न क्रियाओ द्वारा, शिक्षार्थियो मे इस प्रकार की रुचियो का विकास करे जिन से, भविष्य में, वे सन्तुलित व्यक्तित्व वाले तथा उपयोगी नागरिक बन सकें।

(ग) विचार करने की शक्ति का विकास—शिक्षण सस्थाओ मे जो भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्यक्रम हो वे ऐसे हो जिन से बालक विचार करना सीखें। यदि बालकों की विचार शक्ति का उचित विकास हुआ तो आगे जाकर जीवन की कठिन से कठिन समस्या को हल करने मे उन्हे किसी भी प्रकार की असुविधा नहीं होगी।

(घ) सामाजिक भावना का विकास—पाठशाला के विभिन्न कार्य क्रमो के द्वारा बालक सीखेंगे कि किसी भी महत्वपूर्ण काम को करने के लिए सहयोग की आवश्यकता है।

(च) व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था—विद्यार्थी समाज के उपयोगी सदस्य बन सकें, इस के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा के पाठ्यक्रम मे ऐसे कौशल (Skills) तथा हस्त उद्योग (Crafts) हों जो उन्हें व्यवसायिक रूप मे सहायक हो।

प्रजातन्त्रवादी शिक्षा (Democracy in Education) अपने वास्तविक रूप में तभी सफल हो सकती है जब कि शिक्षा के क्षेत्र में रूप-रंग, जाति, वर्ग आदि के आधार पर किसी भी प्रकार का भेद-भाव न किया जाए। शिक्षा प्राप्त करना सभी व्यक्तियों का जन्म सिद्ध अधिकार है। शिक्षा के द्वारा ही बालक का सामाजीकरण होता है। वह समाज के अन्दर रहना सीखता है।

जिस प्रकार प्रजातन्त्रवाद के आदर्शों की पूर्ति के लिए शिक्षा की सहायता अपेक्षित है उसी प्रकार शिक्षा को भी प्रजातन्त्रवाद की सहायता चाहिए। दोनो एक दूसरे के बिना अपूर्ण हैं।

प्रजातन्त्रवादी शिक्षा के उद्देश्य

(क) सामाजिक मूल्यों के प्रति श्रद्धा—पाठशाला मे इस प्रकार के क्रियाशीलों (activities) का आयोजन किया जाए, जिनके द्वारा विद्यार्थियो मे सामाजिक मूल्यों के प्रतिश्रद्धा के भाव उत्पन्न हों।

(ख) उचित रुचियों का विकास—विद्यालय अपनी भिन्न-भिन्न क्रियाओं द्वारा, शिक्षार्थियो मे इस प्रकार की रुचियो का विकास करे जिन से, भविष्य में, वे सन्तुलित व्यक्तित्व वाले तथा उपयोगी नागरिक बन सकें।

(ग) विचार करने की शक्ति का विकास—शिक्षण संस्थाओं मे जो भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्यक्रम हो वे ऐसे हो जिन से बालक विचार करना सीखें। यदि बालकों की विचार शक्ति का उचित विकास हुआ तो आगे जाकर जीवन की कठिन से कठिन समस्या को हल करने मे उन्हे किसी भी प्रकार की असुविधा नहीं होगी।

(घ) सामाजिक भावना का विकास—पाठशाला के विभिन्न कार्य क्रमों के द्वारा बालक सीखेंगे कि किसी भी महत्वपूर्ण काम को करने के लिए सहयोग की आवश्यकता है।

(ङ) व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था—विद्यार्थी समाज के उपयोगी सदस्य बन सकें, इस के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा के पाठ्यक्रम में ऐसे कौशल (Skills) तथा हस्त उद्योग (Crafts) हों जो उन्हें व्यवसायिक रूप में सहायक हो।

(घ) शिक्षण पद्धति—प्रजातन्त्रवादी शिक्षण पद्धति में बालक सदा क्रियाशील रहेगा। शिक्षार्थियों को प्रश्न पूछने, तर्क तथा आलोचना करने की पूरी स्वतन्त्रता होगी। अध्यापक अन्वेषण करने के लिए शिक्षार्थियों को सदा प्रोत्साहित करता रहेगा। किण्डर गार्टन पद्धति, मॉन्टेसरी पद्धति, डालटन प्रणाली, प्रोजैक्ट पद्धति आदि में इन्हीं सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है।

(च) प्रजातन्त्रवाद और अनुशासन—यदि प्रजातन्त्रवाद के सिद्धान्तों का पालन किया जाए तो अनुशासन की समस्या खड़ी ही नहीं होगी। प्रजातन्त्रवाद के अनुसार पाठशाला केवल ज्ञान-प्राप्ति का ही स्थल नहीं। पाठशाला का कार्य है, इस प्रकार का वातावरण प्रदान करना, जिस से बालकों के चरित्र का विकास हो सके। पाठशाला समाज का छोटा स्वरूप है। भिन्न-भिन्न परिषदों, कक्षा समितियों तथा विद्यालय की संसद (School Parliament) के द्वारा बालक पाठशाला की शासन व्यवस्था में भाग लेते हैं। बालक यहाँ स्वयं नियमों का निर्माण करते हैं। इस लिए बड़ी प्रसन्नतापूर्वक उनका पालन करते हैं। शिक्षा का आधार बाह्य-अनुशासन न हो कर स्वानुशासन है।

Q. 45 Explain the Concept of Social Education. How did the idea of Social Education develop and what is being done for its realization in our country?

(सामाजिक शिक्षा के भाव को स्पष्ट कीजिए। सामाजिक शिक्षा के भाव का विकास कैसे हुआ और इसकी पूर्ति के लिए हमारे देश में क्या किया जा रहा है?)

उत्तर—प्रौढ़ शिक्षा और उसका प्रारम्भ

सामाजिक शिक्षा के भाव को स्पष्ट करते हुए, अपने एक लेख में श्री हुमायूं कबीर ने, एक स्थान पर, कहा है कि—"संक्षेप में जन-साधारण को, पूर्ण और उन्मुक्त जीवन के लिए, ज्ञान प्रदान करने का अत्यन्त प्रभावशाली साधन सामाजिक शिक्षा है" (In a word, Social Education is a powerful

(ग) शिक्षण पद्धति—प्रजातन्त्रवादी शिक्षण पद्धति में बालक सदा क्रियाशील रहेगा। शिक्षार्थियों को प्रश्न पूछने, तर्क तथा आलोचना करने की पूरी स्वतन्त्रता होगी। अध्यापक अन्वेषण करने के लिए शिक्षार्थियों को सदा प्रोत्साहित करता रहेगा। किण्डर गार्टन पद्धति, मॉन्टेसरी पद्धति, डालटन प्रणाली, प्रोजैक्ट पद्धति आदि में इन्हीं सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है।

(घ) प्रजातन्त्रवाद और अनुशासन—यदि प्रजातन्त्रवाद के सिद्धान्तों का पालन किया जाए तो अनुशासन की समस्या खड़ी ही नहीं होगी। प्रजातन्त्रवाद के अनुसार पाठशाला केवल ज्ञान-प्राप्ति का ही स्थल नहीं। पाठशाला का कार्य है, इस प्रकार का वातावरण प्रदान करना, जिस से बालकों के चरित्र का विकास हो सके। पाठशाला समाज का छोटा स्वरूप है। भिन्न-भिन्न परिषदों, कक्षा समितियों तथा विद्यालय की संसद (School Parliament) के द्वारा बालक पाठशाला की शासन व्यवस्था में भाग लेते हैं। बालक यहाँ स्वयं नियमों का निर्माण करते हैं। इस लिए बड़ी प्रसन्नतापूर्वक उनका पालन करते हैं। शिक्षा का आधार बाह्य-अनुशासन न हो कर स्वानुशासन है।

Q. 45 Explain the Concept of Social Education. How did the idea of Social Education develop and what is being done for its realization in our country?

(सामाजिक शिक्षा के भाव को स्पष्ट कीजिए। सामाजिक शिक्षा के भाव का विकास कैसे हुआ और इसकी पूर्ति के लिए हमारे देश में क्या किया जा रहा है?)

उत्तर—प्रौढ़ शिक्षा और उसका प्रारम्भ

सामाजिक शिक्षा के भाव को स्पष्ट करते हुए, अपने एक लेख में श्री हुमायूँ कबीर ने, एक स्थान पर, कहा है कि—"संक्षेप में जन-साधारण को, पूर्ण और उन्मुक्त जीवन के लिए, ज्ञान प्रदान करने का अत्यन्त प्रभावशाली साधन सामाजिक शिक्षा है" (In a word, Social Education is a powerful

होकर केवल मात्र प्रौढ़ व्यक्तियों को साक्षर करने का प्रयास था। इसी कारण जन साधारण इस ओर आकर्षित नहीं हुए। केवल साक्षरता प्रदान करने से ही जीवन की समस्याओं का हल नहीं हो जाता। आर्थिक दृष्टि से लोगों की अवस्था बड़ी शोचनीय थी। अनपढ़ व्यक्ति के सामने रोटी कमाने का प्रश्न सबसे प्रमुख था। रोटी कमाने के संघर्ष में वह बहुत थक जाता था और अपने अवकाश के समय को किसी और उपयोगी काम में नहीं लगा सकता था।

(ख) समस्या की गम्भीरता—बालकों और प्रौढ़ों के पढ़ाने में बड़ा अन्तर होता है। बालक की स्मृति तीव्र होती है। उसको मन में जिज्ञासा होती है। इसलिए वह पढ़ना लिखना जल्दी सीख लेता है। दूसरी ओर अपनी पुरानी आदतों के कारण प्रौढ़ के लिए किसी नई बात का सीखना अत्यन्त कठिन होता है।

(ग) दोषपूर्ण शिक्षण-पद्धति—जिस पद्धति द्वारा बालकों को पढ़ाया जाता है, वह प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए उपयुक्त नहीं। प्रौढ़ व्यक्ति इस से प्रभावित नहीं होते इसलिए उनको पढ़ाने की पद्धति भिन्न होनी चाहिए।

(घ) उचित साहित्य का अभाव—प्रौढ़ों के लिए किसी भी प्रकार का साहित्य उपलब्ध नहीं था। वही पुस्तकें जो प्रारम्भिक अवस्था में बालकों को पढ़ाई जाती हैं, प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए उपयुक्त नहीं।

(ङ) अभ्यास का अभाव—शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात्, ऐसा कोई आयोजन नहीं था जिसके द्वारा प्रौढ़ व्यक्ति अपनी पढ़ी हुई बातों का अभ्यास जारी रख सकें। इस कारण वे पढ़ी हुई बातों को जल्दी ही भूल जाते थे।

(च) द्वितीय महायुद्ध का प्रारम्भ—१६३६ ई० द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भ होने पर प्रौढ़-शिक्षा के कार्य-क्रम को स्थगित कर दिया गया।

सामाजिक शिक्षा का नया स्वरूप

शताब्दियों की दासता के पश्चात् १६४७ ई० में भारतवर्ष को स्वतन्त्रता की प्राप्ति हुई। अब मताधिकार (Franchise) सीमित न रहा। प्रत्येक प्रौढ़ व्यक्ति (Adult) पुरुष अथवा स्त्री, धनवान अथवा निर्धन, उच्च

होकर केवल मात्र प्रौढ़ व्यक्तियों को साक्षर करने का प्रयास था। इसी कारण जन साधारण इस ओर आकर्षित नहीं हुए। केवल साक्षरता प्रदान करने से ही जीवन की समस्याओं का हल नहीं हो जाता। आर्थिक दृष्टि से लोगों की अवस्था बड़ी शोचनीय थी। अतएव व्यक्ति के सामने रोटी कमाने का प्रश्न सबसे प्रमुख था। रोटी कमाने के संघर्ष में वह बहुत थक जाता था और अपने अवकाश के समय को किसी और उपयोगी काम में नहीं लगा सकता था।

(ख) समस्या की गम्भीरता—बालकों और प्रौढ़ों के पढ़ाने में बड़ा अन्तर होता है। बालक की स्मृति तीव्र होती है। उसके मन में जिज्ञासा होती है। इसलिए वह पढ़ना लिखना जल्दी सीख लेता है। दूसरी ओर अपनी पुरानी आदतों के कारण प्रौढ़ के लिए किसी नई बात का सीखना अत्यन्त कठिन होता है।

(ग) दोषपूर्ण शिक्षण-पद्धति—जिस पद्धति द्वारा बालकों को पढ़ाया जाता है, वह प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए उपयुक्त नहीं। प्रौढ़ व्यक्ति इस से प्रभावित नहीं होते इसलिए उनको पढ़ाने की पद्धति भिन्न होनी चाहिए।

(घ) उचित साहित्य का अभाव—प्रौढ़ों के लिए किसी भी प्रकार का साहित्य उपलब्ध नहीं था। वही पुस्तकें जो प्रारम्भिक अवस्था में बालकों को पढ़ाई जाती हैं, प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए उपयुक्त नहीं।

(ङ) अभ्यास का अभाव—शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात्, ऐसा कोई आयोजन नहीं था जिसके द्वारा प्रौढ़ व्यक्ति अपनी पढ़ी हुई बातों का अभ्यास जारी रख सकें। इस कारण वे पढ़ी हुई बातों को जल्दी ही भूल जाते थे।

(च) द्वितीय महायुद्ध का प्रारम्भ—१९३९ ई० द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भ होने पर प्रौढ़-शिक्षा के कार्य-क्रम को स्थगित कर दिया गया।

सामाजिक शिक्षा का नया स्वरूप

शताब्दियों की दासता के पश्चात् १९४७ ई० में भारतवर्ष को स्वतन्त्रता की प्राप्ति हुई। अब मताधिकार (Franchise) सीमित न रहा। प्रत्येक प्रौढ़ व्यक्ति (Adult) पुरुष अथवा स्त्री, धनवान अथवा निर्धन, उच्च

होकर केवल मात्र प्रौढ़ व्यक्तियों को साक्षर करने का प्रयास था। इसी कारण जन साधारण इस ओर आकर्षित नहीं हुए। केवल साक्षरता प्रदान करने से ही जीवन की समस्याओं का हल नहीं हो जाता। आर्थिक दृष्टि से लोगों की अवस्था बड़ी शोचनीय थी। अतएव व्यक्ति के सामने रोटी कमाने का प्रश्न सबसे प्रमुख था। रोटी कमाने के संघर्ष में वह बहुत थक जाता था और अपने अवकाश के समय को किसी और उपयोगी काम में नहीं लगा सकता था।

(ख) समस्या की गम्भीरता—बालकों और प्रौढ़ों के पढ़ाने में बड़ा अन्तर होता है। बालक की स्मृति तीव्र होती है। उसको मन में जिज्ञासा होती है। इसलिए वह पढ़ना लिखना जल्दी सीख लेता है। दूसरी ओर अपनी पुरानी आदतों के कारण प्रौढ़ के लिए किसी नई बात का सीखना अत्यन्त कठिन होता है।

(ग) दोषपूर्ण शिक्षण-पद्धति—जिस पद्धति द्वारा बालकों को पढ़ाया जाता है, वह प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए उपयुक्त नहीं। प्रौढ़ व्यक्ति इस से प्रभावित नहीं होते इसलिए उनको पढ़ाने की पद्धति भिन्न होनी चाहिए।

(घ) उचित साहित्य का अभाव—प्रौढ़ों के लिए किसी भी प्रकार का साहित्य उपलब्ध नहीं था। वही पुस्तकें जो प्रारम्भिक अवस्था में बालकों को पढ़ाई जाती हैं, प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए उपयुक्त नहीं।

(ङ) अभ्यास का अभाव—शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात्, ऐसा कोई आयोजन नहीं था जिसके द्वारा प्रौढ़ व्यक्ति अपनी पढ़ी हुई बातों का अभ्यास जारी रख सकें। इस कारण ये पढ़ी हुई बातों को जल्दी ही भूल जाते थे।

(च) द्वितीय महायुद्ध का प्रारम्भ—१६३६ ई० द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भ होने पर प्रौढ़-शिक्षा के कार्य-क्रम को स्थगित कर दिया गया।

सामाजिक शिक्षा का नया स्वरूप

शताब्दियों की दासता के पश्चात् १६४७ ई० में भारतवर्ष को स्वतन्त्रता की प्राप्ति हुई। अब मताधिकार (Franchise) सीमित न रहा। प्रत्येक प्रौढ़ व्यक्ति (Adult) पुरुष अथवा स्त्री, धनवान अथवा निर्धन, उच्च

होकर केवल मात्र प्रौढ़ व्यक्तियों को साक्षर करने का प्रयास था। इसी कारण जन साधारण इस ओर आकर्षित नहीं हुए। केवल साक्षरता प्रदान करने से ही जीवन की समस्याओं का हल नहीं हो जाता। आर्थिक दृष्टि से लोगों की अवस्था बड़ी शोचनीय थी। अनपढ़ व्यक्ति के सामने रोटी कमाने का प्रश्न सबसे प्रमुख था। रोटी कमाने के संघर्ष में वह बहुत थक जाता था और अपने अवकाश के समय को किसी और उपयोगी काम में नहीं लगा सकता था।

(ख) समस्या की गम्भीरता—बालकों और प्रौढ़ों के पढ़ाने में बड़ा अन्तर होता है। बालक की स्मृति तीव्र होती है। उसको मन में जिज्ञासा होती है। इसलिए वह पढ़ना लिखना जल्दी सीख लेता है। दूसरी ओर अपनी पुरानी आदतों के कारण प्रौढ़ के लिए किसी नई बात का सीखना अत्यन्त कठिन होता है।

(ग) दोषपूर्ण शिक्षण-पद्धति—जिस पद्धति द्वारा बालकों को पढ़ाया जाता है, वह प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए उपयुक्त नहीं। प्रौढ़ व्यक्ति इस से प्रभावित नहीं होते इसलिए उनको पढ़ाने की पद्धति भिन्न होनी चाहिए।

(घ) उचित साहित्य का अभाव—प्रौढ़ों के लिए किसी भी प्रकार का साहित्य उपलब्ध नहीं था। वही पुस्तकें जो प्रारम्भिक अवस्था में बालकों को पढ़ाई जाती हैं, प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए उपयुक्त नहीं।

(च) अभ्यास का अभाव—शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात्, ऐसा कोई आयोजन नहीं था जिसके द्वारा प्रौढ़ व्यक्ति अपनी पढ़ी हुई बातों का अभ्यास जारी रख सकें। इस कारण ये पढ़ी हुई बातों को जल्दी ही भूल जाते थे।

(छ) द्वितीय महायुद्ध का प्रारम्भ—१९३९ ई० द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भ होने पर प्रौढ़-शिक्षा के कार्य-क्रम को स्थगित कर दिया गया।

सामाजिक शिक्षा का नया स्वरूप

शताब्दियों की दासता के पश्चात् १९४७ ई० में भारतवर्ष को स्वतन्त्रता की प्राप्ति हुई। अब मताधिकार (Franchise) सीमित न रहा। प्रत्येक प्रौढ़ व्यक्ति (Adult) पुरुष अथवा स्त्री, धनवान अथवा निर्धन, उच्च

(iii) हमारे देश का आर्थिक स्तर बहुत नीचा है। सामाजिक विकास का कोई भी कार्यक्रम तब तक पूरा नहीं हो सकता जब तक कि आर्थिक समस्या को हल नहीं किया जाता। इसी आर्थिक समस्या के कारण ही, प्रमुख रूप में १६३७ का प्रौढ़-शिक्षा का कार्य-क्रम असफल रहा। सामाजिक शिक्षा का कार्यक्रम व्यक्ति को आर्थिक दृष्टि से ऊँचा उठाने का यत्न करता है। जैसे उपज कैसे बढ़ाई जाए, अवकाश के समय किन-किन हस्त उद्योगों से सहायता ली जा सकती है।

(iv) व्यक्ति के लिए अपने अधिकारों और कर्तव्यों का ज्ञान आवश्यक है। ऐसा होने पर ही वह अपने मत का ठीक-ठीक प्रयोग कर सकेगा। इन सब बातों के लिए प्रौढ़ व्यक्ति को नागरिकता की शिक्षा दी जाएगी।

(v) यह सामाजिक शिक्षा का कार्य है कि वह मनोरंजन के लिए स्वस्थ साधनों का विकास करे। सात आठ घंटे कार्य करने के पश्चात् व्यक्ति थक जाता है इसलिए उसके लिए शिक्षा पर मनोरंजन का होना अत्यन्त आवश्यक है।

सामाजिक शिक्षा का व्यवहारिक स्वरूप

उपरोक्त कार्यक्रम की पूर्ति भिन्न-भिन्न राज्यों द्वारा भिन्न-भिन्न रूप से हो रही है। दिल्ली तथा मध्य प्रदेश में इस कार्य का उत्तर दायित्व ग्रामाध्यापक पर डाला गया है। मोटरों के द्वारा चलते फिरते स्कूलों की व्यवस्था की गई है। गाँव वालों को चल-चित्र तथा आकाशवाणी के कार्य क्रम सुनाए जाते हैं। इस प्रकार गाँव के लोगों में भिन्न-भिन्न विषयों के प्रति रुचि जागृत की जाती है। ग्रामाध्यापक उनकी रुचि के अनुसार अनेकों कार्य क्रमों का आयोजन करता है। ग्राम पुस्तकालयों द्वारा ग्रामोपयोगी साहित्य का वितरण किया जाता है।

बिहार में एक परम्परा है। गाने वालों की टोलियाँ गाँवों में जाती हैं और रामायण महाभारत आदि की कथाएँ गाकर सुनाई जाती हैं। इससे जनसाधारण का मनोरंजन भी होता है और अनपढ़ व्यक्तियों को शिक्षा भी मिलती है। इस प्रथा का उपयोग सामाजिक शिक्षा के लिए भी किया जाता है। ग्रामों में सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के दल भेजे जाते हैं।

(iii) हमारे देश का आर्थिक स्तर बहुत नीचा है। सामाजिक विकास का कोई भी कार्यक्रम तब तक पूरा नहीं हो सकता जब तक कि आर्थिक समस्या को हल नहीं किया जाता। इसी आर्थिक समस्या के कारण ही, प्रमुख रूप में १६३७ का प्रौढ़-शिक्षा का कार्य-क्रम असफल रहा। सामाजिक शिक्षा का कार्यक्रम व्यक्ति को आर्थिक दृष्टि से ऊँचा उठाने का यत्न करता है। जैसे उपज कैसे बढ़ाई जाए, अवकाश के समय किन-किन हस्त उद्योगों से सहायता ली जा सकती है।

(iv) व्यक्ति के लिए अपने अधिकारों और कर्तव्यों का ज्ञान आवश्यक है। ऐसा होने पर ही वह अपने मत का ठीक-ठीक प्रयोग कर सकेगा। इन सब बातों के लिए प्रौढ़ व्यक्ति को नागरिकता की शिक्षा दी जाएगी।

(v) यह सामाजिक शिक्षा का कार्य है कि वह मनोरंजन के लिए स्वस्थ साधनों का विकास करे। सात आठ घंटे कार्य करने के पश्चात् व्यक्ति थक जाता है इसलिए उसके लिए शिक्षा पर मनोरंजन का होना अत्यन्त आवश्यक है।

सामाजिक शिक्षा का व्यवहारिक स्वरूप

उपरोक्त कार्यक्रम की पूर्ति भिन्न-भिन्न राज्यों द्वारा भिन्न-भिन्न रूप से हो रही है। दिल्ली तथा मध्य प्रदेश में इस कार्य का उत्तर दायित्व ग्रामाध्यापक पर डाला गया है। मोटरों के द्वारा चलते फिरते स्कूलों की व्यवस्था की गई है। गाँव वालों को चल-चित्र तथा आकाशवाणी के कार्य क्रम सुनाए जाते हैं। इस प्रकार गाँव के लोगों में भिन्न-भिन्न विषयों के प्रति रुचि जागृत की जाती है। ग्रामाध्यापक उनकी रुचि के अनुसार अनेकों कार्य क्रमों का आयोजन करता है। ग्राम पुस्तकालयों द्वारा ग्रामोपयोगी साहित्य का वितरण किया जाता है।

बिहार में एक परम्परा है। गाने वालों की टोलियाँ गाँवों में जाती हैं और रामायण महाभारत आदि की कथाएँ गाकर सुनाई जाती हैं। इससे जनसाधारण का मनोरंजन भी होता है और अनपढ़ व्यक्तियों को शिक्षा भी मिलती है। इस प्रथा का उपयोग सामाजिक शिक्षा के लिए भी किया जाता है। ग्रामों में सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के दल भेजे जाते हैं।

भी अनिवार्य हो गया है (There is no more dangerous maxim in the world of today than "My country, right or wrong". The whole world is now so intimately inter-connected that no nation can afford to live alone and the development of a sense of world citizenship has become just as important as that of national citizenship) ।

भिन्न भिन्न वैज्ञानिक आविष्कारों जैसे जल-यान, वायु-यान, आकाश वाणी, टैलीविज़न, चल-चित्र आदि के द्वारा हम एक दूसरे के बहुत निकट आ गए हैं। अब देश और काल के बन्धन टूट रहे हैं। एक देश की घटना का प्रभाव दूसरे देशों पर पड़ता है। इस लिए यह आवश्यक हो गया है कि भिन्न-भिन्न राष्ट्र आपस में मिल कर रहें।

अन्तर्राष्ट्रीय रूप से इतना निकट आ जाने पर भी आज विश्व-शान्ति कोसों दूर क्यों है ? इस समस्या का हल अब तक क्यों नहीं किया गया, जब कि सब को विदित ही है कि विश्व के किसी भी कोने में युद्ध छिड़ जाए, तो उसका सीधा प्रभाव अन्य स्थानों पर अवश्य ही होगा ? इसी बात को श्री के० जी० सैयीदन (K. G. Saiyidan) ने बड़े सुन्दर ढंग से पेश किया है —"यूरोप में युद्ध प्रारम्भ होता है और तीस लाख व्यक्ति, अकाल के कारण, बंगाल में मारे जाते हैं। लाखों व्यक्तियों को अपने-अपने व्यवसाय तथा घर छोड़ने पड़ते हैं (A war starts in Europe and three million people die of famine in Bengal and millions more find themselves uprooted from their homeland, cut off from their national occupation and deprived of all that makes life pleasant and meaningful.) । आगे चल कर वे एक स्थान पर कहते हैं—"जब तक युद्ध का ख़तरा बना रहेगा तब तक स्वास्थ्य की दृष्टि से, आर्थिक दृष्टि से तथा

and literature and culture in a world that is either plunged in or overshadowed by war.) ।

ी अनिवार्य हो गया है (There is no more dangerous maxim in the world of today than "My country, right or wrong". The whole world is now so intimately inter-connected that no nation can exist alone and the development of a sense of world citizenship has become just as important as that of national citizenship) ।

भिन्न भिन्न वैज्ञानिक आविष्कारों जैसे जल-यान, वायु-यान, आकाश वाणी, टैलीविज़न, चल-चित्र आदि के द्वारा हम एक दूसरे के बहुत निकट आ गए हैं। अब देश और काल के बन्धन टूट रहे हैं। एक देश की घटना का प्रभाव दूसरे देशों पर पड़ता है। इस लिए यह आवश्यक हो गया है कि भिन्न-भिन्न राष्ट्र आपस में मिल कर रहें।

अन्तर्राष्ट्रीय रूप से इतना निकट आ जाने पर भी आज विश्व-शान्ति कोसों दूर क्यों है ? इस समस्या का हल अब तक क्यों नहीं किया गया, जब कि सब को विदित ही है कि विश्व के किसी भी कोने में युद्ध छिड़ जाए, तो उसका सीधा प्रभाव अन्य स्थानों पर अवश्य ही होगा ? इसी बात को श्री के० जी० सैयीदन (K. G. Saiyidan) ने बड़े सुन्दर ढंग से पेश किया है —"यूरोप में युद्ध प्रारम्भ होता है और तीस लाख व्यक्ति, अकाल के कारण, बंगाल में मारे जाते हैं। लाखों व्यक्तियों को अपने-अपने व्यवसाय तथा घर छोड़ने पड़ते हैं (A war starts in Europe and three million people die of famine in Bengal and millions more find themselves uprooted from their homeland, cut off from their national occupation and deprived of all that makes life pleasant and meaningful.) । आगे चल कर वे एक स्थान पर कहते हैं—"जब तक युद्ध का ख़तरा बना रहेगा तब तक स्वास्थ्य की दृष्टि से, आर्थिक दृष्टि से तथा

भी अनिवार्य हो गया है (There is no more dangerous maxim in the world of today than "My country, right or wrong". The whole world is now so intimately inter-connected that no nation can or dare live alone and the development of a sense of world citizenship has become just as important as that of national citizenship) ।

भिन्न भिन्न वैज्ञानिक आविष्कारो जैसे जल-यान, वायु-यान, आकाश वाणी, टैलीवियन, चल-चित्र आदि के द्वारा हम एक दूसरे के बहुत निकट आ गए हैं। अब देश और काल के बन्धन टूट रहे हैं। एक देश की घटना का प्रभाव दूसरे देशों पर पड़ता है। इस लिए यह आवश्यक हो गया है कि भिन्न-भिन्न राष्ट्र आपस मे मिल कर रहें।

अन्तर्राष्ट्रीय रूप से इतना निकट आ जाने पर भी आज विश्व-शान्ति कोसों दूर क्यो है ? इस समस्या का हल अब तक क्यों नहीं किया गया, जब कि सब को विदित ही है कि विश्व के किसी भी कोने मे युद्ध छिड़ जाए, तो उसका सीधा प्रभाव अन्य स्थानो पर अवश्य ही होगा ? इसी बात को श्री के० जी० सैयीदन (K G Saiyidan) ने बड़े सुन्दर ढग से पेश किया है :—"यूरोप मे युद्ध प्रारम्भ होता है और तीस लाख व्यक्ति, अकाल के कारण, बंगाल मे मारे जाते हैं। लाखों व्यक्तियों को अपने-अपने व्यवसाय तथा घर छोड़ने पड़ते हैं (A war starts in Europe and three million people die of famine in Bengal and millions more find themselves uprooted from their homeland, cut off from their national occupation and deprived of all that makes life pleasant and meaningful.) । आगे चल कर वे एक स्थान पर कहते हैं—"जब तक युद्ध का खतरा बना रहेगा तब तक स्वास्थ्य की दृष्टि से, आर्थिक दृष्टि से तथा कला और साहित्य की दृष्टि से हमारा विकास सम्भव नहीं हो सकता तथा लाखों लोगों के जीवन का आनन्द समाप्त हो जाता है। (There can neither be health, nor economic prosperity nor the leisured pursuit of art and literature and culture in a world that is either plunged in or overshadowed by war.) ।

भी अनिवार्य हो गया है (There is no more dangerous maxim in the world of today than "My country, right or wrong". The whole world is now so intimately inter-connected that no nation can endure alone and the development of a sense of world citizenship has become just as important as that of national citizenship) ।

भिन्न भिन्न वैज्ञानिक आविष्कारों जैसे जल-यान, वायु-यान, आकाश वाणी, टैलीवियन, चल-चित्र आदि के द्वारा हम एक दूसरे के बहुत निकट आ गए हैं। अब देश और काल के बन्धन टूट रहे हैं। एक देश की घटना का प्रभाव दूसरे देशों पर पड़ता है। इस लिए यह आवश्यक हो गया है कि भिन्न-भिन्न राष्ट्र आपस में मिल कर रहें।

अन्तर्राष्ट्रीय रूप से इतना निकट आ जाने पर भी आज विश्व-शान्ति कोसों दूर क्यों है ? इस समस्या का हल अब तक क्यों नहीं किया गया, जब कि सब को विदित ही है कि विश्व के किसी भी कोने में युद्ध छिड़ जाए, तो उसका सीधा प्रभाव अन्य स्थानों पर अवश्य ही होगा ? इसी बात को श्री के० जी० सैयीदन (K G Saiyidan) ने बड़े सुन्दर ढंग से पेश किया है :—"यूरोप में युद्ध प्रारम्भ होता है और तीस लाख व्यक्ति, अकाल के कारण, बंगाल में मारे जाते हैं। लाखों व्यक्तियों को अपने-अपने व्यवसाय तथा घर छोड़ने पड़ते हैं (A war starts in Europe and three million people die of famine in Bengal and millions more find themselves uprooted from their homeland, cut off from their national occupation and deprived of all that makes life pleasant and meaningful.)। आगे चल कर वे एक स्थान पर कहते हैं—"जब तक युद्ध का खतरा बना रहेगा तब तक स्वास्थ्य की दृष्टि से, आर्थिक दृष्टि से तथा कला और साहित्य की दृष्टि से हमारा विकास सम्भव नहीं हो सकता तथा लाखों लोगों के जीवन का आनन्द समाप्त हो जाता है। (There can neither be health, nor economic prosperity nor the leisured pursuit of art and literature and culture [illegible] it is either plunged in or overshadowed by war.)।

(vi) यदि भिन्न-भिन्न राष्ट्र आपस में सन्देह और भय के वातावरण में रहेंगे तो वैज्ञानिक आविष्कार मानव जाति का कल्याण नहीं कर सकते और प्रत्येक राष्ट्र अपनी राष्ट्रीय आय का प्रयोग युद्ध के लिए ही करेगा। इसलिए विश्व-बन्धुत्व की भावना का विकास अत्यन्त आवश्यक है।

(vii) कोई भी देश चाहे वह छोटा है या बड़ा, अपना स्वतन्त्र महत्व रखता है—इस बात का ज्ञान प्रत्येक बालक को होना चाहिए।

पाठशालाओं द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास

(i) पाठशाला में ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन किया जाए जिनके द्वारा सहयोग की भावना को पोषण मिले। व्यक्तिगत कार्य की अपेक्षा सामुदायिक (group) कार्य को अधिक महत्व दिया जाए।

(ii) भिन्न-भिन्न प्रजातन्त्रवादी मूल्यों जैसे व्यक्तित्व का विकास, सहनशीलता, परिवर्तन में विश्वास, भ्रातृभाव आदि को प्रोत्साहित किया जाए।

(iii) अलग-अलग धार्मिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक समुदायों में एकता और विश्वास की भावना उत्पन्न की जाए।

(iv) पाठ्यक्रम में अन्तर्राष्ट्रीय नागरिकता की शिक्षा को प्रमुख स्थान दिया जाए। पाठ्यपुस्तकों में इस बात की सूचना हो कि अन्य देशों के छात्र छात्राओं का जीवन किस प्रकार का है। उन देशों की क्या-क्या विशेषताएँ हैं। वहाँ का प्राकृतिक सौंदर्य कैसा है?

(v) अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण को विकसित करने के लिए पाठशालाओं में नीचे लिखे साधन अपनाये जा सकते हैं—

(क) पाठशाला और यू० एन० ओ० (U N. O.) में पूरा-पूरा सहयोग होना चाहिए। पाठशाला में विश्व-शान्ति दिवस तथा यू० एन० ओ० दिवस मनाए जाने चाहिए। विद्यार्थियों को यू० एन० ओ० के उद्देश्य बताए जाएँ। विद्यार्थियों को इस बात की जानकारी कराई जाए कि यू० एन० ओ० की भिन्न-भिन्न संस्थाएँ जैसे डब्ल्यू० एच० ओ० (W. H. O) तथा यूनेस्को (UNESCO) आदि क्या-क्या उपयोगी कार्य कर रही है।

(ख) यहाँ के नवयुवकों और अध्यापकों को दूसरे देशों में, तथा दूसरे

(vi) यदि भिन्न-भिन्न राष्ट्र आपस मे सन्देह और भय के वातावरण मे रहेंगे तो वैज्ञानिक आविष्कार मानव जाति का कल्याण नहीं कर सकते और प्रत्येक राष्ट्र अपनी राष्ट्रीय आय का प्रयोग युद्ध के लिए ही करेगा। इसलिए विश्व-बन्धुत्व की भावना का विकास अत्यन्त आवश्यक है।

(vii) कोई भी देश चाहे वह छोटा है या बड़ा, अपना स्वतन्त्र महत्व रखता है—इस बात का ज्ञान प्रत्येक बालक को होना चाहिए।

पाठशालाओं द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास

(i) पाठशाला मे ऐसे कार्यक्रमो का आयोजन किया जाए जिनके द्वारा सहयोग की भावना को पोषण मिले। व्यक्तिगत कार्य की अपेक्षा सामुदायिक (group) कार्य को अधिक महत्व दिया जाए।

(ii) भिन्न-भिन्न प्रजातन्त्रवादी मूल्यों जैसे व्यक्तित्व का विकास, सहनशीलता, परिवर्तन मे विश्वास, भ्रातृभाव आदि को प्रोत्साहित किया जाए।

(iii) अलग-अलग धार्मिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक समुदायों में एकता और विश्वास की भावना उत्पन्न की जाए।

(iv) पाठ्यक्रम में अन्तर्राष्ट्रीय नागरिकता की शिक्षा को प्रमुख स्थान दिया जाए। पाठ्यपुस्तको मे इस बात की सूचना हो कि अन्य देशो के छात्र छात्राओं का जीवन किस प्रकार का है। उन देशो की क्या-क्या विशेषताएँ हैं। वहाँ का प्राकृतिक सौंदर्य कैसा है ?

(v) अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण को विकसित करने के लिए पाठशालाओं मे नीचे लिखे साधन अपनाये जा सकते हैं—

(क) पाठशाला और यू० एन० ओ० (U N. O.) में पूरा-पूरा सहयोग होना चाहिए। पाठशाला में विश्व-शान्ति दिवस तथा यू० एन० ओ० दिवस मनाए जाने चाहिए। विद्यार्थियों को यू० एन० ओ० के उद्देश्य बताए जाएँ। विद्यार्थियों को इस बात की जानकारी कराई जाए कि यू० एन० ओ० की भिन्न-भिन्न संस्थाएँ जैसे डबल्यू० एच० ओ० (W. H. O) तथा यूनेस्को (UNESCO) आदि क्या-क्या उपयोगी कार्य कर रही है।

(ख) यहाँ के नवयुवकों और अध्यापको को दूसरे देशो में, तथ

शिक्षा की संस्थाएं

(Agencies of Education)

Q. 48. To what extent can it be said that the individual is the product of informal education? In terms of your answer explain the part that community and religion can play in giving informal education to the children of your country. [Agra 1955]

(आप इस कथन से कहाँ तक सहमत हैं कि व्यक्ति का निर्माण अनियमित शिक्षा द्वारा ही हुआ है ? समाज और धार्मिक संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली अनियमित शिक्षा पर प्रकाश डालें।) [आगरा १९५५]

Q. 49. Discuss briefly the relation (as it ought to be) between the various agencies of education (Formal and informal). [Agra 1950]

(शिक्षा की भिन्न-भिन्न संस्थाओं—नियमित तथा अनियमित—के परस्पर सम्बन्ध की विवेचना करो।) [आगरा १९५०]

Q. 50 What is meant by formal and informal agencies of education? Show why it has become more important in recent times to establish coordination between them. [Agra 1956]

(शिक्षा की नियमित तथा अनियमित संस्थाओं से क्या तात्पर्य है ? स्पष्ट कीजिए कि आधुनिक काल में दोनों प्रकार की संस्थाओं में सहयोग पर इतना बल क्यों दिया जाता है ?) [आगरा १९५६]

शिक्षा की संस्थाएं

(Agencies of Education)

Q. 48. To what extent can it be said that the individual is the product of informal education ? In terms of your answer explain the part that community and religion can play in giving informal education to the children of your country. [Agra 1955]

(आप इस कथन से कहाँ तक सहमत हैं कि व्यक्ति का निर्माण अनियमित शिक्षा द्वारा ही हुआ है ? समाज और धार्मिक संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली अनियमित शिक्षा पर प्रकाश डालें।) [आगरा १९५५]

Q. 49. Discuss briefly the relation (as it ought to be) between the various agencies of education (Formal and informal).

[Agra 1950]

(शिक्षा की भिन्न-भिन्न संस्थाओं—नियमित तथा अनियमित—के परस्पर सम्बन्ध की विवेचना करो।) [आगरा १९५०]

Q. 50 What is meant by formal and informal agencies of education ? Show why it has become more important in recent times to establish coordination between them. [Agra 1956]

(शिक्षा की नियमित तथा अनियमित संस्थाओं से क्या तात्पर्य है ? स्पष्ट कीजिए कि आधुनिक काल में दोनों प्रकार की संस्थाओं में सहयोग पर इतना बल क्यों दिया जाता है ?) [आगरा १९५६]

किया जा सकता है। इस रूप में हम इन्हें सक्रिय (active) तथा निष्क्रिय (passive) संस्थाएँ कह सकते हैं।

(क) सक्रिय संस्थाएँ (Active agencies)—इन संस्थाओं में हम कुटुम्ब, पाठशाला, धार्मिक संस्थाओं, खेल की संस्थाओं तथा अन्य सामाजिक संस्थाओं को सम्मिलित कर सकते हैं। इन संस्थाओं को सक्रिय इस लिए कहा गया है क्यों इन के कार्यक्रमों में, इन के सदस्यों का परस्पर आदान प्रदान होता है। पाठशाला में शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार कुटुम्ब में भी परिवार का प्रत्येक सदस्य एक दूसरे के आचरण को प्रभावित कर रहा है।

(ख) निष्क्रिय संस्थाएँ (Passive agencies)—आकाशवाणी, टेलीविज़न चल-चित्र तथा समाचार पत्र इत्यादि इसी प्रकार की संस्थाएँ हैं। यहाँ किसी भी प्रकार का आदान प्रदान नहीं चलता। चल-चित्र समाचार पत्र, आकाशवाणी इत्यादि दूसरों के आचरण को प्रभावित करते हैं परन्तु स्वयं उन पर प्रभाव नहीं होता। यहाँ पर शिक्षा की प्रक्रिया, द्वि-मुखी न होकर केवल मात्र एक मुखी है।

अब पाठशाला के अतिरिक्त कुछ अन्य संस्थाओं का संक्षेप में वर्णन किया जाता है :—

(i) घर (Home) या कुटुम्ब (Family)—बालकों की प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही होती है। उठना, बैठना, चलना फिरना, बोलना, खाना-पीना, कपड़े पहनना तथा छोटे मोटे काम बालक अपने माता पिता के संरक्षण में सीखते हैं। बाल्यावस्था बालकों के मानसिक विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। इस अवस्था में जो आदतें बालकों में पड़ जाती हैं, वे प्रायः चिरस्थायी होती हैं। अतएव बालकों की शिक्षा की दृष्टि से, माता पिता तथा उनके अभिभावकों का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जब तक पाठशालाओं का प्रारम्भ नहीं हुआ था, तब तक कुटुम्ब ही एक ऐसी संस्था थी जहाँ पर लोग शिक्षा ग्रहण करते थे। कुटुम्ब में जहाँ माता पिता बालकों को शिक्षा प्रदान करते हैं, वहाँ स्वयं भी कुछ सीखते हैं। कुटुम्ब के प्रधान होने

किया जा सकता है। इस रूप में हम इन्हें सक्रिय (active) तथा निष्क्रिय (passive) संस्थाएँ कह सकते हैं।

(क) सक्रिय संस्थाएँ (Active agencies)—इन संस्थाओं में हम कुटुम्ब, पाठशाला, धार्मिक संस्थाओं, खेल की संस्थाओं तथा अन्य सामाजिक संस्थाओं को सम्मिलित कर सकते हैं। इन संस्थाओं को सक्रिय इस लिए कहा गया है क्यों इन के कार्यक्रमों में, इन के सदस्यों का परस्पर आदान प्रदान होता है। पाठशाला में शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार कुटुम्ब में भी परिवार का प्रत्येक सदस्य एक दूसरे के आचरण को प्रभावित कर रहा है।

(ख) निष्क्रिय संस्थाएँ (Passive agencies)—आकाशवाणी, टेलीविज़न चल-चित्र तथा समाचार पत्र इत्यादि इसी प्रकार की संस्थाएँ हैं। यहाँ किसी भी प्रकार का आदान प्रदान नहीं चलता। चल-चित्र समाचार पत्र, आकाशवाणी इत्यादि दूसरों के आचरण को प्रभावित करते हैं परन्तु स्वयं उन पर प्रभाव नहीं होता। यहाँ पर शिक्षा की प्रक्रिया, द्वि-मुखी न होकर केवल मात्र एक मुखी है।

अब पाठशाला के अतिरिक्त कुछ अन्य संस्थाओं का संक्षेप में वर्णन किया जाता है :—

(i) घर (Home) या कुटुम्ब (Family)—बालकों की प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही होती है। उठना, बैठना, चलना फिरना, बोलना, खाना-पीना, कपड़े पहनना तथा छोटे मोटे काम बालक अपने माता पिता के संरक्षण में सीखते हैं। बाल्यावस्था बालकों के मानसिक विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। इस अवस्था में जो आदतें बालकों में पड़ जाती हैं, वे प्रायः चिरस्थायी होती हैं। अतएव बालकों की शिक्षा की दृष्टि से, माता पिता तथा उनके अभिभावकों का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जब तक पाठशालाओं का प्रारम्भ नहीं हुआ था, तब तक कुटुम्ब ही एक ऐसी संस्था थी जहाँ पर लोग शिक्षा ग्रहण करते थे। कुटुम्ब में जहाँ माता पिता बालकों को शिक्षा प्रदान करते हैं, वहाँ स्वयं भी कुछ सीखते हैं। कुटुम्ब के प्रधान होने

(iv) चल-चित्र (Cinema)—व्यक्ति के मन को प्रभावित करने के लिए आज के इस युग में चल-चित्रों का बहुत बड़ा हाथ है। ऊपरी तौर पर तो चल-चित्र केवल मनोरंजन का ही साधन है। दिन भर के घोर परिश्रम के पश्चात थका-मादा श्रमिक, दिन भर पढ़ाई में व्यस्त विद्यार्थी तथा दैनिक जीवन के संघर्षों में उलझा हुआ साधारण व्यक्ति केवल मनोरंजन के उद्देश्य से छवि-गृह (Cinema House) में जाता है। इस मनोरंजक तथा आकर्षक वातावरण में जो भी संस्कार ग्रहण किए जाते हैं, वे बड़े ही प्रभावशाली और चिरस्थायी होते हैं। इस दृष्टि से लोक-शिक्षा के विकास में चल-चित्रों का बहुत बड़ा हाथ है।

(v) आकाशवाणी (Radio)—समाचार वितरण के कार्य में आकाशवाणी का स्थान बहुत ऊँचा है। जब राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति डावाडोल होती है, जब समाचार-पत्रों की छपाई की अवधि असह्य हो उठती है वहाँ आकाशवाणी पर प्रसारित समाचार ही, हमारी उत्कण्ठा को शान्त कर सकने में समर्थ होते हैं। समाचारों के अतिरिक्त संगीत, वार्ताएँ, कवि सम्मेलन आदि का आयोजन भी आकाशवाणी के भिन्न-भिन्न केन्द्रों द्वारा किया जाता है। सांस्कृतिक विकास तथा लोगों की रुचियों को बहुमुखी बनाने का महत्वपूर्ण कार्य आकाशवाणी द्वारा ही सिद्ध हो सकता है। इसके अतिरिक्त स्पष्ट रूप से शिक्षा देने का कार्य भी आकाशवाणी द्वारा किया जा रहा है। प्रतिदिन विद्यार्थियों के लिए, कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं।

संग्रहालय (Museums)—जन शिक्षण में संग्रहालयों द्वारा बहुत लाभ उठाया जा सकता है। संग्रहालयों की सहायता से प्राप्त ज्ञान को स्थिर किया जा सकता है। व्यक्ति विचित्र वस्तुओं के संग्रह को देखता है, उसकी जिज्ञासा बढ़ती है, तथा ज्ञान बढ़ता है। यही शिक्षा है। संसार के महापुरुषों के चित्रों से लोगों के ज्ञान की मात्रा बढ़ाई जा सकती है। इसी प्रकार जीव-शास्त्र तथा मानव-विज्ञान (Anthropology) का ज्ञान एकत्रित पशुओं तथा भूगर्भ से प्राप्त ‑वालों को देखने से ही हो सकता है।

(iv) चल-चित्र (Cinema)—व्यक्ति के मन को प्रभावित करने के लिए आज के इस युग में चल-चित्रों का बहुत बड़ा हाथ है। ऊपरी तौर से तो चल-चित्र केवल मनोरंजन का ही साधन हैं। दिन भर के घोर परिश्रम के पश्चात थका-मादा श्रमिक, दिन भर पढ़ाई में व्यस्त विद्यार्थी तथा नित्यप्रति के संघर्षों में उलझा हुआ साधारण व्यक्ति केवल मनोरंजन के उद्देश्य से छवि-गृह (Cinema House) में जाता है। इस मनोरंजक तथा आकर्षक वातावरण में जो भी संस्कार ग्रहण किए जाते हैं, वे बड़े ही प्रभावशाली और चिरस्थायी होते हैं। इस दृष्टि से लोक-शिक्षा के विकास में चल-चित्रों का बहुत बड़ा हाथ है।

(v) आकाशवाणी (Radio)—समाचार वितरण के कार्य में आकाशवाणी का स्थान बहुत ऊँचा है। जब राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति डावाडोल होती है, जब समाचार-पत्रों की छपाई की अवधि असह्य हो उठती है वहाँ आकाशवाणी पर प्रसारित समाचार ही, हमारी उत्कण्ठा को शान्त कर सकने में समर्थ होते हैं। समाचारों के अतिरिक्त संगीत, वार्ताएँ, कवि सम्मेलन आदि का आयोजन भी आकाशवाणी के भिन्न-भिन्न केन्द्रों द्वारा किया जाता है। सांस्कृतिक विकास तथा लोगों की रुचियों को बहुमुखी बनाने का महत्त्वपूर्ण कार्य आकाशवाणी द्वारा ही सिद्ध हो सकता है। इसके अतिरिक्त स्पष्ट रूप से शिक्षा देने का कार्य भी आकाशवाणी द्वारा किया जा रहा है। प्रतिदिन विद्यार्थियों के लिए, कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं।

संग्रहालय (Museums)—जन शिक्षण में संग्रहालयों द्वारा बहुत लाभ उठाया जा सकता है। संग्रहालयों की सहायता से प्राप्त ज्ञान को स्थिर किया जा सकता है। व्यक्ति विचित्र वस्तुओं के संग्रह को देखता है, उसकी जिज्ञासा बढ़ती है, तथा ज्ञान बढ़ता है। यही शिक्षा है। संसार के महापुरुषों के चित्रों से लोगों के ज्ञान की मात्रा बढ़ाई जा सकती है। इसी प्रकार जीव-शास्त्र तथा मानव-विज्ञान (Anthropology) का ज्ञान एकत्रित पशुओं तथा भूगर्भ से प्राप्त कंकालों को देखने से ही हो सकता है।

पाठशाला का प्रारम्भ तथा विकास
(The Origin and Growth of the School)

मनुष्य का प्रारम्भिक जीवन बड़ा असुरक्षित तथा अभावपूर्ण था। उसे सदा संघर्ष में लगे रहना पड़ता था। इस लिए किसी न किसी प्रकार के सामाजिक संगठन की आवश्यकता थी, जो मनुष्यों को मिल जुल कर रहना सिखाता, उत्तरदायित्वों का ज्ञान कराता तथा समाज की भलाई के लिए काम करने की प्रेरणा देता।

अपने प्रारम्भिक स्वरूप में संस्कृति का स्वरूप अत्यन्त साधारण था। बालक जो कुछ भी सीखना चाहता था, निरीक्षण (Observation), अनुकरण (imitation) तथा प्रयत्न और भूल (Trial and error) के द्वारा सीख लेता। कुछ सामाजिक रूढ़ियां (Taboos) भी थी जिनको समझना कोई कठिन नहीं था।

कला, संगीत, वीर-गाथाओं, धार्मिक कृत्यों तथा रूढ़ियों आदि का धीरे धीरे विकास होता गया। अब संस्कृति का वह सरल रूप न रहा।

भाषा, लिपि तथा अंकों के विकास के पश्चात सांस्कृतिक परम्परा बड़े वेग से प्रवाहित होने लगी। अब समाज का सीधा सादा रूप लुप्त हो गया। संस्कृति की भिन्न-भिन्न विशेषताएं प्रकट होने लगी। अब एक ऐसी नियमित संस्था की आवश्यकता थी जो सामाजिक और सांस्कृतिक परम्परा को सुरक्षित रख कर उसका प्रसार आगे की पीढ़ी में कर सके। दूसरे शब्दों में पाठशाला का निर्माण, एक नियमित संस्था के रूप में इस लिए किया गया क्योंकि अन्य अनियमित संस्थाएँ, सांस्कृतिक परम्पराओं के संरक्षण तथा प्रसार का कार्य भलीभान्ति न कर सकी। परन्तु पाठशालाओं द्वारा होने वाला यह लाभ कुछ इन गिने, उच्च वर्ग के लोगों को ही प्राप्त था। जन-साधारण की शिक्षा तो अनियमित संस्थाओं द्वारा ही चल रही थी। सर्व-साधारण के लिए, पाठशालाओं की व्यवस्था करना, यह तो आधुनिक काल की देन है।

उस समय राज्य और धर्म, ये भिन्न भिन्न संस्थाएँ नहीं थीं। इस लिए धार्मिक नेता ही सर्व प्रथम शिक्षक के रूप में हमारे सामने आए।

पाठशाला का प्रारम्भ तथा विकास
(The Origin and Growth of the School)

मनुष्य का प्रारम्भिक जीवन बड़ा असुरक्षित तथा अभावपूर्ण था। उसे सदा संघर्ष में लगे रहना पड़ता था। इस लिए किसी न किसी प्रकार के सामाजिक संगठन की आवश्यकता थी, जो मनुष्यों को मिल जुल कर रहना सिखाता, उत्तरदायित्वों का ज्ञान कराता तथा समाज की भलाई के लिए काम करने की प्रेरणा देता।

अपने प्रारम्भिक स्वरूप में संस्कृति का स्वरूप अत्यन्त साधारण था। बालक जो कुछ भी सीखना चाहता था, निरीक्षण (Observation), अनुकरण (imitation) तथा प्रयत्न और भूल (Trial and error) के द्वारा सीख लेता। कुछ सामाजिक रूढ़ियां (Taboos) भी थी जिनको समझना कोई कठिन नहीं था।

कला, संगीत, वीर-गाथाओं, धार्मिक कृत्यों तथा रूढ़ियों आदि का धीरे धीरे विकास होता गया। अब संस्कृति का वह सरल रूप न रहा।

भाषा, लिपि तथा अकों के विकास के पश्चात सांस्कृतिक परम्परा बड़े वेग से प्रवाहित होने लगी। अब समाज का सीधा सादा रूप लुप्त हो गया। संस्कृति की भिन्न-भिन्न विशेषताएं प्रकट होने लगी। अब एक ऐसी नियमित संस्था की आवश्यकता थी जो सामाजिक और सांस्कृतिक परम्परा को सुरक्षित रख कर उसका प्रसार आगे की पीढ़ी में कर सके। दूसरे शब्दों में पाठशाला का निर्माण, एक नियमित संस्था के रूप में इस लिए किया गया क्योंकि अन्य अनियमित संस्थाएँ, सांस्कृतिक परम्पराओं के संरक्षण तथा प्रसार का कार्य भलीभान्ति न कर सकी। परन्तु पाठशालाओं द्वारा होने वाला यह लाभ कुछ इन गिने, उच्च वर्ग के लोगों को ही प्राप्त था। जन-साधारण की शिक्षा तो अनियमित संस्थाओं द्वारा ही चल रही थी। सर्व-साधारण के लिए, पाठशालाओं की व्यवस्था करना, यह तो आधुनिक काल की देन है।

उस समय राज्य

सके। केवल घर की चारदीवारी में उसका दृष्टिकोण संकुचित रह जाएगा। पाठशाला उसे पूर्ण जीवन के लिए तैयार करेगी।

(iv) पहले पुत्र द्वारा पिता के व्यवसाय को ही अपनाया जाता था। अब बालक के सम्मुख कितने ही व्यवसाय हैं। पाठशाला व्यवसाय के निर्वाचन में बालक का पथ-प्रदर्शन करेगी।

(v) युग की माँग के अनुसार संस्कृति का विकास आवश्यक है। यह विकास नए अनुभवों के आधार पर ही सम्भव हो सकता है। पाठशाला ही एक ऐसा स्थान है जहाँ पर बालकों को नए नए अनुभवों की प्राप्ति कराई जा सकती है।

(vi) आज प्रजातन्त्रवाद का युग है। प्रजातन्त्रवादी सिद्धान्तों के अनुसार प्रत्येक नागरिक के कुछ अधिकार तथा कर्त्तव्य हैं। हर एक नागरिक को इन अधिकारों और कर्त्तव्यों का पालन उचित रीति से करना होता है। यह तभी सम्भव हो सकता है जब कि प्रारम्भ में ही बालकों के हृदय में नागरिकता के गुणों का विकास किया जाए। पाठशाला ही एक ऐसी संस्था है जहाँ कि विद्यार्थियों को उत्तरदायी नागरिक के रूप में तैयार किया जा सकता है।

(vii) बालक के व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए नैतिक शिक्षा (moral education) की नितान्त आवश्यकता है। पहले इस कार्य का भार कुटुम्ब तथा धार्मिक संस्थाओं पर था। परन्तु अब धर्म का धीरे धीरे लोप हो रहा है और संयुक्त परिवार भी टूट रहे हैं। अतएव पाठशाला ही एक ऐसी संस्था रह जाती है जो नैतिक शिक्षा का उत्तरदायित्व वहन कर सके।

Q. 51. [illegible]

(हमारे देश में, घरेलू शिक्षा का बालक को पाठशाला सम्बन्धी शिक्षा पर क्या प्रभाव पड़ता है ? यह प्रभाव किस प्रकार का होना चाहिए और उसे प्राप्त करने के लिए किन-किन साधनों को अपनाया जाएगा।)

[आगरा १९५२]

सके। केवल घर की चारदीवारी में उसका दृष्टिकोण संकुचित रह जाएगा। पाठशाला उसे पूर्ण जीवन के लिए तैयार करेगी।

(iv) पहले पुत्र द्वारा पिता के व्यवसाय को ही अपनाया जाता था। अब बालक के सम्मुख कितने ही व्यवसाय हैं। पाठशाला व्यवसाय के निर्वाचन में बालक का पथ-प्रदर्शन करेगी।

(v) युग की माँग के अनुसार संस्कृति का विकास आवश्यक है। यह विकास नए अनुभवों के आधार पर ही सम्भव हो सकता है। पाठशाला ही एक ऐसा स्थान है जहाँ पर बालकों को नए नए अनुभवों की प्राप्ति कराई जा सकती है।

(vi) आज प्रजातन्त्रवाद का युग है। प्रजातन्त्रवादी सिद्धान्तों के अनुसार प्रत्येक नागरिक के कुछ अधिकार तथा कर्त्तव्य हैं। हर एक नागरिक को इन अधिकारों और कर्त्तव्यों का पालन उचित रीति से करना होता है। यह तभी सम्भव हो सकता है जब कि प्रारम्भ में ही बालकों के हृदय में नागरिकता के गुणों का विकास किया जाए। पाठशाला ही एक ऐसी संस्था है जहाँ कि विद्यार्थियों को उत्तरदायी नागरिक के रूप में तैयार किया जा सकता है।

(vii) बालक के व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए नैतिक शिक्षा (moral education) की नितान्त आवश्यकता है। पहले इस कार्य का भार कुटुम्ब तथा धार्मिक संस्थाओं पर था। परन्तु अब धर्म का धीरे धीरे लोप हो रहा है और संयुक्त परिवार भी टूट रहे हैं। अतएव पाठशाला ही एक ऐसी संस्था रह [illegible]

होता है। यह कार्य स्थिर (Static) नहीं है। सभी सदस्य एक दूसरे पर अपना प्रभाव डालते रहते हैं। यही एक ऐसी संस्था है जहाँ बालक समाज के तौर तरीके सीखता है, अपनी संस्कृति की प्रारम्भिक बातों का ज्ञान प्राप्त करता है तथा अपने व्यक्तित्व का विकास करता है।

(ख) परिवार का अपना एक विशिष्ट व्यक्तित्व भी होता है। परिवार के द्वारा अपने पन की भावना (We-feeling) का विकास होता है। प्राय. लोगों को यह कहते, सुना गया है कि अमुक बात परिवार की मान-मर्यादा के अनुकूल नहीं। भिन्न-भिन्न परिवारों की रुचियाँ, बोलचाल के ढंग तथा रहने-सहने के तरीके अलग-अलग होते हैं।

(ग) परिवार के द्वारा ही बालक की बहुत सी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। परिवार मे रह कर ही बालक को संवेगात्मक अनुभव (emotional expriences) प्राप्त होते हैं। इन संवेगात्मक अनुभवों के आधार पर बालक के सीखने (learning) की प्रक्रिया चलती है। यदि ये अनुभव सन्तोषजनक हुए, तो बालक को सीखने की प्रेरणा मिलेगी और वह किसी बात को जल्दी सीखेगा अन्यथा कटु अनुभवों के द्वारा उसके सीखने की प्रक्रिया मे बाधा पड सकती है।

(घ) अतीत काल मे परिवार ही समाज की आर्थिक, सामाजिक तथा धर्म सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करता था।

(च) यद्यपि वर्तमान काल मे परिवार विघटन (disintegration) की अवस्था मे है परन्तु फिर भी शिक्षा की दृष्टि से उसका महत्व कम नहीं हुआ। यही एक ऐसा स्थान है जहाँ हमारे अपने पन की भावना (bellongingness) की सन्तुष्ट होती है। परिवार का सदस्य होने के नाते बालक मनोवैज्ञानिक रूप से अपने आपको सुरक्षित अनुभव करते हैं। यह मनोवैज्ञानिक सुरक्षा (Psychological security) बालक के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

(छ) बालक पाठशाला की अपेक्षा घर मे अधिक समय तक रहते ... लिए उन की शिक्षा को सफल बनाने के लिए घर और पाठशाला मे

होता है। यह कार्य स्थिर (Static) नहीं है। सभी सदस्य एक दूसरे पर अपना प्रभाव डालते रहते हैं। यही एक ऐसी संस्था है जहाँ बालक समाज के तौर तरीके सीखता है, अपनी संस्कृति की प्रारम्भिक बातों का ज्ञान प्राप्त करता है तथा अपने व्यक्तित्व का विकास करता है।

(ख) परिवार का अपना एक विशिष्ट व्यक्तित्व भी होता है। परिवार के द्वारा अपने पन की भावना (We-feeling) का विकास होता है। प्राय. लोगों को यह कहते, सुना गया है कि अमुक बात परिवार की मान-मर्यादा के अनुकूल नहीं। भिन्न-भिन्न परिवारों की रुचियाँ, बोलचाल के ढंग तथा रहने-सहने के तरीके अलग-अलग होते हैं।

(ग) परिवार के द्वारा ही बालक की बहुत सी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। परिवार में रह कर ही बालक को संवेगात्मक अनुभव (emotional expriences) प्राप्त होते हैं। इन संवेगात्मक अनुभवों के आधार पर बालक के सीखने (learning) की प्रक्रिया चलती है। यदि ये अनुभव सन्तोषजनक हुए, तो बालक को सीखने की प्रेरणा मिलेगी और वह किसी बात को जल्दी सीखेगा अन्यथा कटु अनुभवों के द्वारा उसके सीखने की प्रक्रिया में बाधा पड सकती है।

(घ) अतीत काल में परिवार ही समाज की आर्थिक, सामाजिक तथा धर्म सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करता था।

(च) यद्यपि वर्तमान काल में परिवार विघटन (disintegration) की अवस्था में है परन्तु फिर भी शिक्षा की दृष्टि से उसका महत्व कम नहीं हुआ। यही एक ऐसा स्थान है जहाँ हमारे अपने पन की भावना (bellongingness) की सन्तुष्ट होती है। परिवार का सदस्य होने के नाते बालक मनोवैज्ञानिक रूप से अपने आपको सुरक्षित अनुभव करते हैं। यह मनोवैज्ञानिक सुरक्षा (Psychological security) बालक के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

(छ) बालक पाठशाला की अपेक्षा घर में अधिक समय तक रहते हैं। इस लिए उन की शिक्षा को सफल बनाने के लिए घर और पाठशाला में

सके। आत्माभिव्यक्ति के कार्य को बढ़ावा देने के लिए समाचार पत्रों तथा मासिक पत्रिकाओं से भी सहायता ली जा सकती है।

(३) कुटुम्ब को इस बात का ध्यान रखना होगा कि प्रारम्भ से ही बालक के बौद्धिक (intellectual) तथा कलात्मक (aesthetic) गुणों की वृद्धि हो।

(४) घर ही ऐसा स्थान है जहाँ बालक का धार्मिक विकास सम्भव हो सकता है। इस लिए परिवार को इस दिशा में सचेत होना चाहिए।

(५) बालक को घर पर, काम करने के अवसर प्रदान किए जाएँ जिससे कि वह अपने उत्तरदायित्व को समझने लगे और उसको जीवन की व्यवहारिक बातों का ज्ञान प्राप्त हो। माता-पिता का यह कर्त्तव्य है कि वे बालक में अध्यवसाय, परिश्रम, अनुशासन तथा परिवार के लिए उपयोगी होने के गुणों का विकास करने की चेष्टा करें।

(६) घर में बालक की व्यक्तिगत आवश्यकताओं और रुचियों का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाए क्योंकि पाठशाला के सामूहिक शिक्षण (group teaching) में ऐसा हो सकना सम्भव नहीं है।

(७) जहाँ किन्हीं भी कारणों से माता-पिता उपरोक्त बातें पूरी न कर सकें, वहाँ बालकों को शिशु शालाओं (Kindergartens, Nurseries) में भेजा जा सकता है।

(८) माता-पिता को यह सोच-समझ लेना चाहिए कि पाठशाला की अपनी कुछ सीमाएँ हैं। कुटुम्ब तथा पाठशाला दोनों ही बालक की शिक्षा के लिए उत्तरदायी हैं। दोनों के उत्तरदायित्व में विभाजन की कोई सीधी रेखा नहीं खींची जा सकती। इस लिए दोनों में परस्पर सहयोग की भावना होनी चाहिए।

परिवार के कार्य (Functions)

ओगबर्न (Ogburn) के अनुसार परिवार के निम्नलिखित सात कार्य हैं :—

(i) स्नेह प्रदान करना (ii) सुरक्षा की व्यवस्था करना (iii) शिक्षा

सके। आत्माभिव्यक्ति के कार्य को बढ़ावा देने के लिए समाचार पत्रों तथा मासिक पत्रिकाओं से भी सहायता ली जा सकती है।

(३) कुटुम्ब को इस बात का ध्यान रखना होगा कि प्रारम्भ से ही बालक के बौद्धिक (intellectual) तथा कलात्मक (aesthetic) गुणों की वृद्धि हो।

(४) घर ही ऐसा स्थान है जहाँ बालक का धार्मिक विकास सम्भव हो सकता है। इस लिए परिवार को इस दिशा में सचेत होना चाहिए।

(५) बालक को घर पर, काम करने के अवसर प्रदान किए जाएँ जिससे कि वह अपने उत्तरदायित्व को समझने लगे और उसको जीवन की व्यवहारिक बातों का ज्ञान प्राप्त हो। माता-पिता का यह कर्तव्य है कि वे बालक में अध्यवसाय, परिश्रम, अनुशासन तथा परिवार के लिए उपयोगी होने के गुणों का विकास करने की चेष्टा करें।

(६) घर में बालक की व्यक्तिगत आवश्यकताओं और रुचियों का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाए क्योंकि पाठशाला के सामूहिक शिक्षण (group teaching) में ऐसा हो सकना सम्भव नहीं है।

(७) जहाँ किन्हीं भी कारणों से माता-पिता उपरोक्त बातें पूरी न कर सकें, वहाँ बालकों को शिशु शालाओं (Kindergartens, Nurseries) में भेजा जा सकता है।

(८) माता-पिता को यह सोच-समझ लेना चाहिए कि पाठशाला की अपनी कुछ सीमाएँ हैं। कुटुम्ब तथा पाठशाला दोनों ही बालक की शिक्षा के लिए उत्तरदायी हैं। दोनों के उत्तरदायित्व में विभाजन की कोई सीधी रेखा नहीं खींची जा सकती। इस लिए दोनों में परस्पर सहयोग की भावना होनी चाहिए।

परिवार के कार्य (Functions)

ओगबर्न (Ogburn) के अनुसार परिवार के निम्नलिखित सात कार्य हैं :—

(i) स्नेह प्रदान करना (ii) सुरक्षा की व्यवस्था करना (iii) शिक्षा

: के काम काज में सहायता दिया करती थी।

वर्तमान स्थिति

औद्योगीकरण के फलस्वरूप धीरे-धीरे संयुक्त परिवारों का लोप हो रहा । अब बड़े-बड़े परिवारों के स्थान पर छोटे छोटे परिवार होने लगे हैं। परिवार के भिन्न-भिन्न सदस्यों में सम्पर्क कम हो रहा है। विवाह देर से होने लगा है। परिवार-नियोजन (Family planning) के लिए भिन्न-भिन्न साधनों का प्रयोग किया जा रहा है। सरकार द्वारा विवाह-विच्छेद का कानून पास हो ही चुका है। परिवार के सदस्यों को जीवन-निर्वाह के लिए दूर-दूर जाना पड़ता है। इसलिए परिवार अब अपने सदस्यों की सभी आवश्यकताएं पूरी करने में असमर्थ है। व्यवसायों का चुनाव भी पैतृक आधार पर न होकर स्वतन्त्र रूप से व्यक्तिगत रुचियों के अनुसार होने लगा है। इन सब कारणों से परिवार के कर्तव्य में उत्तरदायित्व पाठशाला ने सम्भाल लिए हैं।

इतना सब होने पर भी परिवार की उपयोगिता की ओर कोई दुर्लक्ष नहीं कर सकता। अपनेपन (belongingness) की भावना, आदतों (habits) का विकास, सुरक्षा का भाव तथा स्नेह (affection) का आदान प्रदान, यह सब बातें परिवार में ही सम्भव हो सकती है।

Q. 56. Discuss the relation between education and social order.

(शिक्षा और सामाजिक व्यवस्था आपस में किस प्रकार सम्बन्धित हैं, स्पष्ट करो।)

Q. 57. What is the role of education in social change ?

(सामाजिक परिवर्तनों में शिक्षा के कार्य पर प्रकाश डालो।)

Q. 58 In what different ways does education affect th social order ? And how does the social order influence the educatio of a country ? (Panjab 195

जाया करती थीं और बालिकाएं सुगृहिणियां बनने के लिए अपनी माताओं को घर के काम काज में सहायता दिया करती थीं।

वर्तमान स्थिति

औद्योगीकरण के फलस्वरूप धीरे-धीरे संयुक्त परिवारों का लोप हो रहा है। अब बड़े-बड़े परिवारों के स्थान पर छोटे छोटे परिवार होने लगे हैं। परिवार के भिन्न-भिन्न सदस्यों में सम्पर्क कम हो रहा है। विवाह देर से होने लगा है। परिवार-नियोजन (Family planning) के लिए भिन्न-भिन्न साधनों का प्रयोग किया जा रहा है। सरकार द्वारा विवाह-विच्छेद का कानून पास हो ही चुका है। परिवार के सदस्यों को जीवन-निर्वाह के लिए दूर-दूर जाना पड़ता है। इसलिए परिवार अब अपने सदस्यों की सभी आवश्यकताएं पूरी करने में असमर्थ है। व्यवसायों का चुनाव भी पैतृक आधार पर न होकर स्वतन्त्र रूप से व्यक्तिगत रुचियों के अनुसार होने लगा है। इन सब कारणों से परिवार के बहुत से उत्तरदायित्व पाठशाला ने सम्भाल लिए हैं।

इतना सब होने पर भी परिवार की उपयोगिता की ओर कोई दुर्लक्ष नहीं कर सकता। अपनेपन (belongingness) की भावना, आदतों (habits) का विकास, सुरक्षा का भाव तथा स्नेह (affection) का आदान प्रदान, यह सब बातें परिवार में ही सम्भव हो सकती हैं।

Q. 56. Discuss the relation between education and social order.

(शिक्षा और सामाजिक व्यवस्था आपस में किस प्रकार सम्बन्धित हैं, स्पष्ट करो।)

Q. 57. What is the role of education in social change ?

(सामाजिक परिवर्तनों में शिक्षा के कार्य पर प्रकाश डालो।)

Q. 58 In what different ways does education affect the social order ? And how does the social order influence the education of a country ? [Panjab 1955]

अपने वातावरण के साथ सन्तुलन बनाए रखने के लिए मनुष्य अपनी आदतों में, विचारों में तथा प्रयोजनों में जो हेर-फेर करता है—वे सब बातें सामाजिक परिवर्तन में आ जाती हैं। भौतिक तथा सामाजिक रूप से मनुष्य का वातावरण सदा बदलता रहता है और इस बदलते हुए वातावरण के साथ सामञ्जस्य बनाए रखने के लिए उसे अपने आप को बदलना ही पड़ता है।

में परिवर्तन तथा (ii) मानसिक संस्कृति (non-material culture) में परिवर्तन। सबसे पहले भौतिक संस्कृति में परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन बहुत जल्दी-जल्दी तथा अधिक प्रभावशाली ढंग से होता है। बाद में भौतिक संस्कृति के इन परिवर्तनों का प्रभाव मानसिक संस्कृति पर भी पड़ता है और हमारे विचारों तथा रीति-रिवाजों में अन्तर आ जाता है।

सामाजिक परिवर्तन के कारण (Factors that Determine Social Change)—

सामाजिक परिवर्तन के अनेकों कारण हो सकते हैं—

(i) यातायात और आवागमन के नए-नए साधन, नए आविष्कारों के आधार पर वस्तु-निर्माण (manufacture) के साधनों में परिवर्तन—इन सबका प्रभाव भौतिक संस्कृति पर पड़ता है।

(ii) धार्मिक समुदायों (sects) का उत्थान तथा पतन—इन का प्रभाव मानसिक संस्कृति पर पड़ता है।

(iii) सामाजिक परिवर्तन का एक और महत्वपूर्ण कारण है, भिन्न-भिन्न संस्कृतियों का परस्पर मिलन (diffusion)। भिन्न-भिन्न संस्कृतियाँ जब एक दूसरे के सम्पर्क में आती हैं तो वे एक दूसरे की बहुत सी बातें ग्रहण कर लेती हैं। उदाहरण स्वरूप हमारे खान-पान तथा पहनने के वस्त्रों पर ... का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। इस रूप में यह पश्चिमी

अपने वातावरण के साथ सन्तुलन बनाए रखने के लिए मनुष्य अपनी आदतों में, विचारों में तथा प्रयोजनों में जो हेर-फेर करता है—वे सब बातें सामाजिक परिवर्तन में आ जाती हैं। भौतिक तथा सामाजिक रूप से मनुष्य का वातावरण सदा बदलता रहता है और इस बदलते हुए वातावरण के साथ सामञ्जस्य बनाए रखने के लिए उसे अपने आप को बदलना ही पड़ता है।

में परिवर्तन तथा (ii) मानसिक संस्कृति (non-material culture) में परिवर्तन। सबसे पहले भौतिक संस्कृति में परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन बहुत जल्दी-जल्दी तथा अधिक प्रभावशाली ढंग से होता है। बाद में भौतिक संस्कृति के इन परिवर्तनों का प्रभाव मानसिक संस्कृति पर भी पड़ता है और हमारे विचारों तथा रीति-रिवाजों में अन्तर आ जाता है।

सामाजिक परिवर्तन के कारण (Factors that Determine Social Change)—

सामाजिक परिवर्तन के अनेकों कारण हो सकते हैं—

(i) यातायात और आवागमन के नए-नए साधन, नए आविष्कारों के धार पर वस्तु-निर्माण (manufacture) के साधनों में परिवर्तन—इन का प्रभाव भौतिक संस्कृति पर पड़ता है।

(ii) धार्मिक समुदायों (sects) का उत्थान तथा पतन—इन का भाव मानसिक संस्कृति पर पड़ता है।

(iii) सामाजिक परिवर्तन का एक और महत्वपूर्ण कारण है, भिन्न-भिन्न संस्कृतियों का परस्पर मिलन (diffusion)। भिन्न-भिन्न संस्कृतियां ब एक दूसरे के सम्पर्क में आती हैं तो वे एक दूसरे की बहुत सी बातें ग्रहण लेती हैं। उदाहरण स्वरूप हमारे खान-पान तथा पहनने के वस्त्रों पर [illegible] का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। इस रूप में यह परिचम [illegible] का प्रत्यक्ष प्रभाव है। समाचार पत्रों, पुस्तकों तथा आकाशवाणी

स्वरूप हमने, अपने विधान के अनुसार, प्रजातन्त्रवादी व्यवस्था को राजनैतिक दृष्टि से अपनाया है और प्रत्येक प्रौढ़ (adult) व्यक्ति को मताधिकार प्राप्त है। परन्तु क्या इस प्रजातन्त्रवाद के सिद्धान्तों का प्रयोग हम अपने व्यवहारिक तथा सामाजिक जीवन में भी करते हैं? क्या एक साधारण व्यक्ति अपने मत का ठीक-ठीक प्रयोग करना जानता है?

समाज के भिन्न-भिन्न अंगों में सन्तुलन बनाए रखना, यही कार्य प्रमुख रूप से शिक्षा का है, अर्थात् बदलती हुई परिस्थिति के अनुसार समाज को तैयार करना। शिक्षा यह कार्य ठीक प्रकार से कर सके, इसके नीचे लिखी बातों का होना आवश्यक है —

(क) शिक्षा, नित्य परिवर्तनशील समाज का वास्तविक रूप से प्रतिनिधित्व करे। वह सदा प्रेरणा देने में आगे रहे। समाज के पुनर्गठन के लिए शिक्षा नए-नए विचारों को प्रस्फुटित करे।

(ख) यदि शिक्षा ने एक रचनात्मक शक्ति (Creative force) के रूप में काम करना है, तो अध्यापकों को नवीन विचारों की देन में समाज का नेतृत्व करना होगा। वे पाठ्यक्रम के द्वारा, शिक्षा की नई पद्धतियों के द्वारा, तथा समाज के गतिशील मूल्यों (dynamic values) पर बल देकर, जन साधारण को नवीन समाज के निर्माण में प्रेरित करें।

(ग) समाज के नव निर्माण का जो उत्तरदायित्व पाठशाला पर है वह बड़ा महत्वपूर्ण है क्योंकि वर्तमान समय में शिक्षा बाल-केन्द्रित है। शिक्षा का यह महत्वपूर्ण कार्य है कि वह बालक का विकास इस ढंग से करे कि आगे जाकर वह समाज का नेतृत्व कर सके।

(घ) प्रजातन्त्रवादी सिद्धान्त भी इस बात के लिए प्रेरित करते हैं कि शिक्षा रचनात्मक शक्ति के रूप में कार्य करे। प्रजातन्त्रवाद में शिक्षा का यह कर्त्तव्य है कि वह सामाजिक उपयोगिता को सामने रखते हुए, बालक के व्यवहार में हेर फेर करे। बालक में उन योग्यता की वृद्धि करे जिसके आधार पर, वह भविष्य में, समाज के विकास में, सहायक सिद्ध हो सके। ओटावे (Ottaway) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "एड्केशन एण्ड सोसायटी"

स्वरूप हमने, अपने विधान के अनुसार, प्रजातन्त्रवादी व्यवस्था को राजनैतिक दृष्टि से अपनाया है और प्रत्येक प्रौढ़ (adult) व्यक्ति को मताधिकार प्राप्त है। परन्तु क्या इस प्रजातन्त्रवाद के सिद्धान्तों का प्रयोग हम अपने व्यवहारिक तथा सामाजिक जीवन में भी करते हैं? क्या एक साधारण व्यक्ति अपने मत का ठीक-ठीक प्रयोग करना जानता है? (नहीं)।

समाज के भिन्न-भिन्न अंगों में सन्तुलन बनाए रखना, यही कार्य प्रमुख रूप से शिक्षा का है, अर्थात् बदलती हुई परिस्थिति के अनुसार समाज को यार करना। शिक्षा यह कार्य ठीक प्रकार से कर सके, इसके नीचे लिखी तों का होना आवश्यक है —

(क) शिक्षा, नित्य परिवर्तनशील समाज का वास्तविक रूप से प्रतिनिधित्व करे। वह सदा प्रेरणा देने में आगे रहे। समाज के पुनर्गठन के लिए शिक्षा नए-नए विचारों को प्रस्फुटित करे।

(ख) यदि शिक्षा ने एक रचनात्मक शक्ति (Creative force) के रूप में काम करना है, तो अध्यापकों को नवीन विचारों की देन में समाज का नेतृत्व करना होगा। वे पाठ्यक्रम के द्वारा, शिक्षा की नई पद्धतियों के द्वारा, तथा समाज के गतिशील मूल्यों (dynamic values) पर बल देकर, जन साधारण को नवीन समाज के निर्माण में प्रेरित करें। O.1

(ग) समाज के नव निर्माण का जो उत्तरदायित्व पाठशाला पर है वह बड़ा महत्वपूर्ण है क्योंकि वर्तमान समय में शिक्षा बाल-केन्द्रित है। शिक्षा का यह महत्वपूर्ण कार्य है कि वह बालक का विकास इस ढंग से करे कि आगे जाकर वह समाज का नेतृत्व कर सके।

(घ) प्रजातन्त्रवादी सिद्धान्त भी इस बात के लिए प्रेरित करते हैं कि शिक्षा रचनात्मक शक्ति के रूप में कार्य करे। प्रजातन्त्रवाद में शिक्षा का यह कर्तव्य है कि वह सामाजिक उपयोगिता को सामने रखते हुए, बालक के आचरण में हेर फेर करे। बालक में उन योग्यता की वृद्धि करे जिसके आधार पर, वह भविष्य में, समाज के विकास में, सहायक सिद्ध हो सके। ओटावे (Ottaway) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "एजूकेशन एण्ड सोसायटी"

परन्तु इस घनिष्टता का यह अर्थ कदापि नहीं कि उन मे से एक दूसरे को नियन्त्रित करने का यत्न करे। राज्य भी समाज का ही एक रूप है। कुछ लोगो के विचार मे राज्य और समाज दोनों पर्यायवाची शब्द है। समाज के अन्दर जो भिन्न-भिन्न समुदाय हैं, उन का ही सामूहिक नाम राज्य है। बड़े-बड़े राज्याधिकारी, व्यापारी, अध्यापक, विद्यार्थी सभी इस सगठन का एक अग है। राज्य एक ऐसी सत्ता है जो अपने सब सदस्यो से कहीं बढ़ चढ़ कर है। इस का स्थान सर्वोपरि है।

कुछ लोगो के विचार मे राज्य एक ऐसा सगठन है, जिसका कार्य समाज के भिन्न-भिन्न समुदायों मे सामञ्जस्य स्थापित करना है।

अन्य विचारकों के अनुसार राज्य ऐसा राजनैतिक समुदाय है जिसकी अपनी सरकार होती है और उस सरकार को जन-साधारण का समर्थन प्राप्त होता है।

कहने का तात्पर्य यह है कि राज्य एक ऐसी सगठित संस्था है जो अपनी इच्छा को अपने सदस्यो द्वारा मनवा सकती है।

राज्य और शिक्षा

राज्य और शिक्षा के सम्बन्धो पर चर्चा करने से पूर्व हमे यह देखना होगा कि व्यक्ति और राज्य, इनका आपस मे क्या सम्बन्ध है। रूसो (Rousseau) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "सोशल कन्ट्रैक्ट" (Social Contract) मे एक स्थान पर लिखा है कि राज्य एक अनिवार्य अभिशाप (necessary evil) है। उसके मतानुसार राज्य मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास मे बाधक है। इस लिए व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह राज्य का उन्मूलन कर दे यदि राज्य उसके हितो का ध्यान न रखे। रूसो के विचार में राज्य को कम से कम अधिकार दिए जाएँ। राज्य का कार्य होगा (i) बाह्य आक्रमण से रक्षा करना (ii) समाज मे आन्तरिक शान्ति बनाए रखना तथा (iii) व्यक्ति के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करना। उस समय यह बात किसी की कल्पना मे भी न आ सकती थी कि राज्य को शिक्षा का उत्तरदायित्व सौंपा जाएगा। शिक्षा देने का कार्य तो परिवार का था। परन्तु

रन्तु इस घनिष्टता का यह अर्थ कदापि नहीं कि उन मे से एक दूसरे को नियन्त्रित करने का यत्न करे। राज्य भी समाज का ही एक रूप है। कुछ लोगो के विचार मे राज्य और समाज दोनों पर्यायवाची शब्द है। समाज के अन्दर जो भिन्न-भिन्न समुदाय हैं, उन का ही सामूहिक नाम राज्य है। बड़े-बड़े राज्याधिकारी, व्यापारी, अध्यापक, विद्यार्थी सभी इस सगठन का एक अंग है। राज्य एक ऐसी सत्ता है जो अपने सब सदस्यो से कहीं बढ़ चढ़ कर है। इस का स्थान सर्वोपरि है।

कुछ लोगो के विचार मे राज्य एक ऐसा सगठन है, जिसका कार्य समाज के भिन्न-भिन्न समुदायों मे सामञ्जस्य स्थापित करना है।

अन्य विचारकों के अनुसार राज्य ऐसा राजनैतिक समुदाय है जिसकी अपनी सरकार होती है और उस सरकार को जन-साधारण का समर्थन प्राप्त होता है।

कहने का तात्पर्य यह है कि राज्य एक ऐसी सगठित संस्था है जो अपनी इच्छा को अपने सदस्यों द्वारा मनवा सकती है।

राज्य और शिक्षा

राज्य और शिक्षा के सम्बन्धो पर चर्चा करने से पूर्व हमे यह देखना होगा कि व्यक्ति और राज्य, इनका आपस मे क्या सम्बन्ध है। रूसो (Rousseau) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "सोशल कन्ट्रैक्ट" (Social Contract) मे एक स्थान पर लिखा है कि राज्य एक अनिवार्य अभिशाप (necessary evil) है। उसके मतानुसार राज्य मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास मे बाधक है। इस लिए व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह राज्य का उन्मूलन कर दे यदि राज्य उसके हितो का ध्यान न रखे। रूसो के विचार में राज्य को कम से कम अधिकार दिए जाएँ। राज्य का कार्य होगा (i) बाह्य आक्रमण से रक्षा करना (ii) समाज मे आन्तरिक शान्ति बनाए रखना तथा (iii) व्यक्ति के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करना। उस समय यह बात किसी की कल्पना मे भी न आ सकती थी कि राज्य को शिक्षा उत्तरदायित्व सौंपा जाएगा। शिक्षा देने का कार्य तो परिवार का था। पर

परन्तु इस घनिष्टता का यह अर्थ कदापि नहीं कि उन मे से एक दूसरे को नियन्त्रित करने का यत्न करे। राज्य भी समाज का ही एक रूप है। कुछ लोगो के विचार मे राज्य और समाज दोनो पर्यायवाची शब्द है। समाज के अन्दर जो भिन्न-भिन्न समुदाय हैं, उन का ही सामूहिक नाम राज्य है। बड़े-बड़े राज्याधिकारी, व्यापारी, अध्यापक, विद्यार्थी सभी इस संगठन का एक अंग हैं। राज्य एक ऐसी सत्ता है जो अपने सब सदस्यो से कहीं बढ़ चढ़ कर है। इस का स्थान सर्वोपरि है।

कुछ लोगो के विचार मे राज्य एक ऐसा सगठन है, जिसका कार्य समाज के भिन्न-भिन्न समुदायों मे सामञ्जस्य स्थापित करना है।

अन्य विचारकों के अनुसार राज्य ऐसा राजनैतिक समुदाय है जिसकी अपनी सरकार होती है और उस सरकार को जन-साधारण का समर्थन प्राप्त होता है।

कहने का तात्पर्य यह है कि राज्य एक ऐसी सगठित सस्था है जो अपनी इच्छा को अपने सदस्यो द्वारा मनवा सकती है।

राज्य और शिक्षा

राज्य और शिक्षा के सम्बन्धो पर चर्चा करने से पूर्व हमें यह देखना होगा कि व्यक्ति और राज्य, इनका आपस मे क्या सम्बन्ध है। रूसो (Rousseau) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "सोशल कान्ट्रैक्ट" (Social Contract) मे एक स्थान पर लिखा है कि राज्य एक अनिवार्य अभिशाप (necessary evil) है। उसके मतानुसार राज्य मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास मे बाधक है। इस लिए व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह राज्य का उन्मूलन कर दे यदि राज्य उसके हितों का ध्यान न रखे। रूसो के विचार मे राज्य को कम से कम अधिकार दिए जाएँ। राज्य का कार्य होगा (i) बाह्य आक्रमण से रक्षा करना (ii) समाज मे आन्तरिक शान्ति बनाए रखना तथा (iii) व्यक्ति के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करना। उस समय यह बात किसी की कल्पना मे भी न आ सकती थी कि राज्य को शिक्षा का उत्तरदायित्व सौंपा जाएगा। शिक्षा देने का कार्य तो परिवार का था। परन्तु

रन्तु इस घनिष्टता का यह अर्थ कदापि नहीं कि उन मे से एक दूसरे को त्मसात् करने का यत्न करे। राज्य भी समाज का ही एक रूप है। कुछ लोगो के विचार मे राज्य और समाज दोनो पर्यायवाची शब्द है। समाज के न्दर जो भिन्न-भिन्न समुदाय हैं, उन का ही सामूहिक नाम राज्य है। बड़े-ड़े राज्याधिकारी, व्यापारी, अध्यापक, विद्यार्थी सभी इस संगठन का एक ग हैं। राज्य एक ऐसी सत्ता है जो अपने सब सदस्यो से बड़ी बढ़ कर । इस का स्थान सर्वोपरि है।

कुछ लोगो के विचार मे राज्य एक ऐसा सगठन है, जिसका कार्य समाज के भिन्न-भिन्न समुदायों मे सामञ्जस्य स्थापित करना है।

अन्य विचारकों के अनुसार राज्य ऐसा राजनैतिक समुदाय है जिसकी अपनी सरकार होती है और उस सरकार को जन-साधारण का समर्थन प्राप्त होता है।

कहने का तात्पर्य यह है कि राज्य एक ऐसी सगठित सस्था है जो अपनी इच्छा को अपने सदस्यो द्वारा मनवा सकती है।

राज्य और शिक्षा

राज्य और शिक्षा के सम्बन्धो पर चर्चा करने से पूर्व हमें यह देखना होगा कि व्यक्ति और राज्य, इनका आपस मे क्या सम्बन्ध है। रूसो (Rousseau) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "सोशल कान्ट्रैक्ट" (Social Contract) मे एक स्थान पर लिखा है कि राज्य एक अनिवार्य अभिशाप (necessary evil) है। उसके मतानुसार राज्य मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास मे बाधक है। इस लिए व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह राज्य का उन्मूलन कर दे यदि राज्य उसके हितो का ध्यान न रखे। रूसो के विचार मे राज्य को कम से कम अधिकार दिए जाएं। राज्य का कार्य होगा (i) बाह्य आक्रमण से रक्षा करना (ii) समाज मे आन्तरिक शान्ति बनाए रखना तथा (iii) व्यक्ति के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करना। उस समय यह बात किसी की कल्पना मे भी न आ सकती थी कि राज्य को शिक्षा का उत्तरदायित्व सौंपा जाएगा। शिक्षा देने का कार्य तो परिवार का था। परन्तु

(ii) शिक्षा के क्षेत्र में "सभी—को समान अवसर" (equal opportunities for all) प्राप्त होने चाहिए। रूप-रंग, जाति-वर्ग तथा धन आदि के आधार पर किसी प्रकार का भेद भाव नहीं होना चाहिए।

(iii) स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार राज्य को भिन्न-भिन्न प्रकार के विद्यालय—प्रारम्भिक (primary), माध्यमिक (secondary), औद्योगिक (technical),—खोलने चाहिए।

(iv) इसका निर्णय राज्य द्वारा किया जायगा कि शिक्षा पर खर्च किए जाने वाले धन की व्यवस्था किस प्रकार की जायगी, इस में माता-पिता का कितना भाग होगा और राज्य द्वारा कितनी सहायता दी जायगी।

(v) यद्यपि साधारणतय पाठशालाओं का नियन्त्रण राज्य के हाथों में रहेगा परन्तु पाठ्यक्रम के निर्माण में, पूरे समाज का सहयोग प्राप्त किया जायगा। राज्य का यह कर्त्तव्य है कि अनुपयोगी निजी संस्थाओं (private institutions) पर कड़ा नियन्त्रण रखा जाए।

(vi) राज्य को पाठशालाओं के लिए सुयोग्य और प्रशिक्षण प्राप्त (trained) अध्यापकों की व्यवस्था करनी चाहिए। इस के लिए राज्य को सब प्रकार से सुसज्जित (well-equipped) प्रशिक्षण संस्थाओं का आयोजन करना होगा।

(vii) अध्यापन-कार्य की ओर योग्य से योग्य विद्यार्थी आकर्षित हो, इसके लिए अध्यापकों का वेतन बढ़ाना होगा तथा उन्हें समाज में आदर का स्थान दिलवाना होगा।

(viii) राज्य के द्वारा शिक्षा सम्बन्धी अनुसन्धान को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए ताकि प्रशिक्षणार्थ नई-नई पद्धतियों का निर्माण कर उनका प्रयोग किया जा सके।

(ix) राज्य का यह कर्त्तव्य है कि सच्चे अर्थों में शिक्षा का विकास करने के लिए शिक्षा प्रदान करने वाली सभी नियमित (Formal) तथा अनियमित (informal) संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करे।

(ii) शिक्षा के क्षेत्र में "सभी—को समान अवसर" (equal opportunities for all) प्राप्त होने चाहिए। रूप-रंग, जाति-वर्ग तथा धन आदि के आधार पर किसी प्रकार का भेद भाव नहीं होना चाहिए।

(iii) स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार राज्य को भिन्न-भिन्न प्रकार के विद्यालय—प्रारम्भिक (primary), माध्यमिक (secondary), औद्योगिक (technical),—खोलने चाहिए।

(iv) इसका निर्णय राज्य द्वारा किया जायगा कि शिक्षा पर खर्च किए जाने वाले धन की व्यवस्था किस प्रकार की जायगी, इस में माता-पिता का कितना भाग होगा और राज्य द्वारा कितनी सहायता दी जायगी।

(v) यद्यपि साधारणतया पाठशालाओं का नियन्त्रण राज्य के हाथों में रहेगा परन्तु पाठ्यक्रम के निर्माण में, पूरे समाज का सहयोग प्राप्त किया जायगा। राज्य का यह कर्त्तव्य है कि अनुपयोगी निजी संस्थाओं (private institutions) पर कड़ा नियन्त्रण रखा जाए।

(vi) राज्य को पाठशालाओं के लिए सुयोग्य और प्रशिक्षण प्राप्त (trained) अध्यापकों की व्यवस्था करनी चाहिए। इस के लिए राज्य को सब प्रकार से सुसज्जित (well-equipped) प्रशिक्षण संस्थाओं का आयोजन करना होगा।

(vii) अध्यापन-कार्य की ओर योग्य से योग्य विद्यार्थी आकर्षित हों इसके लिए अध्यापकों का वेतन बढ़ाना होगा तथा उन्हें समाज में आदर का स्थान दिलवाना होगा।

(viii) राज्य के द्वारा शिक्षा सम्बन्धी अनुसन्धान को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए ताकि प्रशिक्षणार्थ नई-नई पद्धतियों का निर्माण कर उनका प्रयोग किया जा सके।

(ix) राज्य का यह कर्तव्य है कि सच्चे अर्थों में शिक्षा का विकास करने के लिए शिक्षा प्रदान करने वाली सभी नियमित (Formal) तथा अनियमित (informal) संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करे।

(ii) शिक्षा के क्षेत्र मे "सभी—को समान अवसर" (equal opportunities for all) प्राप्त होने चाहिए। रूप-रंग, जाति वर्ग तथा धन आदि के आधार पर किसी प्रकार का भेद भाव नहीं होना चाहिए।

(iii) स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार राज्य को भिन्न-भिन्न प्रकार के विद्यालय—प्रारम्भिक (primary), माध्यमिक (secondary), औद्योगिक (technical),—खोलने चाहिए।

(iv) इसका निर्णय राज्य द्वारा किया जायगा कि शिक्षा पर खर्च किए जाने वाले धन की व्यवस्था किस प्रकार की जायगी, इस मे माता-पिता का कितना भाग होगा और राज्य द्वारा कितनी सहायता दी जायगी।

(v) यद्यपि साधारणतय. पाठशालाओं का नियन्त्रण राज्य के हाथो में रहेगा परन्तु पाठ्यक्रम के निर्माण मे, पूरे समाज का सहयोग प्राप्त किया जायगा। राज्य का यह कर्त्तव्य है कि अनुपयोगी निजी संस्थाओं (private institutions) पर कड़ा नियन्त्रण रखा जाए।

(vi) राज्य को पाठशालाओं के लिए सुयोग्य और प्रशिक्षण प्राप्त (trained) अध्यापको की व्यवस्था करनी चाहिए। इस के लिए राज्य को सब प्रकार से सुसज्जित (well-equipped) प्रशिक्षण संस्थाओं का आयोजन करना होगा।

(vii) अध्यापन-कार्य की ओर योग्य से योग्य विद्यार्थी आकर्षित हों, इसके लिए अध्यापकों का वेतन बढ़ाना होगा तथा उन्हें समाज मे आदर का स्थान दिलवाना होगा।

(viii) राज्य के द्वारा शिक्षा सम्बन्धी अनुसन्धान को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए ताकि प्रशिक्षणार्थ नई-नई पद्धतियों का निर्माण कर उनका प्रयोग किया जा सके।

(ix) राज्य का यह कर्तव्य है कि सच्चे अर्थों में शिक्षा का विकास करने के लिए शिक्षा प्रदान करने वाली सभी नियमित (Formal) तथा अनियमित (informal) संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करें।

(ii) शिक्षा के क्षेत्र मे "सभी—को समान अवसर" (equal opportunities for all) प्राप्त होने चाहिए। रूप-रंग, जाति वर्ग तथा धन आदि के आधार पर किसी प्रकार का भेद भाव नहीं होना चाहिए।

(iii) स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार राज्य को भिन्न-भिन्न प्रकार के विद्यालय—प्रारम्भिक (primary), माध्यमिक (secondary), औद्योगिक (technical),—खोलने चाहिए।

(iv) इसका निर्णय राज्य द्वारा किया जायगा कि शिक्षा पर खर्च किए जाने वाले धन की व्यवस्था किस प्रकार की जायगी, इस में माता-पिता का कितना भाग होगा और राज्य द्वारा कितनी सहायता दी जायगी।

(v) यद्यपि साधारणतय. पाठशालाओं का नियन्त्रण राज्य के हाथों में रहेगा परन्तु पाठ्यक्रम के निर्माण से, पूरे समाज का सहयोग प्राप्त किया जायगा। राज्य का यह कर्त्तव्य है कि अनुपयोगी निजी संस्थाओं (private institutions) पर कड़ा नियन्त्रण रखा जाए।

(vi) राज्य को पाठशालाओं के लिए सुयोग्य और प्रशिक्षण प्राप्त (trained) अध्यापकों की व्यवस्था करनी चाहिए। इस के लिए राज्य को सब प्रकार से सुसज्जित (well-equipped) प्रशिक्षण संस्थाओं का आयोजन करना होगा।

(vii) अध्यापन-कार्य की ओर योग्य से योग्य विद्यार्थी आकर्षित हों, इसके लिए अध्यापकों का वेतन बढ़ाना होगा तथा उन्हें समाज में आदर का स्थान दिलवाना होगा।

(viii) राज्य के द्वारा शिक्षा सम्बन्धी अनुसन्धान को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए ताकि प्रशिक्षणार्थ नई-नई पद्धतियों का निर्माण कर उनका प्रयोग किया जा सके।

(ix) राज्य का यह कर्त्तव्य है कि सच्चे अर्थों में शिक्षा का विकास करने के लिए शिक्षा प्रदान करने वाली सभी नियमित (Formal) तथा अनियमित (informal) संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करें।

उत्तर—धार्मिक शिक्षा का महत्व :

समय-समय पर भिन्न-भिन्न दार्शनिक तथा शिक्षाविद् धार्मिक शिक्षा पर बल देते आए हैं। महात्मा गान्धी ने अपने प्रसिद्ध पत्र "यंग इण्डिया" (Young India) में २५ अगस्त १९२७ ई० को एक लेख में कहा था कि—"यदि भारत आध्यात्मिक रूप से दीवालिया नहीं होना चाहता तो प्रत्येक युवक को भौतिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक शिक्षा भी देनी होगी" (But if India is not to declare spiritual bankruptcy, religous instruction of its youth must be held to be as necessary as secular instruction)। श्री अरविंद (Sri Aurobindo) ने भी एक स्थान पर कहा है कि—धर्म का प्रमुख तत्व, भगवान के लिए जीना, मानवता के लिए जीना, देश और समाज के लिए जीना, प्रत्येक विद्यालय का आदर्श होना चाहिए (The essence of religion, to live for God, for humanity, for country, for others and for oneself in these must be made the ideal in every school)। रॉस (Ross) ने सत्य, शिव और सुन्दरम् (the truth, the goodness and the beauty) नामक मूल्यों (Values) को जीवन का चरम लक्ष्य माना है। उसके मतानुसार इन मूल्यों की प्राप्ति तभी हो सकती है जब हम धर्म को ही शिक्षा का आधार मान लें। शिक्षा की नियमित संस्था (formal agency) पाठशाला की चर्चा करते समय यह कहा गया था कि शिक्षा का प्रमुख ध्येय संस्कृति का संरक्षण तथा वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार उसका पुनर्निर्माण करना है। शिक्षा द्वारा यह कार्य तभी सुचारु रूप से हो सकता है, जब कि उसका मूलाधार धर्म हो।

धर्म क्या है ?

धर्म शब्द की व्याख्या भिन्न-भिन्न लोगों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से की है। ईसाई मत के अनुसार धर्म वह वस्तु है जो विभिन्न व्यक्तियों को प्रेम, सहानुभूति तथा पारस्परिक कर्तव्य और अधिकार के बन्धन में बाँधती है।

उत्तर—धार्मिक शिक्षा का महत्व :

समय-समय पर भिन्न-भिन्न दार्शनिक तथा शिक्षाविद् धार्मिक शिक्षा पर बल देते आए हैं। महात्मा गान्धी ने अपने प्रसिद्ध पत्र "यंग इण्डिया" (Young India) में २५ अगस्त १६२७ ई० को एक लेख में कहा था कि—"यदि भारत आध्यात्मिक रूप से दीवालिया नहीं होना चाहता तो प्रत्येक युवक को लौकिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक शिक्षा भी देनी होगी" (But if India is not to declare spiritual bankruptcy, *religous instruction of its youth must be held to be* as necessary as secular instruction)। श्री अरविंद (Sri Aurobindo) ने भी एक स्थान पर कहा है कि—धर्म का प्रमुख तत्व, भगवान के लिए जीना, मानवता के लिए जीना, देश और समाज के लिए जीना, प्रत्येक विद्यालय का आदर्श होना चाहिए (The essence of religion, to live for God, for humanity, for country, for others and for oneself in these must be made the ideal in every school)। रॉस (Ross) ने सत्य, शिव और सुन्दरम् (the truth, the goodness and the beauty) नामक मूल्यों (Values) को जीवन का चरम लक्ष्य माना है। उसके मतानुसार इन मूल्यों की प्राप्ति तभी हो सकती है जब हम धर्म को ही शिक्षा का आधार मान लें। शिक्षा की नियमित संस्था (formal agency) पाठशाला की चर्चा करते समय यह कहा गया था कि शिक्षा का प्रमुख ध्येय संस्कृति का संरक्षण तथा वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार उसका पुनर्निर्माण करना है। शिक्षा द्वारा यह कार्य तभी सुचारु रूप से हो सकता है जब कि उसका मूलाधार धर्म हो।

धर्म क्या है ?

धर्म शब्द की व्याख्या भिन्न-भिन्न लोगों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से की है। *ईसाई मत के अनुसार धर्म वह वस्तु है जो विभिन्न व्यक्तियों को प्रेम,* सहानुभूति तथा पारस्परिक कर्तव्य और अधिकार के बन्धन में बाँधती है।

उत्तर—धार्मिक शिक्षा का महत्व :

समय-समय पर भिन्न-भिन्न दार्शनिक तथा शिक्षाविद् धार्मिक शिक्षा पर बल देते आए हैं। महात्मा गान्धी ने अपने प्रसिद्ध पत्र "यंग इण्डिया" (Young India) में २५ अगस्त १६२७ ई० को एक लेख में कहा था कि—"यदि भारत आध्यात्मिक रूप से दीवालिया नहीं होना चाहता तो प्रत्येक युवक को भौतिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक शिक्षा भी देनी होगी" (But if India is not to declare spiritual bankruptcy, religous instruction of its youth must be held to be as necessary as secular instruction)। श्री अरविंद (Sri Aurobindo) ने भी एक स्थान पर कहा है कि—धर्म का प्रमुख तत्व, भगवान के लिए जीना, मानवता के लिए जीना, देश और समाज के लिए जीना, प्रत्येक विद्यालय का आदर्श होना चाहिए (The essence of religion, to live for God, for humanity, for country, for others and for oneself in these must be made the ideal in every school)। रॉस (Ross) ने सत्य, शिव और सुन्दरम् (the truth, the goodness and the beauty) नामक मूल्यों (Values) को जीवन का चरम लक्ष्य माना है। उसके मतानुसार इन मूल्यों की प्राप्ति तभी हो सकती है जब हम धर्म को ही शिक्षा का आधार मान लें। शिक्षा की नियमित संस्था (formal agency) पाठशाला की चर्चा करते समय यह कहा गया था कि शिक्षा का प्रमुख ध्येय संस्कृति का संरक्षण तथा वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार उसका पुनर्निर्माण करना है। शिक्षा द्वारा यह कार्य तभी सुचारु रूप से हो सकता है, जब कि उसका मूलाधार धर्म हो।

धर्म क्या है ?

धर्म शब्द की व्याख्या भिन्न-भिन्न लोगों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से की है। ईसाई मत के अनुसार धर्म वह वस्तु है जो विभिन्न व्यक्तियों को प्रेम, सहानुभूति तथा पारस्परिक कर्तव्य और अधिकार के बन्धन में बाँधती है।

उत्तर—धार्मिक शिक्षा का महत्व :

समय-समय पर भिन्न-भिन्न दार्शनिक तथा शिक्षाविद् धार्मिक शिक्षा पर बल देते आए हैं। महात्मा गान्धी ने अपने प्रसिद्ध पत्र "यंग इण्डिया" (Young India) में २५ अगस्त १९२७ ई० को एक लेख में कहा था कि—"यदि भारत आध्यात्मिक रूप से दीवालिया नहीं होना चाहता तो प्रत्येक युवक को भौतिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक शिक्षा भी देनी होगी" (But if India is not to declare spiritual bankruptcy, religous instruction of its youth must be held to be as necessary as secular instruction)। श्री अरविंद (Sri Aurobindo) ने भी एक स्थान पर कहा है कि—धर्म का प्रमुख तत्व, भगवान के लिए जीना, मानवता के लिए जीना, देश और समाज के लिए जीना, प्रत्येक विद्यालय का आदर्श होना चाहिए (The essence of religion, to live for God, for humanity, for country, for others and for oneself in these must be made the ideal in every school)। रॉस (Ross) ने सत्य, शिव और सुन्दरम् (the truth, the goodness and the beauty) नामक मूल्यों (Values) को जीवन का चरम लक्ष्य माना है। उसके मतानुसार इन मूल्यों की प्राप्ति तभी हो सकती है जब हम धर्म को ही शिक्षा का आधार मान लें। शिक्षा की नियमित संस्था (formal agency) पाठशाला की चर्चा करते समय यह कहा गया था कि शिक्षा का प्रमुख ध्येय संस्कृति का संरक्षण तथा वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार उसका पुनर्निर्माण करना है। शिक्षा द्वारा यह कार्य तभी सुचारु रूप से हो सकता है, जब कि उसका मूलाधार धर्म हो।

धर्म क्या है ?

धर्म शब्द की व्याख्या भिन्न-भिन्न लोगों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से की है। ईसाई मत के अनुसार धर्म वह वस्तु है जो विभिन्न व्यक्तियों को प्रेम, सहानुभूति तथा पारस्परिक कर्तव्य और अधिकार के बन्धन में बाँधती है।

समाज के लिए जो लक्ष्य निर्धारित किया है, उसे पूरा करना ही शिक्षा का कार्य है इस दृष्टि से शिक्षा और धर्म दोनों में बड़ा निकट का सम्बन्ध है क्योंकि दोनों का अन्तिम उद्देश्य एक ही है।

श्री बर्टन (Burton) के अनुसार धर्म और शिक्षा आपस में स्वाभाविक रूप से सम्बन्धित हैं। दोनों मनुष्य के शारीरिक तथा भौतिक पक्ष के साथ-साथ आध्यात्मिक पक्ष का भी ध्यान रखते हैं। दोनों ही मनुष्य को उसके वातावरण के सम्बन्ध से मुक्त न करके, दासता से मुक्ति दिलाना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त दोनों ही मनुष्य के मानसिक विकास को व्यापक बनाकर उसकी उच्च आकांक्षाओं को बढ़ाना चाहते हैं" (Religion and Education are natural allies Both recognize and have to do with spiritual as over against an inclusive attention to the physical and material Both seek to emancipate man not from contact with his environment but from slavery to it, to enlarge his horizon and quicken his aspirations)।

धर्म हमें सहनशीलता, समानता और मानवता का पाठ पढ़ाता है। अच्छी का भी [illegible]

शिक्षा [illegible]

बात पर सोचने को विवश हो गए हैं कि यदि मानवता को युद्ध के संहारक प्रभावों से बचाना है तो एक बार फिर मनुष्यों के जीवन में धर्म के प्रति आदर और निष्ठा के भाव उत्पन्न करने होंगे। इसलिए वहाँ के शिक्षा विशेषज्ञों का एक वर्ग धर्म को शिक्षा में ऊँचा स्थान देना चाहता है। इन्हीं कारणों से वहाँ पर "सण्डे स्कूल मूवमेंट" (Sunday School Movement), "कैरैक्टर एडूकेशन मूवमेंट" (Character Education Movement) तथा "रिलिजस एडूकेशन मूवमेंट" (Religious Education Movement) नामक अनेक आन्दोलन चल पड़े हैं। इतना होने पर भी कुछ लोग धार्मिक शिक्षा का विरोध करते हैं।

समाज के लिए जो लक्ष्य निर्धारित किया है, उसे पूरा करना ही शिक्षा का कार्य है इस दृष्टि से शिक्षा और धर्म दोनों में बड़ा निकट का सम्बन्ध है क्योंकि दोनों का अन्तिम उद्देश्य एक ही है।

श्री बर्टन (Burton) के अनुसार धर्म और शिक्षा आपस में स्वाभाविक रूप से सम्बन्धित हैं। दोनों मनुष्य के शारीरिक तथा भौतिक पक्ष के साथ-साथ आध्यात्मिक पक्ष का भी ध्यान रखते हैं। दोनों ही मनुष्य को उसके वातावरण के सम्बन्ध से मुक्त न करके, दासता से मुक्ति दिलाना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त दोनों ही मनुष्य के मानसिक विकास को व्यापक बनाकर उसकी उच्च आकांक्षाओं को बढ़ाना चाहते हैं" (Religion and Education are natural allies Both recognize and have to do with spiritual as over against an inclusive attention to the physical and material Both seek to emancipate man not from contact with his environment but from slavery to it, to enlarge his horizon and quicken his aspirations)।

धर्म हमे सहनशीलता, समानता और मानवता का पाठ पढ़ाता है। अच्छे का भी [illegible]

शिक्षा [illegible]

बात पर सोचने को विवश हो गए हैं कि यदि मानवता को युद्ध के सहार[illegible] प्रभावों से बचाना है तो एक बार फिर मनुष्यों के जीवन में ध[illegible] के प्रति आदर और निष्ठा के भाव उत्पन्न करने होंगे। इसलिए वहाँ [illegible] शिक्षा विशेषज्ञों का एक वर्ग धर्म को शिक्षा मे ऊँचा स्थान देना चाहत[illegible] है। इन्हीं कारणों से वहाँ पर "सण्डे स्कूल मूवमेंट" (Sunday School Movement), "कैरैक्टर एजूकेशन मूवमेंट" (Character Education Movement) तथा "रिलिजस एजूकेशन मूवमेंट" (Religious Education Movement) नामक अनेक आन्दोलन चल पड़े हैं इतना होने पर भी कुछ लोग धार्मिक शिक्षा का विरोध करते हैं।

(iii) धर्म को मत, सम्प्रदाय या कर्म-काण्ड के रूप में न ग्रहण करके, एक व्यापक रूप में ही लेना चाहिए।

(iv) आज सभी स्थानों पर इस बात की चर्चा है कि चारित्रिक दृष्टि से हम पतन की ओर जा रहे हैं। केवल धार्मिक गुणों के विकास से ही हम, चरित्र-गठन के कार्य को सम्भव बना सकते हैं।

(v) रायबर्न (Ryburn) के मतानुसार भारतवासियों का व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन सदा धर्म में ओत-प्रोत रहा है इस लिए शिक्षा में धर्म को स्थान दिए जाने पर, प्रजातन्त्रवादी भावना का विकास सरलता से हो सकेगा।

भारतवर्ष में धार्मिक शिक्षा—

वैदिक काल से ही भारतीय शिक्षा में धर्म का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। शिक्षा प्राप्त करने के लिए शिक्षार्थी ऋषि मुनियों के आश्रमों में जाया करते थे। डा० राधाकुमुद मुखर्जी ने भी प्राचीन भारतीय शिक्षा पर विचार करते हुए, इस बात का समर्थन किया है कि युगों-युगों से भारत वर्ष में ज्ञान और शिक्षा की प्राप्ति धर्म के लिए की जाती रही है। शिक्षा को आत्म-ज्ञान की प्राप्ति का मुख्य आधार माना जाता रहा है।

मुस्लिम-शासन काल में भी शिक्षा प्रदान करने वाले 'मकतब' मस्जिदों से सम्बन्धित रहते थे जहाँ कुरान तथा अन्य इस्लामी धार्मिक सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाया करती थी।

ब्रिटिश काल में भी यद्यपि अपनी घोषणा के अनुसार, सरकार धार्मिक शिक्षा के प्रति तटस्थ थी, और धार्मिक शिक्षा चर्च तथा ईसाई पादरियों द्वारा दी जाती थी, परन्तु फिर भी हम ब्रिटिश सरकार को धर्म सम्बन्धी मामलों में निष्पक्ष नहीं कह सकते। प्रत्येक वर्ष करोड़ों रुपया ईसाई धर्म के प्रचार के लिए दिया जाता था।

आर्य समाज, देव समाज जैसी भिन्न-भिन्न धार्मिक संस्थाओं ने अपने सिद्धान्तों के प्रचार के लिए, पाठशालाओं को भी माध्यम बनाया।

१९४७ ई० में भारत वर्ष स्वतन्त्र हुआ और १९५० ई० में इसका विधान बना। पर नए विधान के अनुसार भारतवर्ष को धर्म निरपेक्ष राज्य घोषि

(iii) धर्म को मत, सम्प्रदाय या कर्म-काण्ड के रूप में न ग्रहण करके, हमें उसे व्यापक रूप में ही लेना चाहिए।

(iv) आज सभी स्थानों पर इस बात की चर्चा है कि चारित्रिक दृष्टि से हम पतन की ओर जा रहे हैं। केवल धार्मिक गुणों के विकास से ही हम चरित्र-गठन के कार्य को सम्भव बना सकते हैं।

(v) रायबर्न (Ryburn) के मतानुसार भारतवासियों का व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन सदा धर्म में ओत-प्रोत रहा है इस लिए शिक्षा में धर्म को स्थान दिए जाने पर, प्रजातन्त्रवादी भावना का विकास सरलता से हो सकेगा।

भारतवर्ष में धार्मिक शिक्षा—

वैदिक काल से ही भारतीय शिक्षा में धर्म का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। शिक्षा प्राप्त करने के लिए शिक्षार्थी ऋषि मुनियों के आश्रमों में जाया करते थे। डा० राधाकुमुद मुखर्जी ने भी प्राचीन भारतीय शिक्षा पर विचार करते हुए, इस बात का समर्थन किया है कि युगों-युगों से भारत वर्ष में ज्ञान और शिक्षा की प्राप्ति धर्म के लिए की जाती रही है। शिक्षा को आत्म-ज्ञान की प्राप्ति का मुख्य आधार माना जाता रहा है।

मुस्लिम-शासन काल में भी शिक्षा प्रदान करने वाले 'मकतब' मस्जिदों से सम्बन्धित रहते थे जहाँ कुरान तथा अन्य इस्लामी धार्मिक सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाया करती थी।

ब्रिटिश काल में भी यद्यपि अपनी घोषणा के अनुसार, सरकार धार्मिक शिक्षा के प्रति तटस्थ थी, और धार्मिक शिक्षा चर्च तथा ईसाई पादरियों द्वारा दी जाती थी, परन्तु फिर भी हम ब्रिटिश सरकार को धर्म सम्बन्धी मामलों में निष्पक्ष नहीं कह सकते। प्रत्येक वर्ष करोड़ों रुपया ईसाई धर्म के प्रचार के लिए दिया जाता था।

आर्य समाज, देव समाज जैसी भिन्न-भिन्न धार्मिक संस्थाओं ने अपने सिद्धान्तों के प्रचार के लिए, पाठशालाओं को भी माध्यम बनाया।

१९४७ ई० में भारत वर्ष स्वतन्त्र हुआ और १९५० ई० में इसका विधान ... विधान के अनुसार भारतवर्ष को धर्म निरपेक्ष राज्य घोषि...

(iii) धर्म को मत, सम्प्रदाय या कर्म-काण्ड के रूप में न ग्रहण करके, एक व्यापक रूप में ही लेना चाहिए।

(iv) आज सभी स्थानों पर इस बात की चर्चा है कि चारित्रिक दृष्टि से हम पतन की ओर जारहे हैं। केवल धार्मिक गुणों के विकास से ही हम चरित्र-गठन के कार्य को सम्भव बना सकते हैं।

(v) रायबर्न (Ryburn) के मतानुसार भारतवासियों का व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन सदा धर्म में ओत-प्रोत रहा है इस लिए शिक्षा में धर्म को स्थान दिए जाने पर, प्रजातन्त्रवादी भावना का विकास सरलता से हो सकेगा।

भारतवर्ष में धार्मिक शिक्षा—

वैदिक काल से ही भारतीय शिक्षा में धर्म का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। शिक्षा प्राप्त करने के लिए शिक्षार्थी ऋषि मुनियों के आश्रमों में जाया करते थे। डा० राधाकुमुद मुखर्जी ने भी प्राचीन भारतीय शिक्षा पर विचार करते हुए, इस बात का समर्थन किया है कि युगों-युगों से भारत वर्ष में ज्ञान और शिक्षा की प्राप्ति धर्म के लिए की जाती रही है। शिक्षा को आत्म-ज्ञान की प्राप्ति का मुख्य आधार माना जाता रहा है।

मुस्लिम-शासन काल में भी शिक्षा प्रदान करने वाले 'मकतब' मस्जिदों म्बन्धित रहते थे जहाँ कुरान तथा अन्य इस्लामी धार्मिक सिद्धान्तों की । दी जाया करती थी।

ब्रिटिश काल में भी यद्यपि अपनी घोषणा के अनुसार, सरकार धार्मिक । के प्रति तटस्थ थी, और धार्मिक शिक्षा चर्च तथा ईसाई पादरियों द्वारा ताती थी, परन्तु फिर भी हम ब्रिटिश सरकार को धर्म सम्बन्धी मामलों नेष्पक्ष नहीं कह सकते। प्रत्येक वर्ष करोड़ों रुपया ईसाई धर्म के प्रचार लेए दिया जाता था।

आर्य समाज, देव समाज जैसी भिन्न-भिन्न धार्मिक संस्थाओं ने अपने द्वान्तों के प्रचार के लिए, पाठशालाओं को भी माध्यम बनाया।

१९४७ ई० में भारत वर्ष स्वतन्त्र हुआ और १९५० ई० में इसका विधान । पर नए विधान के अनुसार भारतवर्ष को धर्म निरपेक्ष राज्य घोषित

(iii) धर्म को मत, सम्प्रदाय या कर्म-काण्ड के रूप में न ग्रहण करके, एक व्यापक रूप में ही लेना चाहिए।

(iv) आज सभी स्थानों पर इस बात की चर्चा है कि चारित्रिक दृष्टि से हम पतन की ओर जा रहे हैं। केवल धार्मिक गुणों के विकास से ही हम चरित्र-गठन के कार्य को सम्भव बना सकते हैं।

(v) रायबर्न (Ryburn) के मतानुसार भारतवासियों का व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन सदा धर्म में ओत-प्रोत रहा है इस लिए शिक्षा में धर्म को स्थान दिए जाने पर, प्रजातन्त्रवादी भावना का विकास सरलता से हो सकेगा।

भारतवर्ष में धार्मिक शिक्षा—

वैदिक काल से ही भारतीय शिक्षा में धर्म का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। शिक्षा प्राप्त करने के लिए शिक्षार्थी ऋषि मुनियों के आश्रमों में जाया करते थे। डा॰ राधाकुमुद मुखर्जी ने भी प्राचीन भारतीय शिक्षा पर विचार करते हुए, इस बात का समर्थन किया है कि युगों-युगों से भारत वर्ष में ज्ञान और शिक्षा की प्राप्ति धर्म के लिए की जाती रही है। शिक्षा को आत्म-ज्ञान की प्राप्ति का मुख्य आधार माना जाता रहा है।

मुस्लिम-शासन काल में भी शिक्षा प्रदान करने वाले 'मकतब' मस्जिदों से सम्बन्धित रहते थे जहाँ कुरान तथा अन्य इस्लामी धार्मिक सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाया करती थी।

ब्रिटिश काल में भी यद्यपि अपनी घोषणा के अनुसार, सरकार धार्मिक शिक्षा के प्रति तटस्थ थी, और धार्मिक शिक्षा चर्च तथा ईसाई पादरियों द्वारा दी जाती थी, परन्तु फिर भी हम ब्रिटिश सरकार को धर्म सम्बन्धी मामलों में निष्पक्ष नहीं कह सकते। प्रत्येक वर्ष करोड़ों रुपया ईसाई धर्म के प्रचार के लिए दिया जाता था।

आर्य समाज, देव समाज जैसी भिन्न-भिन्न धार्मिक संस्थाओं ने अपने सिद्धान्तों के प्रचार के लिए, पाठशालाओं को भी माध्यम बनाया।

१९४७ ई॰ में भारत वर्ष स्वतन्त्र हुआ और १९५० ई॰ में इसका विधान बना। पर नए विधान के अनुसार भारतवर्ष को धर्म निरपेक्ष राज्य घोषित-

जीवनियों का अवलम्बन किया जा सकता है। उच्च कक्षाओं में जब कि बालकों की आलोचनात्मक प्रवृत्ति का विकास होने लगता है, विवाद-प्रतियोगिताओं तथा निबन्ध लेखन आदि का कार्य करवाया जा सकता है।

(५) इस बात का यत्न करना चाहिए कि धार्मिक शिक्षा के द्वारा भिन्न-भिन्न धर्मों, भिन्न-भिन्न मतों तथा भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के लोग एक दूसरे के निकट आएँ। उन में एक-दूसरे के प्रति प्रेम की भावना उत्पन्न हो।

अन्त में हम यह कह सकते हैं कि शिक्षा का प्रमुख आधार धर्म ही होना चाहिए। जीवन के प्रति एक धार्मिक या आध्यात्मिक दृष्टिकोण के द्वारा ही शिक्षा को प्रेरणा मिलेगी और उसके लिए लक्ष्य निर्धारित होगा। वह लक्ष्य ही मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास करके उसे पूर्ण बनाएगा। इसीलिए तो स्पेन्स रिपोर्ट (Spens Report) में यह कहा गया है कि किसी भी बालक अथवा बालिका को तब तक शिक्षित नहीं समझा जा सकता, जब तक कि उसका परिचय जीवन के धर्म सम्बन्धी प्रश्न से न करा दिया जाए।" (No boy or girl can be counted as properly educated unless h or she has been made aware of a religous interpretation of life.

Q. 66. *Discuss the possibilities of cooperation between th school and other social agencies of education*

(पाठशाला तथा शिक्षा की अन्य सामाजिक संस्थाओं में सहयोग कैसे स्थापित किया जा सकता है—स्पष्ट करो।)

उत्तर— सहयोग की आवश्यकता—

पाठशाला, शिक्षा प्रदान करने वाली नियमित संस्था है। ब्राऊ (Brown) के कथनानुसार, यह पाठशाला का उत्तरदायित्व है कि वह व्यक्ति को इस योग्य बनाए कि वह पाठशाला छोड़ने के पश्चात् बाह्य-जीवन से सन्तुलन बनाए रख सके। समाज द्वारा इस नियमित संस्था का प्र इसीलिए किया गया है कि यहाँ रह कर विद्यार्थी, सामाजिक अनुभव कर सकें। अपने इस उत्तरदायित्व को लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि पाठशाला, अन्य सामाजिक सहयोग प्राप्त करे। पैने (Payne) के मतानुसार

जीवनियों का अवलम्बन किया जा सकता है। उच्च कक्षाओं में जब बालकों की आलोचनात्मक प्रवृत्ति का विकास होने लगता है, विवाद-प्र योगिताओं तथा निबन्ध लेखन आदि का कार्य करवाया जा सकता है।

(५) इस बात का यत्न करना चाहिए कि धार्मिक शिक्षा के भिन्न-भिन्न धर्मों, भिन्न-भिन्न मतों तथा भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के लोग दूसरे के निकट आएँ। उन में एक-दूसरे के प्रति प्रेम की भावना उत्पन्न

अन्त में हम कह सकते हैं कि शिक्षा का प्रमुख आधार धर्म ही चाहिए। जीवन के प्रति एक धार्मिक या आध्यात्मिक दृष्टिकोण के द्वारा शिक्षा को प्रेरणा मिलेगी और उसके लिए लक्ष्य निर्धारित होगा। वह ही मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास करके उसे पूर्ण बनाएगा। इसीलिए स्पेन्स रिपोर्ट (Spens Report) में यह कहा गया है कि किसी भी बालक अथवा बालिका को तब तक शिक्षित नहीं समझा जा सकता, जब तक उसका परिचय जीवन के धर्म सम्बन्धी अर्थ से न करा दिया जा (No boy or girl can be counted as properly educated unle or she has been made aware of a religous interpretation of

Q. 66. Discuss the possibilities of cooperation between school and other social agencies of education

(पाठशाला तथा शिक्षा की अन्य सामाजिक संस्थाओं में सहयोग स्थापित किया जा सकता है—स्पष्ट करो।)

उत्तर—सहयोग की आवश्यकता—

पाठशाला, शिक्षा प्रदान करने वाली नियमित संस्था है। (Brown) के कथनानुसार, यह पाठशाला का उत्तरदायित्व है कि व्यक्ति को इस योग्य बनाए कि वह पाठशाला छोड़ने के पश्चात् बाहर से सन्तुलन बनाए रख सके। समाज द्वारा इस नियमित संस्था का इसीलिए किया गया है कि यहाँ रह कर विद्यार्थी, सामाजिक अनुभव कर सकें। अपने इस उत्तरदायित्व को लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि पाठशाला, अन्य सामाजिक सहयोग प्राप्त करे। पेने (Payne) के मतानुसार

जीवनियों का अवलम्बन किया जा सकता है। उच्च कक्षाओं में जब कि बालकों की आलोचनात्मक प्रवृत्ति का विकास होने लगता है, विवाद-प्रतियोगिताओं तथा निबन्ध लेखन आदि का कार्य करवाया जा सकता है।

(५) इस बात का यत्न करना चाहिए कि धार्मिक शिक्षा के द्वारा भिन्न-भिन्न धर्मों, भिन्न-भिन्न मतों तथा भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के लोग एक दूसरे के निकट आएँ। उन में एक-दूसरे के प्रति प्रेम की भावना उत्पन्न हो।

अन्त में हम कह सकते हैं कि शिक्षा का प्रमुख आधार धर्म ही होना चाहिए। जीवन के प्रति एक धार्मिक या आध्यात्मिक दृष्टिकोण के द्वारा ही शिक्षा को प्रेरणा मिलेगी और उसके लिए लक्ष्य निर्धारित होगा। यह लक्ष्य ही मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास करके उसे पूर्ण बनाएगा। इसीलिए तो स्पेन्स रिपोर्ट (Spens Report) में यह कहा गया है कि किसी भी बालक अथवा बालिका को तब तक शिक्षित नहीं समझा जा सकता, जब तक कि उसका परिचय जीवन के धर्म सम्बन्धी अर्थ से न करा दिया जाए।" (No boy or girl can be counted as properly educated unless he or she has been made aware of a religous interpretation of life.)

Q. 66 Discuss the possibilities of cooperation between the school and other social agencies of education

(पाठशाला तथा शिक्षा की अन्य सामाजिक संस्थाओं में सहयोग कैसे स्थापित किया जा सकता है—स्पष्ट करो।)

उत्तर—सहयोग की आवश्यकता—

पाठशाला, शिक्षा प्रदान करने वाली नियमित संस्था है। ब्राऊन (Brown) के कथनानुसार, यह पाठशाला का उत्तरदायित्व है कि वह व्यक्ति को इस योग्य बनाए कि वह पाठशाला छोड़ने के पश्चात् बाह्य-जीवन से सन्तुलन बनाए रख सके। समाज द्वारा इस नियमित संस्था का आयोजन इसीलिए किया गया है कि यहाँ रह कर विद्यार्थी, सामाजिक जीवन —

जीवनियों का अवलम्बन किया जा सकता है। उच्च कक्षाओं में जब कि बालकों की आलोचनात्मक प्रवृत्ति का विकास होने लगता है, विवाद-प्रतियोगिताओं तथा निबन्ध लेखन आदि का कार्य करवाया जा सकता है।

(४) इस बात का यत्न करना चाहिए कि धार्मिक शिक्षा के द्वारा भिन्न-भिन्न धर्मों, भिन्न-भिन्न मतों तथा भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के लोग एक दूसरे के निकट आएँ। उन में एक-दूसरे के प्रति प्रेम की भावना उत्पन्न हो।

अन्त में हम कह सकते हैं कि शिक्षा का प्रमुख आधार धर्म ही होना चाहिए। जीवन के प्रति एक धार्मिक या आध्यात्मिक दृष्टिकोण के द्वारा ही शिक्षा को प्रेरणा मिलेगी और उसके लिए लक्ष्य निर्धारित होगा। वह लक्ष्य ही मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास करके उसे पूर्ण बनाएगा। इसीलिए तो स्पेन्स रिपोर्ट (Spens Report) में यह कहा गया है कि किसी भी बालक अथवा बालिका को तब तक शिक्षित नहीं समझा जा सकता, जब तक कि उसका परिचय जीवन के धर्म सम्बन्धी अर्थ से न करा दिया जाए।" (No boy or girl can be counted as properly educated unless he or she has been made aware of a religous interpretation of life.)

Q. 66 Discuss the possibilities of cooperation between the school and other social agencies of education

(पाठशाला तथा शिक्षा की अन्य सामाजिक संस्थाओं में सहयोग कैसे स्थापित किया जा सकता है—स्पष्ट करो।)

उत्तर—सहयोग की आवश्यकता—

पाठशाला, शिक्षा प्रदान करने वाली नियमित संस्था है। ब्राऊन (Brown) के कथनानुसार, यह पाठशाला का उत्तरदायित्व है कि वह व्यक्ति को इस योग्य बनाए कि वह पाठशाला छोड़ने के पश्चात् बाह्य-जीवन से सन्तुलन बनाए रख सके। समाज द्वारा इस नियमित संस्था का आयोजन इसीलिए किया गया है कि यहाँ रह कर विद्यार्थी, सामाजिक जीवन का अनुभव कर सकें। अपने इस उत्तरदायित्व को भली-भांति वहन करने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि पाठशाला, अन्य सामाजिक संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करे। पेने (Payne) के मतानुसार [illegible]

(७) विद्यार्थी जिन अन्य सामाजिक संस्थाओं में सक्रिय रूप से भाग लें, उसकी सूचना पाठशाला के अधिकारियों को मिलनी चाहिए ताकि विद्यार्थियों का उचित निर्देशन (Guidance) किया जा सके।

(८) यदि किन्हीं सामाजिक संस्थाओं के कार्यक्रमों के द्वारा समाज का अहित हो, तो उनका विरोध करने के लिए व्यवहारिक कदम उठाए जाएँ।

कुटुम्ब और पाठशाला—

(क) अभिभावक दिवस (Parents' Day)—कम से कम वर्ष में एक बार, विद्यार्थी के अभिभावकों को पाठशाला में बुलाया जाए। इस अवसर पर विद्यार्थियों द्वारा किए गए कार्य की प्रदर्शिनी का आयोजन किया जाए तथा छात्र अपनी पाठान्तर क्रियाओं का प्रदर्शन करें। प्रधानाध्यापक छात्रों के अभिभावकों से मिलें, उन्हें पाठशाला के नवीन कार्यक्रम से परिचित कराए तथा पाठशाला के सामने जो जो कठिनाइयाँ हैं, उनकी चर्चा की जाए। माता-पिता, छात्र-छात्राओं के अध्यापकों से मिलें और भिन्न-भिन्न समस्याओं पर विचार विमर्श किया जाए।

(ख) अभिभावक-अध्यापक समिति (Parent-teacher associations)—(i) इस प्रकार की समितियाँ कुटुम्ब तथा पाठशाला दोनों के लिए उपयोगी सिद्ध होंगी। बालकों की व्यक्तिगत कठिनाइयाँ, परिवार और पाठशाला की कठिनाइयाँ, इन सब की चर्चा इन समितियों द्वारा की जा सकती है। यदि अध्यापकों के सामने कोई नया विचार या नई शिक्षा प्रणाली हो तो वे उसे अभिभावकों के सम्मुख रख सकते हैं।

(ii) अध्यापकों को, बालकों के भविष्य के सम्बन्ध में, माता-पिता के दृष्टिकोण को समझने का यत्न करना चाहिए।

(iii) विद्यार्थियों की प्रगति की सूचना समय-समय पर अभिभावकों को भेजी जाए। इस रिपोर्ट में बालकों के सभी कार्यों की सूचना होनी चाहिए ताकि माता-पिता को अपने बालकों के सम्बन्ध में पूरी-पूरी जानकारी मिल सके।

(ग) भेंट कर्ता अध्यापक (The Visiting Teacher) पाठशाला में कुछ ऐसे अध्यापक होने चाहिए जो समय-समय पर,

(७) विद्यार्थी जिन अन्य सामाजिक संस्थाओं में सक्रिय रूप से भाग लें, उसकी सूचना पाठशाला के अधिकारियों को मिलनी चाहिए ताकि विद्यार्थियों का उचित निर्देशन (Guidance) किया जा सके।

(८) यदि किन्हीं सामाजिक संस्थाओं के कार्यक्रमों के द्वारा समाज का अहित हो, तो उनका विरोध करने के लिए व्यवहारिक कदम उठाए जाएँ।

कुटुम्ब और पाठशाला—

(क) अभिभावक दिवस (Parents' Day)—कम से कम वर्ष में एक बार, विद्यार्थी के अभिभावकों को पाठशाला में बुलाया जाए। इस अवसर पर विद्यार्थियों द्वारा किए गए कार्य की प्रदर्शिनी का आयोजन किया जाए तथा छात्र अपनी पाठान्तर क्रियाओं का प्रदर्शन करें। प्रधानाध्यापक छात्रों के अभिभावकों से मिले, उन्हें पाठशाला के नवीन कार्यक्रम से परिचित कराए तथा पाठशाला के सामने जो जो कठिनाइयाँ हैं, उनकी चर्चा की जाए। माता-पिता, छात्र-छात्राओं के अध्यापकों से मिलें और भिन्न-भिन्न समस्याओं पर विचार विमर्श किया जाए।

(ख) अभिभावक-अध्यापक समिति (Parent-teacher associations)—(i) इस प्रकार की समितियाँ कुटुम्ब तथा पाठशाला दोनों के लिए उपयोगी सिद्ध होंगी। बालकों की व्यक्तिगत कठिनाइयाँ, परिवार और पाठशाला की कठिनाइयाँ, इन सब की चर्चा इन समितियों द्वारा की जा सकती है। यदि अध्यापकों के सामने कोई नया विचार या नई शिक्षा प्रणाली हो तो वे उसे अभिभावकों के सम्मुख रख सकते हैं।

(ii) अध्यापकों को, बालकों के भविष्य के सम्बन्ध में, माता-पिता के दृष्टिकोण को समझने का यत्न करना चाहिए।

(iii) विद्यार्थियों की प्रगति की सूचना समय-समय पर अभिभावकों को भेजी जाए। इस रिपोर्ट में बालकों के सभी कार्यों की सूचना होनी चाहिए ताकि माता-पिता को अपने बालकों के सम्बन्ध में पूरी-पूरी जानकारी मिल सके।

(ग) भेंट कर्ता अध्यापक (The Visiting Teacher) पाठशाला में कुछ ऐसे अध्यापक होने चाहिए जो समय-समय पर,

(२) धर्म के द्वारा बालकों के नैतिक विकास मे बडी सहायता मिलती है। धार्मिक सस्थाओं द्वारा स्थापित पाठशालाओं मे धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन करवाया जाता है। इससे बालकों में सद्गुणों की अभिवृद्धि होती है।

(३) धार्मिक सस्थाओं द्वारा सामाजिक शिक्षा तथा कलात्मक शिक्षा के भिन्न-भिन्न कार्यक्रमों का आयोजन होना चाहिए।

(४) इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाए कि बालकों को जो धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा प्रदान की जाए, वह राष्ट्र तथा समाज के आदर्शों के अनुकूल हो।

(५) यदि पाठशाला मे प्रशिक्षण के कार्य की व्यवस्था ठीक ढंग से की गई है तो बालक के मन मे बैठी हुई पुरानी रूढ़ियों को दूर करने में किसी भी प्रकार की कठिनाई नहीं होगी।

पाठशाला तथा अन्य निष्क्रिय संस्थाएँ
(School and other passive Agencies)

(२) धर्म के द्वारा बालकों के नैतिक विकास मे बडी सहायता मिलती है। धार्मिक सस्थाओ द्वारा स्थापित पाठशालाओ मे धार्मिक ग्रथों का अध्ययन करवाया जाता है। इससे बालको में सद्गुणो की अभिवृद्धि होती है।

(३) धार्मिक सस्थाओ द्वारा सामाजिक शिक्षा तथा कलात्मक शिक्षा के भिन्न-भिन्न कार्यक्रमो का आयोजन होना चाहिए।

(४) इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाए कि बालकों को जो धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा प्रदान की जाए, वह राष्ट्र तथा समाज के आदर्शों के अनुकूल हो।

(५) यदि पाठशाला मे प्रशिक्षण के कार्य की व्यवस्था ठीक ढंग से की गई है तो बालक के मन मे बैठी हुई पुरानी रूढ़ियों को दूर करने में किसी भी प्रकार की कठिनाई नहीं होगी।

पाठशाला तथा अन्य निष्क्रिय संस्थाएँ
(School and other passive Agencies)

(२) धर्म के द्वारा बालकों के नैतिक विकास में बड़ी सहायता मिलती है। धार्मिक संस्थाओं द्वारा स्थापित पाठशालाओं में धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन करवाया जाता है। इससे बालकों में सद्गुणों की अभिवृद्धि होती है।

(३) धार्मिक संस्थाओं द्वारा सामाजिक शिक्षा तथा कलात्मक शिक्षा के भिन्न-भिन्न कार्यक्रमों का आयोजन होना चाहिए।

(४) इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाए कि बालकों को जो धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा प्रदान की जाए, वह राष्ट्र तथा समाज के आदर्शों के अनुकूल हो।

(५) यदि पाठशाला में प्रशिक्षण के कार्य की व्यवस्था ठीक ढंग से की गई है तो बालक के मन में बैठी हुई पुरानी रूढ़ियों को दूर करने में किसी भी प्रकार की कठिनाई नहीं होगी।

पाठशाला तथा अन्य निष्क्रिय संस्थाएँ
(School and other passive Agencies)

(क) चल-चित्र (Motion pictures)—(१) चल-चित्रों द्वारा जहाँ बालकों का मनोरंजन होता है, वहाँ वे किसी कार्य को आकर्षक ढंग से करना भी सीखते हैं।

(२) चल-चित्रों द्वारा कक्षा-गृह में ही, बालकों को बाहिरी संसार का परिचय मिल जाता है।

(३) शिक्षा के दृश्य-श्रव्य साधन के रूप में चल-चित्रों का बड़ा महत्व है।

(४) चल-चित्रों का प्रयोग इस ढंग से किया जाए कि पाठ्य-वस्तु के अध्यापन तथा शिक्षा प्रणाली के रूप में उन से पूरी-पूरी सहायता मिले। इतिहास तथा भूगोल का अध्यापन चल-चित्रों द्वारा बड़े अच्छे ढंग से हो सकता है।

(५) साधारण चल-चित्रों के द्वारा भी बालकों को सामाजिक समस्याओं का परिचय प्राप्त होता है।

(२) धर्म के द्वारा बालको के नैतिक विकास मे बडी सहायता मिलती है। धार्मिक संस्थाओ द्वारा स्थापित पाठशालाओ मे धार्मिक ग्रंथो का अध्ययन करवाया जाता है। इससे बालको मे सद्गुणो की अभिवृद्धि होती है।

(३) धार्मिक संस्थाओ द्वारा सामाजिक शिक्षा तथा कलात्मक शिक्षा के भिन्न-भिन्न कार्यक्रमो का आयोजन होना चाहिए।

(४) इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाए कि बालको को जो धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा प्रदान की जाए, वह राष्ट्र तथा समाज के आदर्शों के अनुकूल हो।

(५) यदि पाठशाला मे प्रशिक्षण के कार्य की व्यवस्था ठीक ढंग से की गई है तो बालक के मन मे बैठी हुई पुरानी रूढियो को दूर करने मे किसी भी प्रकार की कठिनाई नहीं होगी।

पाठशाला तथा अन्य निष्क्रिय संस्थाएँ
(School and other passive Agencies)

(क) चल-चित्र (Motion pictures)—(१) चल-चित्रो द्वारा जहाँ बालको का मनोरंजन होता है, वहाँ वे किसी कार्य को आकर्षक ढंग से करना भी सीखते हैं।

(२) चल-चित्रों द्वारा कक्षा-गृह मे ही, बालको को बाहिरी संसार का परिचय मिल जाता है।

(३) शिक्षा के दृश्य-श्रव्य साधन के रूप मे चल-चित्रो का बड़ा महत्व है।

(४) चल-चित्रों का प्रयोग इस ढंग से किया जाए कि पाठ्य-वस्तु के अध्यापन तथा शिक्षा प्रणाली के रूप मे उन से पूरी-पूरी सहायता मिले। इतिहास तथा भूगोल का अध्यापन चल-चित्रों द्वारा बड़े अच्छे ढंग से हो सकता है।

(५) साधारण चल-चित्रो के द्वारा भी बालको को सामाजिक समस्याओं का परिचय प्राप्त होता है।

पाठ्यक्रम
(Curriculum)

Q 67. What are the defects in the existing curriculum Discuss some of the guiding principles of curriculum construction.

[Panjab 1945, Nagpur 1948, Agra 1957]

(वर्तमान पाठ्यक्रम के दोषों की चर्चा करते हुए, स्पष्ट करो कि किन सिद्धान्तों के अनुसार पाठ्यक्रम का गठन किया जाए ?)

[पंजाब १९४५, नागपुर १९४८, आगरा १९५७]

उत्तर—वर्तमान पाठ्यक्रम के दोष—

मुदालियर कमीशन (Mudaliar Commission) ने पाठ्यक्रम के निम्नलिखित दोषों की ओर संकेत किया है :—

(i) **पाठ्यक्रम का संकुचित होना**—वर्तमान पाठ्यक्रम बहुत संकुचित है। पाठ्य-सामग्री के चुनाव में बालकों की रुचि और योग्यता का बिलकुल ध्यान नहीं रखा जाता। भिन्न-भिन्न स्तर के बालकों के लिए, वह किसी प्रकार की प्रेरणा नहीं देता। बालक आगे जाकर एक उत्तरदायी नागरिक बने, इसके लिए किसी प्रकार का कोई आयोजन नहीं। इसका परिणाम यह होता है कि बी० ए०, एम० ए० पास कर लेने के पश्चात् भी विद्यार्थी आत्म निर्भर नहीं हो पाता।

(ii) **पुस्तकीय शिक्षा पर विशेष बल**—भिन्न-भिन्न विश्व विद्यालयों के [illegible] विश्लेषण किया जाए तो ज्ञात होगा कि पुस्तकों द्वारा

पाठ्यक्रम
(Curriculum)

Q 67. What are the defects in the existing curriculum Discuss some of the guiding principles of curriculum construction.
[Panjab 1945, Nagpur 1948, Agra 1957]

(वर्तमान पाठ्यक्रम के दोषों की चर्चा करते हुए, स्पष्ट करो कि किन सिद्धान्तों के अनुसार पाठ्यक्रम का गठन किया जाए ?)
[पंजाब १९४५, नागपुर १९४८, आगरा १९५७]

उत्तर—वर्तमान पाठ्यक्रम के दोष—

मुदालियर कमीशन (Mudaliar Commission) ने पाठ्यक्रम के निम्नलिखित दोषों की ओर सकेत किया है :—

(i) पाठ्यक्रम का संकुचित होना—वर्तमान पाठ्यक्रम बहुत सकुचित है। पाठ्य-सामग्री के चुनाव में बालकों की रुचि और योग्यता का बिलकुल ध्यान नहीं रखा जाता। भिन्न-भिन्न स्तर के बालकों के लिए, वह किसी प्रकार की प्रेरणा नहीं देता। बालक आगे जाकर एक उत्तरदायी नागरिक बने, इसके लिए किसी प्रकार का कोई आयोजन नहीं। इसका परिणाम यह होता है कि बी० ए०, एम० ए० पास कर लेने के पश्चात् भी विद्यार्थी आत्म निर्भर नहीं हो पाता।

(ii) पुस्तकीय शिक्षा पर विशेष बल—भिन्न-भिन्न विश्व विद्यालयों के [illegible] विश्लेषण किया जाए तो ज्ञात होगा कि पुस्तकों द्वारा

हाथ के काम को घृणा से देखते हैं और उन में व्यावहारिक ज्ञान का सर्वथा अभाव है।

पाठ्यक्रम-निर्माण के कुछ सिद्धान्त—

सैकंडरी एजुकेशन कमीशन (Secondary Education Commission) की रिपोर्ट के अनुसार, पाठ्यक्रम के निर्माण में, हमें निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए —

(i) पाठ्यक्रम से हमारा तात्पर्य केवल उन्हीं साहित्यिक (academic) विषयों से ही नहीं है जो लगातार कई वर्षों से पढ़ाये जाते रहे हैं। पाठ्यक्रम में वे सब अनुभव आ जाते हैं जो बालक भिन्न-भिन्न कार्यक्रमों द्वारा प्राप्त करते हैं। विद्यार्थी अनौपचारिक रूप से पाठशाला में, खेल के मैदान में, कक्षा गृह में, पुस्तकालय में, प्रयोगशाला में, तथा अध्यापकों के सम्पर्क के द्वारा जो अनुभव प्राप्त करते हैं, उन सब का सम्मिलित रूप ही (Totality of experiences) पाठ्यक्रम है। इस दृष्टि से पाठशाला का पूरा जीवन ही पाठ्यक्रम बन जाता है।

(ii) पाठ्यक्रम में दूसरा गुण यह होना चाहिए कि उसमें विविधता (Variety) तथा लचीलापन (Elasticity) पाया जाए। ऐसा होने पर ही पाठ्यक्रम बालकों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं (Individual needs) और रुचियों (Interests) की पूर्ति कर सकेगा और उसमें छात्रों तथा छात्राओं के व्यक्तिगत भेदों (Individual differences) का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाएगा।

(iii) पाठ्यक्रम का सम्बन्ध जातीय जीवन (Community life) से होना चाहिए। यह सामुदायिक जीवन की मुख्य-मुख्य विशेषताओं तथा क्रियाओं का परिचय बालकों को करा सके। उसमें परिवर्तन-शीलता के भाव होने चाहिए जिनके द्वारा विद्यार्थी नवीन परिस्थितियों से सामञ्जस्य स्थापित कर सकें।

(iv) पाठ्यक्रम का क्षेत्र व्यापक होना चाहिए। वह न केवल बालकों को [illegible] की प्रेरणा ही दे, अपितु उनमें वह क्षमता भी उत्पन्न करे जि

हाथ के काम को घृणा से देखते हैं और उन में व्यावहारिक ज्ञान का सर्वथा अभाव है।

पाठ्यक्रम-निर्माण के कुछ सिद्धान्त—

सैकंडरी एजूकेशन कमीशन (Secondary Education Commission) की रिपोर्ट के अनुसार, पाठ्यक्रम के निर्माण में, हमें निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए —

(i) पाठ्यक्रम से हमारा तात्पर्य केवल उन्हीं साहित्यिक (academic) विषयों से ही नहीं है जो लगातार कई वर्षों से पढ़ाये जाते रहे हैं। पाठ्यक्रम में वे सब अनुभव आ जाते हैं जो बालक भिन्न-भिन्न कार्यक्रमों द्वारा प्राप्त करते हैं। विद्यार्थी अनौपचारिक रूप से पाठशाला में, खेल के मैदान में, कक्षा गृह में, पुस्तकालय में, प्रयोगशाला में, तथा अध्यापकों के सम्पर्क के द्वारा जो अनुभव प्राप्त करते हैं, उन सब का सम्मिलित रूप ही (Totality of experiences) पाठ्यक्रम है। इस दृष्टि से पाठशाला का पूरा जीवन ही पाठ्यक्रम बन जाता है।

(ii) पाठ्यक्रम में दूसरा गुण यह होना चाहिए कि उसमें विविधता (Varietry) तथा लचीलापन (Elasticity) पाया जाए। ऐसा होने पर ही पाठ्यक्रम बालकों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं (Individual needs) और रुचियों (Interests) की पूर्ति कर सकेगा और उसमें छात्रों तथा छात्राओं के व्यक्तिगत भेदों (Individual differences) का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाएगा।

(iii) पाठ्यक्रम का सम्बन्ध जातीय जीवन (Community life) से होना चाहिए। यह सामुदायिक जीवन की मुख्य-मुख्य विशेषताओं तथा क्रियाओं का परिचय बालकों को करा सके। उसमें परिवर्तन-शीलता के भाव होने चाहिए जिनके द्वारा विद्यार्थी नवीन परिस्थितियों से सामञ्जस्य स्थापित कर सकें।

(iv) पाठ्यक्रम का क्षेत्र व्यापक होना चाहिए। वह न केवल बालकों को कार्य करने की प्रेरणा ही दे, अपितु उनमें वह क्षमता भी उत्पन्न करे जिस

(ix) आज समाज में जो हिंसा, पक्षपात, अनैतिकता, तथा संकुचित मनोवृत्ति के दर्शन होते हैं, उसका प्रमुख कारण धार्मिक भावनाओं का अभाव है। अतएव पाठ्यक्रम में धार्मिक शिक्षा का समुचित आयोजन होना चाहिए।

(x) स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार पाठ्यक्रम में भी अन्तर रहेगा। नगर के बालक तथा गाँव के बालक, इन दोनों का वातावरण भिन्न-भिन्न होता है, इसलिए नगर और गाँव के पाठ्यक्रम में भी भेद रहेगा। गाँव के निवासियों का व्यवसाय कृषि है। यहाँ के बालक पालतू जानवरों, जंगली पक्षियों आदि से परिचित होते हैं, इसलिए पाठ्यक्रम में इन बातों की व्यवस्था की जाएगी। श्री भाटिया के कथनानुसार कृषि-प्रधान देश के बालकों को जो गणित सिखाया जाएगा, वह उद्योग-प्रधान देश के गणित से कुछ भिन्न होगा।

(xi) शिशु-शालाओं तथा प्रारम्भिक कक्षाओं में बालक और बालिकाओं को साथ-साथ पढ़ाया जा सकता है। इस अवस्था में उनकी आवश्यकताएँ ...भग समान होती हैं। परन्तु वे जैसे-जैसे बड़े होते हैं, उनकी आवश्यकताएँ भिन्न होती जाती हैं। लड़कियों को सिलाई तथा गृह-विज्ञान इत्यादि की ...ा दी जाएगी तथा लड़कों को अन्य क्रियाओं की। शारीरिक शिक्षा, ...स्थ्य विज्ञान, कला, गणित आदि विषयों को भी लड़के-लड़कियों को ...-भिन्न प्रकार से पढ़ाया जाएगा।

Q. 68. Discuss the philosophical basis of the curriculum.
(दार्शनिक दृष्टि से पाठ्यक्रम का विवेचन करो।)

उत्तर—सभी विचारकों ने ज्ञान को ही शिक्षा का सबसे अधिक आवश्यक ...न माना है। उनके मतानुसार बालकों को उपयोगी तथा रुचिकर अनुभव ...ने चाहिए। परन्तु प्रश्न यह है कि पाठशाला में बालक के लिए किस ...र [illegible] तथा अ

(ix) आज समाज में जो हिंसा, पक्षपात, अनैतिकता, तथा संकुचित मनोवृत्ति के दर्शन होते हैं, उसका प्रमुख कारण धार्मिक भावनाओं का अभाव है। अतएव पाठ्यक्रम में धार्मिक शिक्षा का समुचित आयोजन होना चाहिए।

(x) स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार पाठ्यक्रम में भी अन्तर रहेगा। नगर के बालक तथा गाँव के बालक, इन दोनों का वातावरण भिन्न-भिन्न होता है, इसलिए नगर और गाँव के पाठ्यक्रम में भी भेद रहेगा। गाँव के निवासियों का व्यवसाय कृषि है। यहाँ के बालक पालतू जानवरों, जंगली पक्षियों आदि से परिचित होते हैं, इसलिए पाठ्यक्रम में इन बातों की व्यवस्था की जाएगी। श्री भाटिया के कथनानुसार कृषि-प्रधान देश के बालकों को जो गणित सिखाया जाएगा, वह उद्योग-प्रधान देश के गणित से कुछ भिन्न होगा।

(xi) शिशु-शालाओं तथा प्रारम्भिक कक्षाओं में बालक और बालिकाओं को साथ-साथ पढ़ाया जा सकता है। इस अवस्था में उनकी आवश्यकताएँ लगभग समान होती हैं। परन्तु वे जैसे-जैसे बड़े होते हैं, उनकी आवश्यकताएँ भी भिन्न होती जाती हैं। लड़कियों को सिलाई तथा गृह-विज्ञान इत्यादि की शिक्षा दी जाएगी तथा लड़कों को अन्य क्रियाओं की। शारीरिक शिक्षा, स्वास्थ्य विज्ञान, कला, गणित आदि विषयों को भी लड़के-लड़कियों को भिन्न-भिन्न प्रकार से पढ़ाया जाएगा।

Q. 68. Discuss the philosophical basis of the curriculum.
(दार्शनिक दृष्टि से पाठ्यक्रम का विवेचन करो।)

होना चाहिए। पाठशाला के द्वारा बालक को उन अनुभवों की प्राप्ति होनी चाहिए जो बाद में उसके काम आएँ। पाठ्यक्रम के द्वारा दिया जाने वाला *ज्ञान तथा कौशल (Skill) ऐसा हो जो न केवल बालक के वर्तमान जीवन* के लिए ही, अपितु भविष्य के प्रौढ़ जीवन के लिए भी उपयोगी हो।

इस दृष्टि से प्रत्येक बालक को अपनी भाषा बोलने का, पढ़ने का, लिखने का तथा अकगणित और नापतोल का कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। इसी प्रकार शरीर-विज्ञान तथा स्वास्थ्य विज्ञान का भी पाठ्यक्रम में स्थान रहेगा। उपयोगिता वाली यह कसौटी इतिहास और भूगोल की शिक्षा को आवश्यक बनाती है, क्योंकि इनकी सहायता से कोई भी नागरिक अपने दैनिक जीवन की समस्याओं को सरलता से समझ सकता है। इसी प्रकार छात्राओं के लिए गृह-विज्ञान की तथा देहाती विद्यार्थियों के लिए कृषि-विज्ञान की आवश्यकता पड़ेगी। यही उपयोगितावाद बाद में जाकर व्यावसायिक शिक्षा को भी आवश्यक बनाता है।

जहाँ तक प्राथमिक-शिक्षा के पाठ्यक्रम (Elementary School Curriculum) का सम्बन्ध है, डिवी (Dewey) विषय (Subject) अथवा अध्यापक की अपेक्षा बालक को ही अधिक महत्त्व देता है। क्रिया-शीलता (activity) बाल्यावस्था की आवश्यक विशेषता है। पाठशालाओं में बालकों को जो अनुभव प्रदान कराए जाएँ वे उनकी स्वाभाविक क्रिया-शीलता तथा अभिरुचियों पर आधारित हों। यदि बालकों के अनुभव प्रचुर *तथा पूर्ण होंगे तो वे अपने भावी जीवन की अच्छी से अच्छी तैयारी कर रहे* हैं। डिवी ने बालकों की स्वाभाविक अभिरुचियों को चार भागों में बाँटा है –

(i) बातचीत करने की इच्छा,

(ii) वस्तुओं के विषय में जानकारी प्राप्त करना;

(iii) वस्तुओं को बनाने की इच्छा या रचनात्मक प्रवृत्ति;

(iv) कलात्मक अभिव्यक्ति।

इन्हीं बातों के प्रयोग पर बालक का विकास निर्भर करता है। इन्हीं की पूर्ति के लिए बालक लिखना, पढ़ना तथा गिनने की क्रियाएँ सीखता है। इसलिए यह आवश्यक है कि :—

होना चाहिए। पाठशाला के द्वारा बालक को उन अनुभवों की प्राप्ति होनी चाहिए जो बाद में उसके काम आएँ। पाठ्यक्रम के द्वारा दिया जाने वाला *ज्ञान तथा कौशल (Skill) ऐसा हो जो न केवल बालक के वर्तमान जीवन* के लिए ही, अपितु भविष्य के प्रौढ़ जीवन के लिए भी उपयोगी हो।

इस दृष्टि से प्रत्येक बालक को अपनी भाषा बोलने का, पढ़ने का, लिखने का तथा अंकगणित और नापतोल का कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। इसी प्रकार शरीर-विज्ञान तथा स्वास्थ्य विज्ञान का भी पाठ्यक्रम में स्थान रहेगा। उपयोगिता वाली यह कसौटी इतिहास और भूगोल की शिक्षा को आवश्यक बनाती है, क्योंकि इनकी सहायता से कोई भी नागरिक, अपने दैनिक जीवन की समस्याओं को सरलता से समझ सकता है। इसी प्रकार छात्राओं के लिए गृह-विज्ञान की तथा देहाती विद्यार्थियों के लिए कृषि-विज्ञान की आवश्यकता पड़ेगी। यही उपयोगितावाद बाद में जाकर व्यावसायिक शिक्षा को भी आवश्यक बनाता है।

जहाँ तक प्राथमिक-शिक्षा के पाठ्यक्रम (Elementary School Curriculum) का सम्बन्ध है, डिवी (Dewey) विषय (Subject) अथवा अध्यापक की अपेक्षा बालक को ही अधिक महत्त्व देता है। क्रियाशीलता (activity) बाल्यावस्था की आवश्यक विशेषता है। पाठशालाओं में बालकों को जो अनुभव प्रदान कराए जाएँ वे उनकी स्वाभाविक क्रियाशीलता तथा अभिरुचियों पर आधारित हों। यदि बालकों के अनुभव प्रचुर *तथा पूर्ण होंगे तो वे अपने भावी जीवन की अच्छी से अच्छी तैयारी कर रहे* हैं। डिवी ने बालकों की स्वाभाविक अभिरुचियों को चार भागों में बाँटा है –

(i) बातचीत करने की इच्छा,
(ii) वस्तुओं के विषय में जानकारी प्राप्त करना;
(iii) वस्तुओं को बनाने की इच्छा या रचनात्मक प्रवृत्ति;
(iv) कलात्मक अभिव्यक्ति।

इन्हीं बातों के प्रयोग पर बालक का विकास निर्भर करता है। इन्हीं की पूर्ति के लिए बालक लिखना, पढ़ना तथा गिनने की क्रियाएँ सीखता है इसलिए यह आवश्यक है कि :—

(ग) भाषा या जन-कौशल (Folk Craft)—भाषा के विभिन्न स्वरूपों का अध्ययन।

अध्यापकों में मानवीय गुण कूट-कूट कर भरे होने चाहिए जिससे कि वे अपने विद्यार्थियों में, इनका विकास कर सकें।

नन (Nunn) ने इसी बात का विश्लेषण अधिक उपयोगी ढंग से किया है। उसके मतानुसार पाठशालाओं में उन मानवीय गति-विधियों का प्रतिबिम्ब दिखाई देना चाहिए जो विस्तृत जगत में महानतम और सर्वाधिक स्थायी सार्थकता रखती हैं और मानवीय आत्मा की मुख्य अभिव्यक्तियाँ हैं (The school must reflect those human activities that are of greatest and most permanent significance in the wider world, the grand expressions of the human spirit.)।

नन आगे चलकर विद्यालयों में प्रतिबिम्बित होने वाली गतिविधियों को दो समूहों में विभाजित करता है :—

(i) वे कार्य जिनका सम्बन्ध मनुष्य के व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन से है ; जैसे—स्वास्थ्य और शारीरिक रक्षा का ध्यान रखना, शिष्टाचार, सामाजिक संगठन, नैतिक नियम और धर्म इत्यादि।

(ii) वे कार्य जिनका सम्बन्ध रचनात्मक क्रियाशीलनों से है।

प्रथम समूह के कार्य अपनी प्रकृति के कारण विषय नहीं माने जा सकते। विद्यार्थियों के अध्ययन द्वारा उन्हें परिपुष्ट किया जाएगा। उदाहरणस्वरूप सामाजिक संगठन और नैतिक नियम पाठशाला के समस्त कार्यों में व्याप्त होने चाहिए। यही बात धार्मिक भावना के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है।

दूसरे समूह पर विचार करते हुए नन ने कहा है कि इन रचनात्मक क्रियाशीलनों का समावेश शिक्षा की प्रत्येक योजना में होना चाहिए :—

(क) साहित्य—जिसमें मातृभूमि का सर्वोत्तम साहित्य सम्मिलित है।

(ख) कलाएँ—जैसे संगीत, नृत्य आदि।

(ग) हस्तकला—इसके सिखाने में दो बातों का ध्यान रखा जाए :—

(ग) भाषा या जन-कौशल (Folk Craft)—भाषा के विभिन्न स्वरूपों का अध्ययन।

अध्यापकों में मानवीय गुण कूट-कूट कर भरे होने चाहिए जिससे कि वे अपने विद्यार्थियों में, इनका विकास कर सकें।

नन (Nunn) ने इसी बात का विश्लेषण अधिक उपयोगी ढग से किया है। उसके मतानुसार पाठशालाओं में उन मानवीय गति-विधियों का प्रतिबिम्ब दिखाई देना चाहिए जो विस्तृत जगत में महानतम और सर्वाधिक स्थायी सार्थकता रखती हैं और मानवीय आत्मा की भव्य अभिव्यक्तियाँ हैं (The school must reflect those human activities that are of greatest and most permanent significance in the wider world, the grand expressions of the human spirit.)।

नन आगे चलकर विद्यालयों में प्रतिबिम्बित होने वाली गतिविधियों को दो समूहों में विभाजित करता है :—

(1) वे कार्य जिनका सम्बन्ध मनुष्य के व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन से है; जैसे—स्वास्थ्य और शारीरिक रक्षा का ध्यान रखना, शिष्टाचार, सामाजिक संगठन, नैतिक नियम और धर्म इत्यादि।

(ii) वे कार्य जिनका सम्बन्ध रचनात्मक क्रियाशीलता से है।

प्रथम समूह के कार्य अपनी प्रकृति के कारण विषय नहीं माने जा सकते। विद्यार्थियों के अध्ययन द्वारा उन्हें परिपुष्ट किया जाएगा। उदाहरणस्वरूप सामाजिक संगठन और नैतिक नियम पाठशाला के समस्त कार्यों में व्याप्त होने चाहिए। यही बात धार्मिक भावना के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है।

दूसरे समूह पर विचार करते हुए नन ने कहा है कि इन रचनात्मक क्रियाशीलताओं का समावेश शिक्षा की प्रत्येक योजना में होना चाहिए :—

(क) साहित्य—जिसमें मातृभूमि का सर्वोत्तम साहित्य सम्मिलित है।

(ख) कलाएँ—जैसे संगीत, नृत्य आदि।

(ग) हस्तकला—इसके सिखाने में दो बातों का ध्यान रखा जाए :—

उत्तर—वर्तमान शिक्षा का समन्वय रहित स्वरूप :—

आजकल पाठशालाओं में जो भिन्न-भिन्न विषय पढ़ाए जाते हैं, उनमें किसी भी प्रकार का सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जाता। ऐसा समझा जाता है कि प्रत्येक विषय का अपना स्वतन्त्र महत्व है, अर्थात् इतिहास या भूगोल आदि विषयों तथा गणित का विज्ञान आदि विषयों से कोई सम्बन्ध नहीं। सभी विषय एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न-भिन्न हैं। उनके बीचों-बीच एक ऐसी सीमा रेखा खींच दी गई है जिसका उल्लंघन करना किसी भी दशा में उचित नहीं।

इस प्रकार न केवल भिन्न-भिन्न विषय एक दूसरे से अलग हो गए, अपितु एक विषय के भी कई भाग कर दिए गए, उदाहरणस्वरूप गणित को रेखा गणित, अंक गणित तथा बीज गणित आदि उप-विषयों में, तथा भाषा को रचना, श्रुत-लेख, व्याकरण आदि उप-विषयों में विभाजित कर दिया गया। किसी भी पाठ को पढ़ाते समय—इन उप-विषयों में भी किसी प्रकार का सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जाता। इससे ज्ञान की एकता नष्ट हो गई।

समन्वय-रहित शिक्षा के दोष :—

(क) यदि भिन्न-भिन्न विषयों में सम्बन्ध स्थापित न किया जाए तो बहुत सा समय व्यर्थ ही, एक बार पढ़े हुए विषय को दोबारा पढ़ाने में नष्ट करना पड़ता है। जो बातें बालक एक बार चित्र-कला (Drawing) में पढ़ चुके हैं उन्हें फिर से रेखा-गणित में पढ़ाया जाता है। इसी प्रकार गणित और विज्ञान की कई बातों को इन्हें दोबारा पढ़ना पड़ता है। भिन्न-भिन्न भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कराने के सम्बन्ध में भी हम यही बात देखते हैं। बालक एक भाषा में व्याकरण का जो सिद्धान्त सीखे चुके हैं उसे फिर से दूसरी भाषा में सीखना पड़ता है। मान लो वे हिन्दी भाषा के व्याकरण में "क्रिया" का ज्ञान प्राप्त कर चुके हैं। अब इसी "क्रिया" को अंग्रेजी भाषा के व्याकरण में वे verb के नाम से दोबारा पढ़ेंगे। यदि verb को पढ़ाते समय विद्यार्थियों को यह बता दिया जाए कि "क्रिया" को अंग्रेजी भाषा में verb कहते हैं, तो कितना समय बच सकता है।

उत्तर—वर्तमान शिक्षा का समन्वय रहित स्वरूप :—

आजकल पाठशालाओं में जो भिन्न-भिन्न विषय पढ़ाए जाते हैं, उनमें किसी भी प्रकार का सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जाता। ऐसा समझा जाता है कि प्रत्येक विषय का अपना स्वतन्त्र महत्व है, अर्थात् इतिहास वा भूगोल आदि विषयों तथा गणित का विज्ञान आदि विषयों में कोई सम्बन्ध नहीं। सभी विषय एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न-भिन्न हैं। उनके बीचों-बीच एक ऐसी सीमा रेखा खींच दी गई है जिसका उल्लंघन करना किसी भी दशा में उचित नहीं।

इस प्रकार न केवल भिन्न-भिन्न विषय एक दूसरे से अलग हो गए, अपितु एक विषय के भी कई भाग कर दिए गए, उदाहरणस्वरूप गणित को रेखा गणित, अंक गणित तथा बीज गणित आदि उप-विषयों में, तथा भाषा को रचना, श्रुत-लेख, व्याकरण आदि उप-विषयों में विभाजित कर दिया गया। किसी भी पाठ को पढ़ाते समय—इन उप-विषयों में भी किसी प्रकार का सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जाता। इससे ज्ञान की एकता नष्ट हो गई।

समन्वय-रहित शिक्षा के दोष :—

(क) यदि भिन्न-भिन्न विषयों में सम्बन्ध स्थापित न किया जाए तो बहुत सा समय व्यर्थ ही, एक बार पढ़े हुए विषय को दोबारा पढ़ाने में नष्ट करना पड़ता है। जो बातें बालक एक बार चित्र-कला (Drawing) में पढ़ चुके हैं उन्हें फिर से रेखा-गणित में पढ़ाया जाता है। इसी प्रकार गणित और विज्ञान की कई बातों को इन्हें दोबारा पढ़ना पड़ता है। भिन्न-भिन्न भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कराने के सम्बन्ध में भी हम यही बात देखते हैं। बालक एक भाषा में व्याकरण का जो सिद्धान्त सीखे चुके हैं उसे फिर से दूसरी भाषा में सीखना पड़ता है। मान लो वे हिन्दी भाषा के व्याकरण में "क्रिया" का ज्ञान प्राप्त कर चुके हैं। अब इसी "क्रिया" को अंग्रेजी भाषा के व्याकरण में वे verb के नाम से दोबारा पढ़ेंगे। यदि verb को पढ़ाते समय विद्यार्थियों को यह बता दिया जाए कि "क्रिया" को अंग्रेजी भाषा में verb कहते हैं, तो कितना समय बच सकता है।

वाली समस्याओं को सुलझाने के लिए विभिन्न विषयों के ज्ञान की आवश्यकता पड़ेगी। इसलिए विद्यार्थियों को ऐसे अवसर प्रदान किये जावें कि वे अपनी समस्याएँ स्वयं सुलझा सकें। इन समस्याओं को सुलझाने के लिए, जब जिस विषय के ज्ञान की आवश्यकता अनुभव हो, तब वह पढ़ाया जावे।

(४) बुनियादी शिक्षा और केन्द्रीकरण—(Basic Education) बुनियादी शिक्षा की वर्धा योजना में किसी न किसी हस्त उद्योग (Craft) को केन्द्रीय विषय बनाया जाता है। अन्य विषयों की शिक्षा उद्योग के माध्यम के द्वारा दी जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भिन्न-भिन्न विचारकों ने भिन्न-भिन्न विषयों को केन्द्र बनाया है। किसी विशेष पक्ष का समर्थन किये बिना ही हम कह सकते हैं कि आधुनिक शिक्षा में समन्वय पद्धति का बड़ा मान है। अतएव बालकों को भिन्न-भिन्न विषयों का ज्ञान कराते समय परस्पर सह-सम्बन्ध करते जाना चाहिए।

नकी समस्याओं को सुलझाने के लिए विभिन्न विषयों के ज्ञान की आवश्यकता पड़ेगी। इसलिए विद्यार्थियों को ऐसे अवसर प्रदान किये जावें कि वे अपनी समस्याएँ स्वयं सुलझा सकें। इन समस्याओं को सुलझाने के लिए, जब जिस विषय के ज्ञान की आवश्यकता अनुभव हो, तब वह पढ़ाया जावे।

(v) बुनियादी शिक्षा और केन्द्रीकरण—(Basic Education) बुनियादी शिक्षा की वर्धा योजना में किसी न किसी हस्त उद्योग (Craft) को केन्द्रीय विषय बनाया जाता है। अन्य विषयों की शिक्षा उद्योग के माध्यम के द्वारा दी जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भिन्न-भिन्न विचारकों ने भिन्न-भिन्न विषयों को केन्द्र बनाया है। किसी विशेष पक्ष का समर्थन किये बिना ही हम कह सकते हैं कि आधुनिक शिक्षा में समन्वय पद्धति का बड़ा मान है। अतएव बालकों को भिन्न-भिन्न विषयों का ज्ञान कराते समय परस्पर सह-सम्बन्ध करते जाना चाहिए।

होते हैं। परन्तु उसने अनुशासन शब्द के अर्थ को बहुत व्यापक दृष्टि से लिया है। अनुशासन से तात्पर्य बालक के चरित्र-गठन (Character training) से है। इस अर्थ में अनुशासन, पाठशाला के सारे प्रभाव की ओर निर्देश करता है। व्यवस्था का सम्बन्ध वर्तमान काल से है, परन्तु अनुशासन बालक के भविष्य को भी दृष्टि में रखता है। यदि उसी के शब्दों का प्रयोग किया जाए तो कह सकते हैं कि "पाठ पढ़ते समय, कक्षा में शान्ति और व्यवस्था बनाए रखना, अध्यापक के प्रति किसी भी प्रकार का असम्मान न होने देना, शासन या व्यवस्था है और विद्यार्थियों को सभ्य या संस्कृत बनाने के लिए, उनके स्वभाव पर सीधा प्रभाव डालना, प्रशिक्षण या अनुशासन है—(To maintain quiet and order in the lessons, to banish every trace of disrespect to the teacher, is the business of the government direct action on the temperament of youth with a view to culture is training)।"

हरबार्ट नैतिकता को विकसित करना ही शिक्षा का लक्ष्य समझता था और इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वह शिक्षा को मुख्य साधन के रूप में ग्रहण करता था। परन्तु शासन या व्यवस्था के बिना शिक्षा का कार्य सुचारु रूप से नहीं चल सकता। इसलिए अच्छी व्यवस्था का भी शिक्षा की दृष्टि से बड़ा महत्व है। अच्छी व्यवस्था की सहायता से ही अनुशासन उत्पन्न किया जा सकता है। इसलिए व्यवस्था और अनुशासन में साधन (means) और साध्य (end) का सम्बन्ध है। अनुशासन शब्द का अर्थ बड़ा व्यापक है। अनुशासन से हमारा तात्पर्य है 'विद्यार्थी के चरित्र पर पाठशाला का प्रभाव।' विद्यार्थियों के बाह्य आचरण से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। इसका सम्बन्ध उनके आन्तरिक आचरण (inner motives of Conduct) से है। इंगलैंड के बोर्ड ऑफ एजूकेशन (Board of Education) ने इसी बात को इन शब्दों में स्पष्ट किया है :—

"Discipline is the means where by children are trained in orderliness, good conduct and the habit of getting the best out of themselves. It cannot be considered good unless it is founded upon worthy ideas of conduct that are becoming or have become, embedded in the children's characters."

—Handbook of Suggestions, Chapter V

है। परन्तु उनमें अनुशासन शब्द का अर्थ ...
है। अनुशासन से तात्पर्य बालक के चरित्र-गठन (Character training) से है। इस अर्थ में अनुशासन, पाठशाला के सारे प्रभाव की ओर निर्देश करता है। व्यवस्था का सम्बन्ध वर्तमान काल से है, परन्तु अनुशासन बालक के भविष्य को भी दृष्टि में रखता है। यदि उसी के शब्दों का प्रयोग किया जाए तो कह सकते हैं कि "पाठ पढ़ते समय, कक्षा में शान्ति और व्यवस्था बनाए रखना, अध्यापक के प्रति किसी भी प्रकार का असम्मान न होने देना, शासन या व्यवस्था है और विद्यार्थियों को सभ्य या संस्कृत बनाने के लिए, उनके स्वभाव पर सीधा प्रभाव डालना, प्रशिक्षण या अनुशासन है—(To maintain quiet and order in the lessons, to banish every trace of disrespect to the teacher, is the business of the government direct action on the temperament of youth with a view to culture is training)।"

हरबार्ट नैतिकता को विकसित करना ही शिक्षा का लक्ष्य समझता था और इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वह शिक्षा को मुख्य साधन के रूप में ग्रहण करता था। परन्तु शासन या व्यवस्था के बिना शिक्षा का कार्य सुचारु रूप से नहीं चल सकता। इसलिए अच्छी व्यवस्था का भी शिक्षा की दृष्टि से बड़ा महत्व है। अच्छी व्यवस्था की सहायता से ही अनुशासन उत्पन्न किया जा सकता है। इसलिए व्यवस्था और अनुशासन में साधन (means) और साध्य (end) का सम्बन्ध है। अनुशासन शब्द का अर्थ बड़ा व्यापक है। अनुशासन से हमारा तात्पर्य है 'विद्यार्थी के चरित्र पर पाठशाला का प्रभाव।' विद्यार्थियों के बाह्य आचरण से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। इसका सम्बन्ध उनके आन्तरिक आचरण (inner motives of Conduct) से है। इंगलैंड के बोर्ड ऑफ एजुकेशन (Board of Education) ने इसी बात को इन शब्दों में स्पष्ट किया है :—

"Discipline is the means where by children are trained in orderliness, good conduct and the habit of getting the best out of themselves. It cannot be considered good unless it is founded upon worthy ideas of conduct that are becoming or have become, embedded in the children's characters."

—Handbook of Suggestions, Chapter V

वाली समस्याओं को सुलझाने के लिए *विभिन्न विषयों के ज्ञान की आवश्यकता* पड़ेगी। इसलिए विद्यार्थियों को ऐसे अवसर प्रदान किये जावें कि वे अपनी समस्याएँ स्वयं सुलझा सकें। इन समस्याओं को सुलझाने के लिए, जब जिस विषय के ज्ञान की आवश्यकता अनुभव हो, तब वह पढ़ाया जावे।

(v) बुनियादी शिक्षा और केन्द्रीकरण—(Basic Education) बुनियादी शिक्षा की वर्धा योजना में किसी न किसी हस्त उद्योग (Craft) को केन्द्रीय विषय बनाया जाता है। अन्य विषयों की शिक्षा उद्योग के माध्यम के द्वारा दी जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भिन्न-भिन्न विचारकों ने भिन्न-भिन्न विषयों को केन्द्र बनाया है। किसी विशेष पक्ष का समर्थन किये बिना ही हम कह सकते हैं कि आधुनिक शिक्षा में समन्वय पद्धति का बड़ा मान है। अतएव बालकों को *भिन्न-भिन्न विषयों का ज्ञान कराते समय परस्पर सह-सम्बन्ध* करते जाना चाहिए।

वाली समस्याओं को सुलझाने के लिए विभिन्न विषयों के ज्ञान की आवश्यकता पड़ेगी। इसलिए विद्यार्थियों को ऐसे अवसर प्रदान किये जावें कि वे अपनी समस्याएँ स्वयं सुलझा सकें। इन समस्याओं को सुलझाने के लिए, जब जिस विषय के ज्ञान की आवश्यकता अनुभव हो, तब वह पढ़ाया जावे।

(v) बुनियादी शिक्षा और केन्द्रीकरण—(Basic Education) बुनियादी शिक्षा की वर्धा योजना में किसी न किसी हस्त उद्योग (Craft) को केन्द्रीय विषय बनाया जाता है। अन्य विषयों की शिक्षा उद्योग के माध्यम के द्वारा दी जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भिन्न-भिन्न विचारकों ने भिन्न-भिन्न विषयों को केन्द्र बनाया है। किसी विशेष पक्ष का समर्थन किये बिना ही हम कह सकते हैं कि आधुनिक शिक्षा में समन्वय पद्धति का बड़ा मान है। अतएव बालकों को *भिन्न-भिन्न विषयों का ज्ञान कराते समय परस्पर सह-सम्बन्ध* करते जाना चाहिए।

स्वतन्त्रता और अनुशासन

(Freedom and Discipline)

Q 70. Clarify the meaning of the word "discipline". What is the difference between 'discipline' and 'order'?

('अनुशासन' और 'व्यवस्था' के अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखो कि "अनुशासन" शब्द का क्या अर्थ है ?)

उत्तर—बहुत से लोग प्राय: 'अनुशासन' और 'व्यवस्था' को पर्यायवाची शब्द समझते हैं। परन्तु यह ठीक नहीं हैं। इगलैंड के प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री रॉस (Ross) ने इस सम्बन्ध मे दो बातें कही हैं—

(i) यह ठीक है कि व्यवस्था से कार्यकुशलता (efficiency) और प्रयास की मितव्ययिता (economy of effort) उत्पन्न होती है, परन्तु फिर भी यह कहा जा सकता है कि बहुत अच्छी व्यवस्था कभी बहुत बुरा अनुशासन भी हो सकती है।

(ii) सामान्यतया अच्छे अनुशासन से अच्छी व्यवस्था पैदा होने की सम्भावना रहती है।

'अनुशासन' और 'व्यवस्था' के अन्तर को भली-भांति समझने के लिए हमें हरबार्ट (Herbart) के लेखों की शरण लेनी होगी। उसने अनुशासन के लिए 'जुख्ट' (Zucht) और व्यवस्था के लिए 'रेगी रुंग' (Regie-Rung) शब्द का प्रयोग किया है। हरबार्ट के अनुसार व्यवस्था का सम्बन्ध बालक के उस आचरण से है जिसके दर्शन हमें पाठशाला में तथा कक्षा मे

स्वतन्त्रता और अनुशासन

(Freedom and Discipline)

Q 70. Clarify the meaning of the word "discipline". What is the difference between 'discipline' and 'order'?

('अनुशासन' और 'व्यवस्था' के अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखो कि "अनुशासन" शब्द का क्या अर्थ है?)

उत्तर—बहुत से लोग प्राय: 'अनुशासन' और 'व्यवस्था' को पर्यायवाची शब्द समझते हैं। परन्तु यह ठीक नहीं है। इंगलैंड के प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री रॉस (Ross) ने इस सम्बन्ध में दो बातें कही हैं—

(i) यह ठीक है कि व्यवस्था से कार्यकुशलता (efficiency) और प्रयास की मितव्ययिता (economy of effort) उत्पन्न होती है, परन्तु फिर भी यह कहा जा सकता है कि बहुत अच्छी व्यवस्था कभी बहुत बुरा अनुशासन भी हो सकती है।

(ii) सामान्यतया अच्छे अनुशासन से अच्छी व्यवस्था पैदा होने की सम्भावना रहती है।

'अनुशासन' और 'व्यवस्था' के अन्तर को भली-भाँति समझने के लिए हमें हरबार्ट (Herbart) के लेखों की शरण लेनी होगी। उसने अनुशासन के लिए 'जुख्ट' (Zucht) और व्यवस्था के लिए 'रेगी रंग' (Regie-Rung) शब्द का प्रयोग किया है। हरबार्ट के अनुसार व्यवस्था का सम्बन्ध बालक के उस आचरण से है जिसके दर्शन हमें पाठशाला में तथा कक्षा में

अर्थात—अनुशासन वह साधन है जिसके द्वारा बालक अच्छी व्यवस्था अच्छे आचरण तथा अच्छी आदतों की शिक्षा ग्रहण करते हैं—अनुशासन को हम तब तक अच्छा नहीं समझ सकते, जब तक कि उसकी नींव आचरण से सम्बन्धित उन विचारो पर न हो, जो बालको के चरित्र का अंग बन रहे हैं या बन गए हैं।

Q. 71. Indicate the value of punishment as a motive to learning [Banaras 1950]

(सीखने की क्रिया के प्रेरक के रूप में दण्ड-व्यवस्था का मूल्यांकन करो। [बनारस १९५०]

Q 72 "The object of all punishment is training and not Vengeance"—Discuss. [Banaras 1951]

("दण्ड देने का उद्देश्य बदले की भावना न होकर बालको का प्रशिक्षण है"—स्पष्ट करो।) [बनारस १९५१]

Q. 73. "As to the vexed question of Corporal punishment, it Would probably be unwise to proclaim on absolute. Never! as it may occasionally be necessary and, in its effects, salutary". Discuss. —(Ross)

(शारीरिक दण्ड के उलझनदार प्रश्न के विषय मे यह कहना बुद्धिमत्ता नहीं होगी कि यह उसे किसी भी अवस्था मे नहीं दिया जाना चाहिए, क्योंकि बहुत बार यह आवश्यक हो सकता है और इसके परिणाम अच्छे हो सकते हैं—रॉस के इस कथन पर अपने विचार व्यक्त करो।)

उत्तर—नारमन मैकमन (Norman Mac Munn) ने अपनी विख्यात पुस्तक "दि चाईल्डज पाथ टू फ्रीडम" (The Child's Path to Freedom) मे पाठशाला की व्यवस्था सम्बन्धी विधियो का विश्लेषण

के पाठशाला की व्यवस्था की प्रमुख

prossoin) की विधि ही रही है,

ड था, यद्यपि महान् शिक्षको तथा

दमनवादी हर समय पूर्ण शान्ति और

राध तथा भच्छा नहीं समझ सकते, जब तक कि उसकी नींव धाच बन्धित उन विचारों पर न हो, जो बालकों के चरित्र का अंग बन बन गए हैं।

Q. 71. Indicate the value of punishment as a motiv rning [Banaras 1

(सीखने की क्रिया के प्रेरक के रूप में दण्ड-व्यवस्था का मूल्य । [बनारस १९५

Q 72 "The object of all punishment is training and geance"—Discuss. [Banaras 19

("दण्ड देने का उद्देश्य बदले की भावना न होकर बालकों का प्रशि –स्पष्ट करो।) [बनारस १९५

Q. 73. "As to the vexed question of Corporal punishme ould probably be unwise to proclaim on absolute. Never! y occasionally be necessary and, in its effects, salutary ss. —(Ros

(शारीरिक दण्ड के उलझनदार प्रश्न के विषय में यह कहना बुद्धिमत्त होगी कि यह दण्ड किसी भी अवस्था में नहीं दिया जाना चाहिए बहुत बार यह आवश्यक हो सकता है और इसके परिणाम अच्छे ह है—रॉस के इस कथन पर अपने विचार व्यक्त करो।)

उत्तर—नारमन मैकमन (Norman Mac Munn) ने अपनी त पुस्तक "दि चाईल्डज पाथ टू फ्रीडम" (The Child's Path reedom) में पाठशाला की व्यवस्था सम्बन्धी विधियों का विश्लेषण हुए इस बात को स्पष्ट किया है कि पाठशाला की व्यवस्था की प्रमुख रागत विधि कठोर दमन (Repressoin) की विधि ही रही है, का मुख्य उपकरण शारीरिक दण्ड था, यद्यपि महान् शिक्षकों तथा रकों ने इसे सदा बुरा माना है। दमनवादी हर समय पूर्ण शान्ति और

when the children are immediately under the auth-
rity that exercises it) ।

(२) दमन या शारीरिक दण्ड का लोकतन्त्रीय सिद्धान्तों (Dem-
cratic ideals) से कोई सम्बन्ध नहीं । तानाशाही (Totalitarian
राज्यों को छोडकर और कहीं भी इस का स्थान नहीं हो सकता । इस सम्ब
मे एल्डस हक्सले (Aldous Huxley) ने बड़े कड़े शब्दों का प्रयो
किया है :—

"If your goal is liberty and democracy, then you
must teach people the arts of being free and of
governing them selves If you teach them instead
the arts of bullying and passive obedience, then you
will not achieve the liberty and democracy at which
you are aiming Good ends cannot be achieved by
inappropriate means"

अर्थात् यदि आपका लक्ष्य स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्र है, तब आप को लोगों
को ऐसी शिक्षा देनी होगी जिससे कि वे स्वतन्त्र बन सकें और अपना शासन
भार स्वय सम्भाल सकें । यदि आप उसको डरा धमका कर केवल आज्ञा पालन
करना ही सिखाएँगे, तो इस से स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्रवाद की प्राप्ति नहीं हो
सकती । अच्छे लक्ष्यों की प्राप्ति अनुपयुक्त साधनों द्वारा कभी नहीं हो
सकती ।

आधुनिक काल के शिक्षाविदों और विचारकों की बात जाने दीजिए,
पुराने समय के लोगों ने भी शारीरिक दण्ड का विरोध किया है । प्रख्यात
रोमन शिक्षक क्विटीलियन (Quintilian) ने शारीरिक दण्ड का विरोध
निम्नलिखित कारणों से किया है —

(१) यह दासों (Slaves) को दिया जाने वाला दण्ड है ।
(२) इससे बालक का अपमान होता है ।
(३) यदि किसी बालक का स्वभाव ऐसा नहीं है कि वह धिक्कार

rity that exercises it)।

(२) दमन या शारीरिक दण्ड का लोकतन्त्रीय सिद्धान्तो cratic ideals) से कोई सम्बन्ध नही। तानाशाही (Total राज्यो को छोडकर और कही भी इस का स्थान नही हो सकता। मे एल्डस हक्सले (Aldous Huxley) ने बड़े कडे शब्दो किया है :—

"If your goal is liberty and democracy, th must teach people the arts of being free governing them selves If you teach them be arts of bullying and passive obedience, th will not achieve the liberty and democracy at ou are aiming Good ends cannot be achie nappropriate means"

अर्थात् यदि आपका लक्ष्य स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्र है, तब आप ो ऐसी शिक्षा देनी होगी जिससे कि वे स्वतन्त्र बन सके और अपन र स्वय सम्भाल सकें। यदि आप उसको डरा धमका कर केवल आज्ञ रना ही सिखाएँगे, तो इस से स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्रवाद की प्राप्ति हती। अच्छे लक्ष्यो की प्राप्ति अनुपयुक्त साधनो द्वारा कभी हती।

आधुनिक काल के शिक्षाविदो और विचारको की बात जाने ाने समय के लोगो ने भी शारीरिक दण्ड का विरोध किया है। न शिक्षक क्विटीलियन (Quintilian) ने शारीरिक दण्ड का नलिखित कारणो से किया है —

(१) यह दासो (Slaves) को दिया जाने वाला दण्ड है।
(२) इससे बालक का अपमान होता है।
(३) यदि किसी बालक का स्वभाव ऐसा नही है कि वह वि

इस शारीरिक दण्ड के कारण ही अध्यापन व्यवसाय सारे समय बदनाम रहा।

प्रभाव और मुक्ति :—

जहाँ तक विधि का सम्बन्ध है, प्रभाव दमन से बिल्कुल विपरीत है। शारीरिक दण्ड के स्थान पर, अध्यापक अपने व्यक्तित्व की प्रेरणा शक्ति का प्रयोग करता है। अध्यापक का व्यक्तिगत प्रभाव तथा उसके द्वारा प्रयोग की जाने वाली अध्यापन प्रणाली, विद्यार्थी के आचरण पर अधिक प्रभाव डालते हैं। इस प्रकार अनुशासन की व्यवस्था का आयोजन, निज आदर्श, नैतिक प्रेरणा आदि के आधार पर परोक्ष रूप से होता है। आतंक के स्थान पर हर जगह आदर और प्रेम का साम्राज्य होता है। प्रभाववादी अपने उच्चतम स्वरूप में बालकों का जन्मजात नेता होता है। उसके साधारण से संकेत का पालन भी बड़ी श्रद्धा और उत्सुकता से किया जाता है। प्रभाववादी अध्यापक बालकों के लिए आचरण सम्बन्धी कुछ मान दण्ड (standards of behaviour) निश्चित कर लेता है जिन्हें वह प्रत्येक दशा में स्थिर रखने का यत्न करता है। मनोवैज्ञानिक शब्दावली में हम कह सकते हैं कि प्रभाववादी, भय (Fear) की भावना का प्रोत्साहन नहीं करता। वह बालक की सहज प्रवृत्ति विनीतता या दैन्य (Submissive propensity) का सुनिश्चित रूप से प्रयोग करता है।

मुक्तिवाद (Emancipation) में विश्वास रखने वाला, दमन और प्रभाव दोनों को बुरा समझता है। उसके मतानुसार बालक को बाधाहीन स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। बालक को इस बात का पूरा-पूरा अवसर मिलना चाहिए कि वह अपनी प्रकृति के अनुसार विकास कर सके चाहे इस का परिणाम कुछ भी हो। बालक को सचेत या अचेत रूप में किसी भी प्रकार का उपदेश देने का यत्न न किया जाए और न उसे डराया या धमकाया जाए। अध्यापक एक कोने में, आदर सहित, अलग खड़ा रहे। वह बालक के लिए किसी भी प्रकार का मार्ग दर्शन न करे। अध्यापक की स्थिति केवल एक प्रेक्षक (Observer) जैसी रहेगी। मान्टेसरी पद्धति (Montessori

इस शारीरिक दण्ड के कारण ही अध्यापन व्यवसाय गर्हित व बदनाम रहा।

प्रभाव और मुक्ति :—

जहाँ तक विधि का सम्बन्ध है, प्रभाव दमन से बिल्कुल विपरी है। शारीरिक दण्ड के स्थान पर, अध्यापक अपने व्यक्तित्व की प्रेरणा शक्ति का प्रयोग करता है। अध्यापक का व्यक्तिगत प्रभाव तथा उसके प्रयोग की जाने वाली अध्यापन प्रणाली, विद्यार्थी के आचरण पर प्रभाव डालते हैं। इस प्रकार अनुशासन का व्यवस्था का आयोजन, आदर्श, नैतिक प्रेरणा आदि के आधार पर परोक्ष रूप से होता है। के स्थान पर हर जगह आदर और प्रेम का साम्राज्य होता है। प्रभाव अपने उच्चतम स्वरूप में बालकों का जन्मजात नेता होता है। उसके सा से संकेत का पालन भी बड़ी श्रद्धा और उत्सुकता से किया जाता है। प्रभाव अध्यापक बालकों के लिए आचरण सम्बन्धी कुछ मान दण्ड (standa of behaviour) निश्चित कर लेता है जिन्हें वह प्रत्येक दशा में रखने का यत्न करता है। मनोवैज्ञानिक शब्दावली में हम कह सकते हैं प्रभाववादी, भय (Fear) की भावना का प्रोत्साहन नहीं करता। बालक की सहज प्रवृत्ति विनीतता या दैन्य (Submissive propensit का सुनिश्चित रूप से प्रयोग करता है।

मुक्तिवाद (Emancipation) में विश्वास रखने वाला, दमन प्रभाव दोनों को बुरा समझता है। उसके मतानुसार बालक को बाहें स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। बालक को इस बात का पूरा-पूरा अवसर मिल चाहिए कि वह अपनी प्रकृति के अनुसार विकास कर सके चाहे इस परिणाम कुछ भी हो। बालक को सचेत या अचेत रूप में किसी भी प्रका का उपदेश देन का यत्न न किया जाए और न उसे डराया या धमकाय जाए। अध्यापक एक कोने में, आदर सहित, अलग खड़ा रहे। वह बालक के लिए किसी भी प्रकार का मार्ग दर्शन न करे। अध्यापक की स्थिति केवल एक प्रेक्षक (Observer) जैसी रहेगी। मान्टेसरी पद्धति (Montessor

प्राप्त करते हैं। प्रणाली के रूप में भी प्रभाव, अध्यापक की नई भावना को सन्तुष्ट करता है। अध्यापक इस बात से आनन्दित हो उठता है कि उसके द्वारा विद्यार्थियों के चरित्र का निर्माण हो रहा है। मुक्तिवादी इस बात का विरोध करते हुए कहते हैं कि इस से बालकों की मौलिकता (Originality) कुण्ठित होती है, उनका व्यक्तित्व दबता और वे केवल अध्यापक की अनुगामी बन कर रह जाते हैं।

इस सम्बन्ध में दूसरी बात यह है कि सभी अध्यापक विशिष्ट व्यक्तित्व वाले नहीं होते। यदि कुछ अध्यापक सफलता पूर्वक अपने प्रभाव का प्रयोग कर सकते हैं तो अनेक ऐसे भी हैं जो अपना प्रभाव बिल्कुल नहीं डाल सकते। इस बात का उत्तर इस ढंग से दिया जाता है कि नया अनुभवहीन अध्यापक भी आयु, ज्ञान और जीवन के अनुभव में अपने विद्यार्थियों से आगे बढ़ा हुआ होता है, इस लिए वह प्रभाव डालने के लिए अनुकूल स्थिति में होता है।

उपरोक्त बातों से यह स्पष्ट हो गया होगा कि स्वतन्त्रता और अनुशासन का विवाद वास्तव में प्रभाव और पूर्ण स्वतन्त्रता के बीच का विवाद है। दमन तो स्पष्ट रूप से इस के अन्तर्गत नहीं आता। अब प्रश्न यह उठता है कि इन में से किस को ग्रहण किया जाए।

अनुशासन का वास्तविक अर्थ :—

हमारे प्राचीन भारतीय मनीषियों के अनुसार यदि हम 'अनुशासन' शब्द के वास्तविक अर्थ पर गम्भीरता पूर्वक विचार करेंगे तो इस विवाद का हल निकल आएगा। इस सम्बन्ध में यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि अनुशासन और शिष्य, दोनों शब्द, एक ही धातु से निकले हैं। शिष्य वह है जो किसी गुरु के चरणों में बैठ कर, जीवन सम्बन्धी शिक्षाएँ ग्रहण करे। शिष्य का आचरण एक शिक्षार्थी (apprentice) के समान होता है। शिष्य का शिष्यत्व ही अनुशासन की ओर ले जाने वाली सीढ़ी है। दूसरे शब्दों में हम इस प्रकार भी कह सकते हैं, कि अनुशासन के द्वारा हमारा अभिप्राय यह है कि एक अपरिपक्व मन, अपने से अधिक परिपक्व मन के प्रभाव और निर्देश को ग्रहण करता है और उस मन की प्रवृत्तियों और आदर्शों को अपने अन्दर

प्राप्त करते हैं। प्रणाली के रूप में भी प्रभाव, अध्यापक की यह भावना को सन्तुष्ट करता है। अध्यापक इस बात से आनन्दित हो उठता है कि उसके द्वारा विद्यार्थियों के चरित्र का निर्माण हो रहा है। मुक्तिवादी इस बात का विरोध करते हुए कहते हैं कि इस से बालकों की मौलिकता (Originality) कुण्ठित होती है, उनका व्यक्तित्व दबता और वे केवल अध्यापक की अनुरूपियाँ बन कर रह जाते हैं।

इस सम्बन्ध में दूसरी बात यह है कि सभी अध्यापक विशिष्ट व्यक्तित्व-वाले नहीं होते। यदि कुछ अध्यापक सफलता पूर्वक अपने प्रभाव का प्रयोग कर सकते हैं तो अनेक ऐसे भी हैं जो अपना प्रभाव बिल्कुल नहीं डाल सकते। इस बात का उत्तर इस ढंग से दिया जाता है कि नया अनुभवहीन अध्यापक भी आयु, ज्ञान और जीवन के अनुभव में अपने विद्यार्थियों से आगे बढ़ा हुआ होता है, इस लिए वह प्रभाव डालने के लिए अनुकूल स्थिति में होता है।

उपरोक्त बातों से यह स्पष्ट हो गया होगा कि स्वतन्त्रता और अनुशासन का विवाद वास्तव में प्रभाव और पूर्ण स्वतन्त्रता के बीच का विवाद है। दमन तो स्पष्ट रूप से इस के अन्तर्गत नहीं आता। अब प्रश्न यह उठता है कि इन में से किस को ग्रहण किया जाए।

अनुशासन का वास्तविक अर्थ :—

हमारे प्राचीन भारतीय मनीषियों के अनुसार यदि हम 'अनुशासन' शब्द के वास्तविक अर्थ पर गम्भीरता पूर्वक विचार करेंगे तो इस विवाद का हल निकल आएगा। इस सम्बन्ध में यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि अनुशासन और शिष्य, दोनों शब्द, एक ही धातु से निकले हैं। शिष्य वह है जो किसी गुरु के चरणों में बैठ कर, जीवन सम्बन्धी शिक्षाएँ ग्रहण करे। शिष्य का आचरण एक शिक्षार्थी (apprentice) के समान होता है। शिष्य का शिष्यत्व ही अनुशासन की ओर ले जाने वाली सीढ़ी है। दूसरे शब्दों में हम इस प्रकार भी कह सकते हैं, कि अनुशासन के द्वारा हमारा अभिप्राय यह है कि एक अपरिपक्व मन, अपने से अधिक परिपक्व मन के प्रभाव और निर्देश को ग्रहण करता है और उस मन की प्रवृत्तियों और आदर्शों को अपने अन्दर

८

शिक्षण के साधन

(Techniques of Teaching)

[Punjab 1943 Suppl.]

("ज्ञात से अज्ञात की ओर," "मूर्त से अमूर्त की ओर"—इन सूत्रों को पूर्ण रूप से स्पष्ट करो। इनका मूल्यांकन करते हुए इनकी सीमाओं का उल्लेख करो।) [पंजाब १९४३ सप्ली०]

Q. 76 "Proceed from simple," "From known to unknown," "from particular to general," "from concrete to abstract"
—Herbert Spencer

Explain this statement and indicate its limitations by considering its application to different subjects of study [Punjab 1945]

("सरल से जटिल की ओर" "ज्ञात से अज्ञात की ओर," "विशेष से सामान्य की ओर," "मूर्त से अमूर्त की" ओर बढ़ो—हरबर्ट स्पेन्सर।

इस कथन का स्पष्टीकरण करो और विभिन्न विषयों में प्रयोग करते समय इस की सीमा निर्धारित करो।) [पंजाब १९४५]

Q. 77 Teaching should proceed from the concrete to the abstract and should be dynamic. What does the maxim signify? Explain with illustrations. [Allahabad 1952]

(शिक्षण स्थूल से सूक्ष्म की ओर चलना चाहिए—इस सूत्र का क्या अभिप्राय है, उदाहरणों द्वारा स्पष्ट करो। [इलाहाबाद १९५२]

Q. 78 What are the maxims of methodical procedure in teaching? Explain some of them, which you think to be the most significant.

८

शिक्षण के साधन

(Techniques of Teaching)

[Punjab 1943 Suppl.]

("ज्ञात से अज्ञात की ओर," "मूर्त से अमूर्त की ओर"—इन सूत्रों को पूर्ण रूप से स्पष्ट करो। इनका मूल्यांकन करते हुए इनकी सीमाओं का उल्लेख करो।) [पंजाब १९४३ सप्ली०]

Q. 76 "Proceed from simple," "From known to unknown." "from particular to general," "from concrete to abstract"
—Herbert Spencer

Explain this statement and indicate its limitations by considering its application to different subjects of study [Punjab 1945]

("सरल से जटिल की ओर" "ज्ञात से अज्ञात की ओर," "विशेष से सामान्य की ओर," "मूर्त से अमूर्त की" ओर बढ़ो—'हरबर्ट स्पेन्सर।

इस कथन का स्पष्टीकरण करो और विभिन्न विषयों में प्रयोग करते समय इस की सीमा निर्धारित करो।) [पंजाब १९४५]

Q. 77 Teaching should proceed from the concrete to the abstract and should be dynamic. What does the maxim signify? Explain with illustrations. [Allahabad 1952]

(शिक्षण स्थूल से सूक्ष्म की ओर चलना चाहिए—इस सूत्र का क्या अभिप्राय है, उदाहरणों द्वारा स्पष्ट करो। [इलाहाबाद १९५२]

Q 78 What are the maxims of methodical procedure in teaching? Explain some of them, which you think to be the most significant.

वे रूप में हम कह सकते हैं कि भूगोल का ज्ञान कराते समय, किसी स्थान का रूप का सामान्य ज्ञान, उस के विस्तृत ज्ञान की अपेक्षा कहीं अधिक सरल है।

(ii) ज्ञात से अज्ञात की ओर (From the known to the unknown)—किसी भी पाठ को पढ़ाते समय सबसे स्वाभाविक विधि यही है कि विद्यार्थी जो कुछ जानते हैं, उसकी सहायता से उन्हें वे तथ्य बताए जाएँ, जिन्हें वे नहीं जानते। बिल्कुल नवीन बात न तो सरलता से समझ में ही आती है, और न स्मृति में टिकती ही है। ज्ञानार्जन में तथा विषय को ग्रहण करने में पूर्वानुवर्ती ज्ञान (apperception mass) का बहुत बड़ा हाथ रहता है। नया ज्ञान पुराने ज्ञान के आधार पर ही टिक सकता है। अतएव बालकों को नई बातें सिखाने के लिए, उनके पूर्व ज्ञान का पूर्ण उपयोग करना चाहिए। इससे वे ज्ञात और अज्ञात वस्तुओं में तुलना और समानता कर सकते हैं। उदाहरणार्थ यदि बालकों को झील का ज्ञान कराना है तो उसका प्रारम्भ गाँव या नगर के तालाब आदि से करना होगा।

(iii) स्थूल से सूक्ष्म की ओर (From Concrete to abstract)—स्थूल को समझना सरल होता है और सूक्ष्म को समझना कठिन। छोटे-छोटे बालक प्राय. सूक्ष्म को समझ ही नहीं पाते। चार और तीन मिल कर सात होते हैं। यह भाव अमूर्त (abstract) है। परन्तु यदि बालक को चार केले और तीन केले दे दिए जाएँ तो वह सात केले प्रत्यक्ष देख सकेगा। इसी प्रकार भूगोल का ज्ञान कराने के लिए विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष रूप से नदी, पर्वत आदि स्थानों पर ले जाना चाहिए। सच्चाई एक सूक्ष्म भाव है। इसका ज्ञान सामान्य रूप से नहीं कराया जा सकता। पहले-पहल बालक एक ऐसे व्यक्ति को देखता तथा जानता है जो सदा सच्च बोलता है। इसके पश्चात् वे इस प्रकार के अनेकों व्यक्तियों को देखकर सच्चाई के सम्बन्ध में कल्पना करने लगता है। परन्तु इस बात की सावधानी रखनी होगी कि कहीं स्थूलता के आवरण में हम सूक्ष्म को त्याग ही नदेदें। सूक्ष्म का ज्ञान सरलता से हो, इसी दृष्टि से स्थूल का महत्व है। जिस व्यक्ति को

ये कम से हम कह सकते हैं कि भूगोल का ज्ञान कराते समय, किसी स्थान का स्थान का सामान्य ज्ञान, उस के विस्तृत ज्ञान की अपेक्षा कहीं अधिक महत्त है।

(ii) ज्ञात से अज्ञात की ओर (From the known to the unknown)—किसी भी पाठ को पढ़ाते समय सबसे स्वाभाविक विधि यही है कि विद्यार्थी जो कुछ जानते हैं, उनकी सहायता से उन्हें वे तथ्य बताए जाएँ, जिन्हें वे नहीं जानते। बिल्कुल नवीन बात न तो सभी भाँति समझ में ही आती है, और न स्मृति में टिकती ही है। ज्ञानार्जन में तथा विषय को ग्रहण करने में पूर्वानुवर्ती ज्ञान (apperception mass) का बहुत बड़ा हाथ रहता है। नया ज्ञान पुराने ज्ञान के आधार पर ही टिक सकता है। अतएव बालकों को नई बातें सिखाने के लिए, उनके पूर्व ज्ञान का पूर्ण उपयोग करना चाहिए। इससे वे ज्ञात और अज्ञात वस्तुओं में तुलना और समानता कर सकते हैं। उदाहरणार्थ यदि बालकों को झील का ज्ञान कराना है तो उसका प्रारम्भ गाँव या नगर के तालाब आदि से करना होगा।

(iii) स्थूल से सूक्ष्म की ओर (From Concrete to abstract)—स्थूल को समझना सरल होता है और सूक्ष्म को समझना कठिन। छोटे-छोटे बालक प्रायः सूक्ष्म को समझ ही नहीं पाते। चार और तीन मिल कर सात होते हैं। यह भाव अमूर्त (abstract) है। परन्तु यदि बालक को चार केले और तीन केले दे दिए जाएँ तो वह सात केले प्रत्यक्ष देख सकेगा। इसी प्रकार भूगोल का ज्ञान कराने के लिए विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष रूप से नदी, पर्वत आदि स्थानों पर ले जाना चाहिए। सच्चाई एक सूक्ष्म भाव है। इसका ज्ञान सामान्य रूप से नहीं कराया जा सकता। पहले-पहल बालक एक ऐसे व्यक्ति को देखता तथा जानता है जो सदा सच्च बोलता है। इसके पश्चात् वे इस प्रकार के अनेकों व्यक्तियों को देखकर सच्चाई के सम्बन्ध में कल्पना करने लगता है। परन्तु इस बात की सावधानी रखनी होगी कि कहीं स्थूलता के आवरण में हम सूक्ष्म को त्याग ही नदेदें। सूक्ष्म का ज्ञान सरलता से हो, इसी दृष्टि से स्थूल का महत्व है। जिस व्यक्ति को

है। पर एक पंक्ति को पढ़कर अर्थ कराने से उसका सौन्दर्य तथा प्रभाव नष्ट हो जाता है। अत सम्पूर्ण कविता का सौन्दर्य अपना प्रभाव जमा ले तब उसके पद एक भाग को लेना चाहिए, अन्त में फिर "पूर्ण" को प्रस्तुत करना चाहिए।

(vii) विश्लेषण से संश्लेषण की ओर (From analytic to synthetic)—विश्लेषण का अर्थ है एक वस्तु या पदार्थ को उन सब अंगों में विभाजित करना, जिनके मिलने से वह वस्तु या पदार्थ बना है। संश्लेषण का अर्थ है उन सब अंगों को जोड़कर पूर्ण का रूप देना। संश्लेषण से पहले विश्लेषण आवश्यक है। पदार्थ-विज्ञान का विषय पढ़ाते समय पाठ्य-वस्तु को, उसके अंगों में विभाजित कर दिया जाता है। उनका ज्ञान कराने के पश्चात् उसके व्यापक नियम का ज्ञान कराया जाता है।

(viii) अनुभव जन्य ज्ञान से विचार जन्य ज्ञान की ओर (From empirical to rational)—बालकों का प्रारम्भिक ज्ञान उन्हें उनके अनुभवों, अनुकरण की प्रवृत्तियों, रुचियों तथा सुगमता आदि के विचार से प्राप्त होता है। बालक के इसी अनुभव जन्य ज्ञान को वैज्ञानिक ज्ञान प्रदान करने का आधार मानना चाहिए।

(ix) मनोवैज्ञानिक क्रम से तर्क पूर्ण क्रम की ओर (From the psychological order to the logical order)—जब हम बालकों को किसी विषय की शिक्षा देना चाहते हैं तो उसके दो साधन हैं—(क) एक तो विषय को बिलकुल प्रारम्भ से लेकर उसके क्रमिक विकास के अनुसार स्पष्ट किया जाए तथा (ख) दूसरे बालकों को उनकी रुचियों, प्रवृत्तियों तथा क्षमताओं के अनुसार शिक्षित किया जाए। यह विधि मनोवैज्ञानिक है। इस शिक्षण—सूत्र (maxim) के अनुसार, इसी दूसरी विधि के द्वारा ही छोटे-छोटे बालकों को शिक्षा प्रदान करनी चाहिए। पाठ्य-पुस्तकों मे विषय, पहली विधि के अनुसार, तर्क-पूर्ण व शास्त्रीय ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। बालकों के लिए यह शास्त्रीय क्रम समझना कठिन होता है। उदाहरण स्वरूप यदि बालकों को भाषा का ज्ञान कराना है तो निम्नलिखित दो विधियों का प्रयोग किया जा सकता है—

है। पर एक कविता को पढ़कर अर्थ बतलाने से उसका सौन्दर्य तथा प्रभाव नष्ट हो जाता है। जब सम्पूर्ण कविता का सौन्दर्य अपना प्रभाव जमा ले तब उसके एक एक भाग को लेना चाहिए। अन्त में फिर "पूर्ण" को प्रस्तुत करना चाहिए।

(vii) विश्लेषण से संश्लेषण की ओर (From analytic to synthetic)— विश्लेषण का अर्थ है एक वस्तु या पदार्थ को उन सब अंगों में विभाजित करना, जिनके मिलने से वह वस्तु या पदार्थ बना है। संश्लेषण का अर्थ है उन सब अंगों को जोड़कर पूर्ण का रूप देना। संश्लेषण से पहले विश्लेषण आवश्यक है। पदार्थ-विज्ञान का विषय पढ़ाते समय पाठ्य-वस्तु को, उसके अंगों में विभाजित कर दिया जाता है। उनका ज्ञान कराने के पश्चात् उसके व्यापक नियम का ज्ञान कराया जाता है।

(viii) अनुभव जन्य ज्ञान से विचार जन्य ज्ञान की ओर (From empirical to rational)—बालकों का प्रारम्भिक ज्ञान उन्हें उनके अनुभवों, अनुकरण की प्रवृत्तियों, रुचियों तथा सुगमता आदि के विचार से प्राप्त होता है। बालक के इसी अनुभव जन्य ज्ञान को वैज्ञानिक ज्ञान प्रदान करने का आधार मानना चाहिए।

(ix) मनोवैज्ञानिक क्रम से तर्क पूर्ण क्रम की ओर (From the psychological order to the logical order)—जब हम बालकों को किसी विषय की शिक्षा देना चाहते हैं तो उसके दो साधन हैं—(क) एक तो विषय को बिलकुल प्रारम्भ से लेकर उसके क्रमिक विकास के अनुसार स्पष्ट किया जाए तथा (ख) दूसरे बालकों को उनकी रुचियों, प्रवृत्तियों तथा क्षमताओं के अनुसार शिक्षित किया जाए। यह विधि मनोवैज्ञानिक है। इस शिक्षण—सूत्र (maxim) के अनुसार, इसी दूसरी विधि के द्वारा ही छोटे-छोटे बालकों को शिक्षा प्रदान करनी चाहिए। पाठ्य-पुस्तकों में विषय, पहली विधि के अनुसार, तर्क-पूर्ण व शास्त्रीय ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। बालकों के लिए यह शास्त्रीय क्रम समझना कठिन होता है। उदाहरण स्वरूप यदि बालकों को भाषा का ज्ञान कराना है तो निम्नलिखित दो विधियों का प्रयोग किया जा सकता है—

के बाद उसके सम्बन्ध में कोई चेष्टा की जाए, तब उस चेष्टा को क्रिया (conation) कहते हैं।

(iii) रागात्मक (Affective)—पदार्थ का ज्ञान होने पर, उसका हृदय पर अच्छा या बुरा जो प्रभाव पड़ता है, उसे राग (Affection) कहते हैं।

मानसिक क्रिया के इन तीन पक्षों के अनुसार पाठ भी मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं—

(क) ज्ञान-प्रधान पाठ (Knowledge lessons) इन पाठों का उद्देश्य ज्ञानार्जन होता है। शिक्षा के इतिहास का अवलोकन करने पर पता चलता है कि परम्परा गत विद्यालय ज्ञान प्राप्ति को ही अपना मुख्य लक्ष्य समझते थे। ज्ञान प्रधान पाठों के कुछ उदाहरण नीचे प्रस्तुत किए जाते हैं—

(i) गणित के ऐसे पाठ, जहाँ बालक कोई नया नियम सीखते हैं।

(ii) भाषा के ऐसे पाठ, जिन के द्वारा विद्यार्थी किसी गद्यांश या पद्यांश का भाव ग्रहण करते हैं।

(iii) इतिहास तथा भूगोल के ऐसे पाठ जिन के आधार पर बालकों को नवीन ऐतिहासिक या भौगोलिक तथ्यों का ज्ञान प्राप्त कराया जाता है।

(ख) क्रिया-प्रधान पाठ (Skill Lessons)—क्रियात्मक पाठों में ज्ञान को इतना अधिक महत्व नहीं दिया जाता। यहाँ हमारा प्रधान लक्ष्य यह होता है कि बालक किसी न किसी कौशल (skill) को सीखता है। सभी प्रकार के हस्त-उद्योगों (handicrafts) के लिए किसी न किसी प्रकार के कौशल की आवश्यकता होती है। मान चित्र बनाना तथा मूर्तियों (models) आदि के निर्माण में भी कौशल का काम पड़ता है।

(ग) रसानुभूति के पाठ (Appreciation Lessons)—व्यक्ति का लक्ष्य केवल जीविकोपार्जन तथा अच्छे परिधान पहनना ही नहीं। वह जीवन का आनन्द उठाना चाहता है। हम रसानुभूति के पाठों द्वारा इसी आनन्द की प्राप्ति करवाना चाहते हैं। इस प्रकार के पाठ बालकों की भावनाओं को सीधे रूप में प्रभावित करते हैं। बालकों के सर्वांगीण विकास के लिए इस प्रकार के

के बाद उसके सम्बन्ध में कोई चेष्टा की जाए, तब उस चेष्टा को क्रिया (conation) कहते हैं।

(iii) रागात्मक (Affective)—पदार्थ का ज्ञान होने पर, उसका हृदय पर अच्छा या बुरा जो प्रभाव पड़ता है, उसे राग (Affection) कहते हैं।

मानसिक क्रिया के इन तीन पक्षों के अनुसार पाठ भी मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं—

(क) ज्ञान-प्रधान पाठ (Knowledge lessons) इन पाठों का उद्देश्य ज्ञानार्जन होता है। शिक्षा के इतिहास का अवलोकन करने पर पता चलता है कि परम्परा गत विद्यालय ज्ञान प्राप्ति को ही अपना मुख्य लक्ष्य समझते थे। ज्ञान प्रधान पाठों के कुछ उदाहरण नीचे प्रस्तुत किए जाते हैं—

(i) गणित के ऐसे पाठ, जहाँ बालक कोई नया नियम सीखते हैं।

(ii) भाषा के ऐसे पाठ, जिन के द्वारा विद्यार्थी किसी गद्यांश या पद्यांश का भाव ग्रहण करते हैं।

(iii) इतिहास तथा भूगोल के ऐसे पाठ जिन के आधार पर बालकों को नवीन ऐतिहासिक या भौगोलिक तथ्यों का ज्ञान प्राप्त कराया जाता है।

(ख) क्रिया-प्रधान पाठ (Skill Lessons)—क्रियात्मक पाठों में ज्ञान को इतना अधिक महत्व नहीं दिया जाता। यहाँ हमारा प्रधान लक्ष्य यह होता है कि बालक किसी न किसी कौशल (skill) को सीखता है। सभी प्रकार के हस्त-उद्योगों (handicrafts) के लिए किसी न किसी प्रकार के कौशल की आवश्यकता होती है। मान चित्र बनाना तथा मूर्तियों (models) आदि के निर्माण में भी कौशल का काम पड़ता है।

(ग) रसानुभूति के पाठ (Appreciation Lessons)—व्यक्ति का लक्ष्य केवल जीविकोपार्जन तथा अच्छे परिधान पहनना ही नहीं। वह जीवन का आनन्द उठाना चाहता है। हम रसानुभूति के पाठों द्वारा इसी आनन्द की प्राप्ति करवाना चाहते हैं। इस प्रकार के पाठ बालकों की भावनाओं को सीधे रूप में प्रभावित करते हैं। बालकों के सर्वांगीण विकास के लिए इस प्रकार के

मे एक विशिष्ट क्रिया करने की उसमे प्रवृत्ति होती
आधार मानकर ही क्रिया-प्रधान पाठो की योजना बनाई
के पाठो मे हम बालको को कुछ करना सिखाते हैं। इस
के पाठो मे हस्त-क्रिया (Hand work), चित्रकला, तथ
ऐसे पाठ आ जाते हैं; जिन मे वे लिखने तथा पढ़ने मे कुशल
हैं। इन पाठो मे पढ़ाने की जो पद्धति है, उस मे कुछ अन्तर
प्रधान पाठो मे सफलता प्राप्त करने के लिए अध्यापक को नीचे
पर ध्यान देना होगा—

(i) जो क्रिया (activity) भी बालको के लिए चुन
हुन कठिन न हो अन्यथा उनका सारा उत्साह जाता रहेगा।

(ii) ऐसा कोई काम न चुना जाए जिस मे बहुत अधिक
तो बालको की रुचि पाठ मे कम हो जाएगी।

(iii) किसी भी कार्य मे कुशलता प्राप्त करने के लिए, यह
आवश्यक है, कि बालक के मन मे उस कार्य के प्रति जिज्ञासा की भावन
तभी वह इस कार्य को भली भांति सीख सकेगा।

(iv) इस बात का ध्यान रखा जाए कि कार्य का प्रारम्भ
से हो। इस लिए शुरू-शुरू मे गति (speed) की ओर ध्यान न दे
विधि पर ही अधिक ध्यान दिया जाए।

(v) कार्य ऐसा हो, जिसमे थोड़े प्रयत्न के पश्चात सफलता प्राप्त की
जा सके।

अब उन शिक्षण-सोपानों का वर्णन किया जाएगा जिन का
क्रिया-प्रधान पाठो मे लिया जाता है।

प्रस्तावना या भूमिका (Introduction)—ज्ञान-प्रधान पाठ
समान ही, यह हमारा उद्देश्य होगा, बालको के मन मे नए पाठ के प्र
जिज्ञासा उत्पन्न करना। यहाँ पर या तो अध्यापक कोई किया हुआ का
बालको को दिखाएगा और उन से भी वह कार्य करने को कहा जाएगा
अथवा वह ऐसी परिस्थिति का निर्माण करेगा जिसमे किसी कौशल का सीखना
आवश्यक हो जाएगा।

...एक विशिष्ट क्रिया करने की उसमे प्रवृत्ति होती है। इस
आधार मानकर ही क्रिया-प्रधान पाठो की योजना बनाई गई है
के पाठो मे हम बालको को कुछ करना सिखाते हैं। इस लिए
के पाठो मे हस्त-क्रिया (Hand work), चित्रकला, तथा अन्य
ऐसे पाठ आ जाते हैं; जिन मे वे लिखने तथा पढ़ने मे कुशलता प्रा
हैं। इन पाठो मे पढ़ाने की जो पद्धति है, उस मे कुछ अन्तर रहेगा
प्रधान पाठो मे सफलता प्राप्त करने के लिए अध्यापक को नीचे लिख
पर ध्यान देना होगा—

(i) जो क्रिया (activity) भी बालको के लिए चुनं
बहुत कठिन न हो अन्यथा उनका सारा उत्साह जाता रहेगा।

(ii) ऐसा कोई काम न चुना जाए जिस मे बहुत अधिक स
तो बालको की रुचि पाठ मे कम हो जाएगी।

(iii) किसी भी कार्य मे कुशलता प्राप्त करने के लिए, यह
आवश्यक है, कि बालक के मन मे उस कार्य के प्रति जिज्ञासा की भावना
वह इस कार्य को भली भाँति सीख सकेगा।

(iv) इस बात का ध्यान रखा जाए कि कार्य का प्रारम्भ
इस लिए शुरू-शुरू मे गति (speed) की ओर ध्यान न दे
ही अधिक ध्यान दिया जाए।
कार्य ऐसा हो, जिसमे थोड़े प्रयत्न के पश्चात सफलता प्राप्त की

... उन शिक्षण-सोपानों का वर्णन किया जाएगा जिन का प्र
पाठो मे दिया जाता है।
... या भूमिका (Introduction)—ज्ञान-प्रधान पाठ
... हमारा उद्देश्य होगा, बालको के मन मे नए पाठ के प्रति
... करना। यहाँ पर या तो अध्यापक कोई किया हुआ कार्य
...जाएगा और उन मे भी वह कार्य करने की उत्कट आकांक्षा
... परिस्थिति का निर्माण करना जिस मे किसी कौशल का सीखना
...गा।

(ii) अध्यापक को बालको की रुचि और क्षमता के अनु
रसानुभूति के पाठ खोजने चाहिए।

(iii) अध्यापक कक्षा मे अच्छी प्रकार से तैयार होकर जाए
विषय पर उसका पूर्ण अधिकार हो।

(iv) इस प्रकार के पाठो मे भाषा सम्बन्धी कोई कठिनाई नही ह
चाहिए।

शिक्षण सोपान—

रसानुभूति के पाठो मे कोई निश्चित सोपान नही है। सोपानो का
निश्चय पाठ के अनुसार ही किया जाएगा।

प्रारम्भ—(Preparation) रसानुभूति के पाठो मे प्रस्तावन
महत्वपूर्ण है। इसका प्रधान उद्देश्य कक्षा मे उचित वातावरण बनाए र
कक्षा का वातावरण शान्त तथा पाठ के अनुसार बदलता रहना चा
प्राकृतिक सौन्दर्य सम्बन्धी कविता तो कक्षा से बाहिर, वृक्षो, लताओ
पक्षियो आदि के बीच मे अधिक अच्छी प्रकार से ग्रहण की जाएगी। इस
का ध्यान रखा जाए कि अध्यापक कहीं शब्दार्थ करवाने न बैठ जाए नहीं
रस भग होने की सम्भावना है। अध्यापक तथा बालको के सस्वर, सयानुस
वाचन द्वारा कक्षा में एक काव्यमय वातावरण उत्पन्न हो जाएगा।

प्रस्तुति करण—(Presentation) इस सोपान मे अध्यापक, पाठ
सुन्दर स्थलो को बालकों के सामने प्रस्तुत करेगा और उनकी ही सहायता
सौन्दर्य का उद्‌घाटन करेगा अपनी-अपनी रुचि के अनुसार बालक सुन्दर
लों को खोज करेंगे। ऐसी पंक्तियाँ या अवतरण जिन में सौन्दर्य छिपा हुआ
न की बार-बार आवृत्ति की जाएगी। यदि बालक इस प्रकार के पाठ
पढ़ चुके हैं तो इनकी आपस मे तुलना भी करवाई जा सकती है।

अभिव्यक्ति—(Expression) कविता, कहानी अथवा संगीत के
स बालकों को सुन्दर लगे है, उसकी वे चर्चा तथा आलोचना करेंगे
स बात का उल्लेख करेंगे कि उन्हें यह स्थल अन्य स्थलों से क्यों
अच्छे लगे हैं। अन्त में वातावरण बनाए रखने के लिए कविता का
ाठ होगा अथवा संगीत फिर से सुना जाएगा।

(ii) अध्यापक को बालको की रुचि और क्षमता के अनुस
रसानुभूति के पाठ खोजने चाहिए।

(iii) अध्यापक कक्षा मे अच्छी प्रकार से तैयार होकर जाए
विषय पर उसका पूर्ण अधिकार हो।

(iv) इस प्रकार के पाठो मे भाषा सम्बन्धी कोई कठिनाई नही हो
चाहिए।

शिक्षण सोपान—

रसानुभूति के पाठो मे कोई निश्चित सोपान नही है। सोपानो का
निश्चय पाठ के अनुसार ही किया जाएगा।

प्रारम्भ—(Preparation) रसानुभूति के पाठो मे प्रस्तावना बहुत
महत्वपूर्ण है। इसका प्रधान उद्देश्य कक्षा मे उचित वातावरण बनाए
कक्षा का वातावरण शान्त तथा पाठ के अनुसार बदलता रहना
प्राकृतिक सौन्दर्य सम्बन्धी कविता तो कक्षा से बाहिर, वृक्षो, लताओ
दियो आदि के बीच मे अधिक अच्छी प्रकार से ग्रहण की जाएगी। इस
ध्यान रखा जाए कि अध्यापक कहीं शब्दार्थ करवाने न बैठ जाए नह
भग होने की सम्भावना है। अध्यापक तथा बालको के सस्वर, सयानु
द्वारा कक्षा में एक काव्यमय वातावरण उत्पन्न हो जाएगा।

प्रस्तुति करण—(Presentation) इस सोपान में अध्यापक, पा
र स्थलो को बालकों के सामने प्रस्तुत करेगा और उनकी ही सह
र्य का उद्घाटन करेगा अपनी-अपनी रुचि के अनुसार बालक गु
की खोज करेंगे। ऐसी पंक्तियाँ या अवतरण जिन में सौन्दर्य छिपा हु
की बार-बार आवृत्ति की जाएगी। यदि बालक इस प्रकार के
चुके हैं तो इनकी आपस मे तुलना भी करवाई जा सकती है।

अभिव्यक्ति—(Expression) कविता, कहानी अथवा सगीत
बालकों को सुन्दर लगे हैं, उसकी वे चर्चा तथा आलोचना
का उल्लेख करेंगे कि उन्हें यह स्थल अन्य स्थलों से
लगे हैं। अन्त में वातावरण बनाए रखने के लिए कविता
कहानी अथवा संगीत फिर से सुना जाएगा।

of a young teacher)। एक अन्य शिक्षा शास्त्री ... अध्यापक 'क्या,' 'क्यों,' 'कैसे,' 'कब,' 'कौन,' तथा 'कहाँ' इन ... का उत्तम सहयोग प्राप्त करता है, वही अच्छा अध्यापक है।

प्रश्न करने का प्रयोजन—

प्रश्न नीचे लिखे उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किए जाते हैं—

(i) विद्यार्थियों के पूर्व-ज्ञान (apperception mass) ... परिचय प्राप्त करना क्योंकि पूर्व-ज्ञान के आधार पर ही बालकों को ... दिया जाएगा।

(ii) विद्यार्थियों की कठिनाइयों और शंकाओं का ज्ञान हो ... नया पाठ प्रारम्भ करने से पूर्व, इनका निराकरण करना आवश्यक है।

(iii) बालकों का अवधान केन्द्रित रखने के लिए, उन्हें सदा ... (alert) बनाए रखना।

(iv) यह जानने के लिए कि बालक पाठ को समझ भी रहा है या नहीं ...

(v) पठित विषय की पुनरावृत्ति करना ताकि प्राप्त ज्ञान विद्यार्थियों के मस्तिष्क में स्थिर किया जा सके।

(vi) बालकों के विचारों और कल्पनाओं को उत्तेजित करना।

(vii) इस बात का ज्ञान प्राप्त करना कि विद्यार्थियों की रुचि किस प्रकार के विषयों में है।

(viii) इस बात को जानने का यत्न करना कि बालकों ने जिस ज्ञान को अर्जित किया है, उसको क्या वे सफल रीति से अभिव्यक्त कर सकते हैं।

(ix) बालकों शुद्ध-अशुद्ध तथा उचित-अनुचित के ज्ञान की वृद्धि करना।

प्रश्नों का वर्गीकरण (Classification)

(i) प्रथम वर्गीकरण के अनुसार, प्रश्नों का आधार मानसिक प्रक्रिया है। इस आधार पर प्रश्नों के भेद (types) नीचे दिए जाते हैं—

(क) स्मृति (memory) सम्बन्धी प्रश्न—
जैसे—लाहौर कहाँ है ?

(ख) संस्था (Organization) सम्बन्धी प्रश्न—

of a young teacher)। एक अन्य शिक्षा शास्त्री के अनु अध्यापक 'क्या,' 'क्यो,' 'कैसे,' 'कब,' 'कौन,' तथा 'कहाँ' इन छः सह का उत्तम सहयोग प्राप्त करता है, वही अच्छा अध्यापक है।

प्रश्न करने का प्रयोजन—

प्रश्न नीचे लिखे उद्देश्यो की पूर्ति के लिए किए जाते हैं—

(i) विद्यार्थियों के पूर्व-ज्ञान (apperception masses) परिचय प्राप्त करना क्योंकि पूर्व-ज्ञान के आधार पर ही बालको को नया ज्ञा दिया जाएगा।

(ii) विद्यार्थियो की कठिनाइयो और शकाओ का ज्ञान हो जाता है नया पाठ प्रारम्भ करने से पूर्व, इनका निराकरण करना आवश्यक है।

(iii) बालको का अवधान केन्द्रित रखने के लिए, उन्हें सदा सजग (alert) बनाए रखना।

(iv) यह जानने के लिए कि बालक पाठ को समझ भी रहा है या नहीं।

(v) पठित विषय की पुनरावृत्ति करना ताकि प्राप्त ज्ञान विद्या के मस्तिष्क में स्थिर किया जा सके।

(vi) बालको के विचारो और कल्पनाओ को उत्तेजित करना।

(vii) इस बात का ज्ञान प्राप्त करना कि विद्यार्थियो की रुचि कि प्रकार के विषयो मे है।

(viii) इस बात को जानने का यत्न करना कि बालको ने जिस ज्ञान अर्जित किया है, उसको क्या वे सफल रीति से अभिव्यक्त कर सकते हैं।

(ix) बालकों शुद्ध-अशुद्ध तथा उचित-अनुचित के ज्ञान की वृद्धि करना।

ों का वर्गीकरण (Classification)

(i) प्रथम वर्गीकरण के अनुसार, प्रश्नो का आधार मानसिक प्रक्रिया स आधार पर प्रश्नो के भेद (types) नीचे दिए जाते हैं—

क) स्मृति (memory) सम्बन्धी प्रश्न—

—लाहौर कहाँ है?

) संस्था (Organization) सम्बन्धी प्रश्न—

Q 92 "Although in modern conditions and with mo methods there is less need than formerly for teachers to be c
remains an im
ss important t
f dealing with
[Agra 19

(यद्यपि आधुनिक परिस्थितियों में, शिक्षा की नवीन विधियों के अनु प्रश्नों का निरन्तर पूछा जाना आवश्यक नहीं रह गया है फिर भी प्र पूछने की कला शिक्षण प्रक्रिया में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इ अतिरिक्त छात्रों से प्राप्त उत्तरों का ठीक-ठीक ढग से प्रयोग करना भी क महत्वपूर्ण नहीं है—इस कथन को स्पष्ट करो।) [आगरा १६५

उत्तर—प्रश्नों के महत्व तथा वर्गीकरण की चर्चा पहले की जा चु है। अब अच्छे प्रश्नों की विशेषताओं पर प्रकाश डाला जाएगा। दोषपू प्रश्न पूछने से प्रश्न शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर सकते। प्रश्न पूछ भी एक कला है। इसे सीखना और कुशलता से प्रयोग करना चाहिए।

अच्छे प्रश्नों की विशेषताएँ—

(१) प्रश्न छोटे हों, सरल हों तथा स्पष्ट हों, जिससे विद्यार्थी उनक अर्थ ढूढने में समय नष्ट न करें।

(२) प्रश्नों की भाषा बालकों की योग्यता के अनुसार सरल एवं स्पष्ट होनी चाहिए। यदि प्रश्नों की भाषा कठिन होगी तो बालक उनका आशय नहीं समझ सकेंगे।

(३) यथा सम्भव ऐसे प्रश्न नहीं करने चाहिए जिनका उत्तर केवल "हाँ" या "ना" में ही समाप्त हो जाए। ऐसे प्रश्नों द्वारा बालकों के विचार या कल्पना को जागृत नहीं किया जासकता और वे केवल अनुमान का सहारा लेते हैं। "क्या आप ने श्री अरविन्द का नाम सुना है?"—ऐसा ही प्रश्न है।

(४) ऐसे प्रश्न न पूछे जाए, जिनका उत्तर भी उनमें पाया जाए। ऐसे प्रश्न विद्यार्थियों के अवधान में बाधा उपस्थित करते हैं। छात्र पाठ की ओर से उदासीन हो जाते हैं और पूछे जाने पर प्रश्नों की सहायता से

Q 92 "Although in modern conditions and with modern methods there is less need than formerly for teachers to be conti- [illegible] remains an impor- [illegible] ss important than [illegible] f dealing with the [illegible] [Agra 1957]

(यद्यपि आधुनिक परिस्थितियों में, शिक्षा की नवीन विधियों के अनुसार प्रश्नों का निरन्तर पूछा जाना आवश्यक नहीं रह गया है फिर भी प्रश्न पूछने की कला शिक्षण प्रक्रिया में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इसके अतिरिक्त छात्रों से प्राप्त उत्तरों का ठीक-ठीक ढंग से प्रयोग करना भी कम महत्वपूर्ण नहीं है—इस कथन को स्पष्ट करो।) [आगरा १९५७]

उत्तर—प्रश्नों के महत्व तथा वर्गीकरण की चर्चा पहले की जा चुकी है। अब अच्छे प्रश्नों की विशेषताओं पर प्रकाश डाला जाएगा। दोषपूर्ण प्रश्न पूछने से प्रश्न शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर सकते। प्रश्न पूछना भी एक कला है। इसे सीखना और कुशलता से प्रयोग करना चाहिए।

अच्छे प्रश्नों की विशेषताएँ—

(१) प्रश्न छोटे हों, सरल हों तथा स्पष्ट हों, जिससे विद्यार्थी उनके अर्थ ढूढ़ने में समय नष्ट न करें।

(२) प्रश्नों की भाषा बालकों की योग्यता के अनुसार सरल एवं स्पष्ट होनी चाहिए। यदि प्रश्नों की भाषा कठिन होगी तो बालक उनका आशय नहीं समझ सकेंगे।

(३) यथा सम्भव ऐसे प्रश्न नहीं करने चाहिए जिनका उत्तर केवल "हाँ" या "ना" में ही समाप्त हो जाए। ऐसे प्रश्नों द्वारा बालकों के विचार या कल्पना को जागृत नहीं किया जासकता और वे केवल अनुमान का सहारा लेते हैं। "क्या आप ने श्री अरविन्द का नाम सुना है?"—ऐसा ही प्रश्न है।

(४) ऐसे प्रश्न न पूछे जाएं, जिनका उत्तर भी उनमें पाया जाए। ऐसे प्रश्न विद्यार्थियों के अवधान में बाधा उपस्थित करते हैं। छात्र पाठ की ओर से उदासीन हो जाते हैं और पूछे जाने पर प्रश्नों की सहायता से

है। इससे कक्षा के कुछ गिने-चुने विद्यार्थी ही सक्रिय रहते हैं। विद्यार्थी पाठ से विमुख हो जाते हैं। उनमें हीनता तथा ईर्ष्या आदि घर कर जाते हैं।

(१३) अध्यापक को इस बात का यत्न करना चाहिए कि पू... वाले प्रश्नों को दोहराया न जाए। यदि अध्यापक प्रश्नों को दोहराए... पहली बार पूछने पर विद्यार्थी ध्यान ही न देंगे क्योंकि उन्हें मालूम... कि अध्यापक प्रश्न को दूसरी बार दोहराएगा।

(१४) कोल (Cole) के मतानुसार प्रश्न प्रसंग के उपयुक्त तथा निर... होने चाहिए। सब प्रश्न एक दूसरे से सम्बन्धित हों, अर्थात् एक प्रश्न ... प्रश्न से निकलता चला जाए।

(१५) प्रश्न करते समय अध्यापक को सहानुभूतिपूर्ण तथा धैर्यवा... चाहिए। यदि कोई विद्यार्थी उत्तर न दे सके तो अध्यापक को अपना ...सिक सन्तुलन खो नहीं देना चाहिए, वरन् बड़े प्रेम और सहानुभूति से उ... कठिनाई को दूर करने का यत्न करना चाहिए। इस प्रकार विद्यार्थियों... विश्वास और श्रद्धा की भावनाएँ उत्पन्न करके ही अध्यापक अधिक सफल... प्राप्त कर सकता है।

अच्छे उत्तरों की विशेषताएँ :—

पाठ की सफलता का अनुमान हमें विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त उत्तरों से ही ...लग सकता है। यदि अध्यापक के प्रश्न उचित हुए तो उत्तर भी ... आएगे। अच्छे उत्तरों की निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए—

(१) उत्तर की उत्तमता उसकी भाषा और विषय से सम्बन्धित ...है। जिस विषय पर प्रश्न पूछा जाए, उत्तर उसके अनुकूल ही होना चा...

(२) अच्छे उत्तर ठीक तथा सरल भाषा में होते हैं। वह सोचने ...ने के पश्चात् ही दिए जाते हैं।

(३) इस विषय पर विद्वानों का मतभेद है कि उत्तर पूरे वाक्यों में ...एँ अथवा कुछ शब्दों में ही। कुछ लोगों का कथन है कि जब तक पू... ...यों में उत्तर न दिया जाए, जब तक उसे ठीक नहीं मानना चाहिए।

है। इससे कक्षा के कुछ गिने-चुने विद्यार्थी ही सक्रिय रहते हैं। श्र
विद्यार्थी पाठ से विमुख हो जाते हैं। उनमें हीनता तथा ईर्ष्या आदि
पर कर जाते हैं।

(१३) अध्यापक को इस बात का यत्न करना चाहिए कि पूछे
वाले प्रश्नों को दोहराया न जाए। यदि अध्यापक प्रश्नों को दोहराएगा
पहली बार पूछने पर विद्यार्थी ध्यान ही न देंगे क्योंकि उन्हें मालूम ही
कि अध्यापक प्रश्न को दूसरी बार दोहराएगा।

(१४) कोल (Cole) के मतानुसार प्रश्न प्रसंग के उपयुक्त तथा नि
होने चाहिए। सब प्रश्न एक दूसरे से सम्बन्धित हों, अर्थात् एक प्रश्न,
प्रश्न से निकलता चला जाए।

(१५) प्रश्न करते समय अध्यापक को सहानुभूतिपूर्ण तथा धैर्यवान हो
चाहिए। यदि कोई विद्यार्थी उत्तर न दे सके तो अध्यापक को अपना मान
सिक सन्तुलन खो नहीं देना चाहिए, वरन् बड़े प्रेम और सहानुभूति से उसकी
कठिनाई को दूर करने का यत्न करना चाहिए। इस प्रकार विद्यार्थियों में
विश्वास और श्रद्धा की भावनाएँ उत्पन्न करके ही अध्यापक अधिक सफलता
प्राप्त कर सकता है।

अच्छे उत्तरों की विशेषताएँ :—

पाठ की सफलता का अनुमान हमें विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त उत्तरों से ही
लग सकता है। यदि अध्यापक के प्रश्न उचित हुए तो उत्तर भी ठीक ही
आएंगे। अच्छे उत्तरों की निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए—

(१) उत्तर की उत्तमता उसकी भाषा और विषय से सम्बन्धित होनी
। जिस विषय पर प्रश्न पूछा जाए, उत्तर उसके अनुकूल ही होना चाहिए।

(२) अच्छे उत्तर ठीक तथा सरल भाषा में होते हैं। वह सोचने विचा-
के पश्चात् ही दिए जाते हैं।

(३) इस विषय पर विद्वानों का मतभेद है कि उत्तर पूरे वाक्यों में लि
अथवा कुछ शब्दों में ही। कुछ लोगों का कथन है कि जब तक पू
में उत्तर न दिया जाए, जब तक उसे ठीक नहीं मानना चाहिए।

यदि अध्यापक द्वारा बालकों के उत्तरों की ओर उचित ध्यान नहीं दिया जाता तो प्रश्न पूछने का कोई लाभ ही नहीं। प्रश्न पूछने का मुख्य प्रयोजन यही है कि हमें इस बात का पता चल जाए कि विद्यार्थी क्या जानता है और क्या नहीं जानता। बालकों के द्वारा दिए गए उत्तरों से ही इस बात का पता लगेगा। प्रश्न पूछने का एक दूसरा बड़ा उद्देश्य यह भी है कि बालकों के मन में पाठ के प्रति रुचि उत्पन्न की जाए। उत्तरों की ओर समुचित ध्यान दिए बिना, इस उद्देश्य की पूर्ति होना कठिन है। प्रश्नों के द्वारा हम बालकों के अस्पष्ट ज्ञान को स्पष्ट करते हैं, तथा आवृत्ति द्वारा तथ्यों को उन के मन में स्थिर करते हैं। इन सब उद्देश्यों को पूरा करने के लिए भी विद्यार्थियों के उत्तरों पर अच्छी प्रकार से ध्यान देना पड़ेगा।

बालकों के उत्तर और अध्यापक का दृष्टिकोण :—

(क) **विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करना**—अध्यापक को सदैव बालकों को उत्तर देने के लिए प्रोत्साहित करता रहना चाहिए। यह तभी सम्भव हो सकेगा जब कि ठीक दिए गए उत्तर की प्रशंसा की जाए। यदि किसी उत्तर का एक अंश ही ठीक है तो उसी अंश की सराहना की जाए। इस से बालकों को ठीक दिशा में प्रयत्न करने का उत्साह मिलेगा।

(ख) **अशुद्ध उत्तरों का विश्लेषण**—यदि बालकों के द्वारा दिए गए उत्तर पूर्ण रूप से शुद्ध नहीं हैं, तो उन का विश्लेषण करने के लिए, अध्यापक को और प्रश्न करने चाहिए ताकि विद्यार्थी को अपनी गलती का पता चल सके।

(ग) **अधूरे उत्तरों की पूर्ति**—कुछ उत्तर ठीक तो होते हैं परन्तु अपूर्ण होते हैं। जिस बालक ने अधूरा उत्तर दिया है, उसे ही पूरा करने के लिए कहना चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं कर सकता तो फिर अन्य विद्यार्थियों को ऐसा करने के लिए कहा जाए। कभी-कभी इस काम के लिए, अध्यापक अन्य छोटे-छोटे प्रश्न भी पूछ सकता है।

(घ) **सर्वथा अशुद्ध उत्तरों के प्रति अध्यापक का दृष्टिकोण**—कभी-कभी ऐसा भी देखा जाता है कि उत्तर सारे का सारा गलत है। आम तौर पर बिना कोई कारण बताए ही अध्यापक उसे अस्वीकार कर देते हैं। ऐसा करने

यदि अध्यापक द्वारा बालकों के उत्तरों की ओर उचित ध्यान नहीं दिया जाता तो प्रश्न पूछने का कोई लाभ ही नहीं। प्रश्न पूछने का मुख्य प्रयोजन यही है कि हमें इस बात का पता चल जाए कि विद्यार्थी क्या जानता है और क्या नहीं जानता। बालकों के द्वारा दिए गए उत्तरों से ही इस बात का पता चलेगा। प्रश्न पूछने का एक दूसरा बड़ा उद्देश्य यह भी है कि बालकों के मन में पाठ के प्रति रुचि उत्पन्न की जाए। उत्तरों की ओर समुचित ध्यान दिए बिना, इस उद्देश्य की पूर्ति होना कठिन है। प्रश्नों के द्वारा हम बालकों के अस्पष्ट ज्ञान को स्पष्ट करते हैं, तथा आवृत्ति द्वारा तथ्यों को उन के मन में स्थिर करते हैं। इन सब उद्देश्यों को पूरा करने के लिए भी विद्यार्थियों के उत्तरों पर अच्छी प्रकार से ध्यान देना पड़ेगा।

बालकों के उत्तर और अध्यापक का दृष्टिकोण :—

(क) विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करना—अध्यापक को सदैव बालकों को उत्तर देने के लिए प्रोत्साहित करता रहना चाहिए। यह तभी सम्भव हो सकेगा जब कि ठीक दिए गए उत्तर की प्रशंसा की जाए। यदि किसी उत्तर का एक अंश ही ठीक है तो उसी अंश की सराहना की जाए। इस से बालकों को ठीक दिशा में प्रयत्न करने का उत्साह मिलेगा।

(ख) अशुद्ध उत्तरों का विश्लेषण—यदि बालकों के द्वारा दिए गए उत्तर पूर्ण रूप से शुद्ध नहीं है, तो उन का विश्लेषण करने के लिए, अध्यापक को और प्रश्न करने चाहिए ताकि विद्यार्थी को अपनी गलती का पता चल सके।

(ग) अधूरे उत्तरों की पूर्ति—कुछ उत्तर ठीक तो होते हैं परन्तु अपूर्ण होते हैं। जिस बालक ने अधूरा उत्तर दिया है, उसे ही पूरा करने के लिए कहना चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं कर सकता तो फिर अन्य विद्यार्थियों से ऐसा करने के लिए कहा जाए। कभी-कभी इस काम के लिए, अध्यापक अन्य छोटे-छोटे प्रश्न भी पूछ सकता है।

(घ) सर्वथा अशुद्ध उत्तरों के प्रति अध्यापक का दृष्टिकोण—कभी-कभी ऐसा भी देखा जाता है कि उत्तर सारे का सारा गलत है। आम तौर पर बिना कोई कारण बताए ही अध्यापक उसे अस्वीकार कर देते हैं। ऐसा करने

पर रख दिया जाए तो कक्षा के सभी बालक उसे सरलता से देख सकें। एक छोटी सी वस्तु को इधर से लेकर उधर तक घुमना ठीक नहीं प्रतीत होता।

(२) प्रदर्शन सामग्री रोचक तथा आकर्षक होनी चाहिए। बालक असुन्दर वस्तु को किसी भी हालत में पसन्द नहीं करते। चटकीले-भड़कीले रंग तथा सादगी उन्हें अच्छी लगती है। इस लिए वही प्रदर्शन सामग्री रोचक तथा आकर्षक होगी जिसमें यह गुण पाए जाऐंगे।

(३) प्रदर्शन सामग्री का सबसे बड़ा गुण, उसका स्थूल होना है। छोटे बालक जिनके लिए प्रदर्शन-सामग्री का प्रयोग किया जाता है, सूक्ष्म वस्तु को नहीं समझ सकते। इसलिए प्रदर्शन-सामग्री जितनी ही स्थूल होगी, बालकों की ज्ञान इन्द्रियाँ उतनी ही सरलता से उसे ग्रहण करेंगी। स्थूल प्रदर्शन-सामग्री का सबसे सुन्दर उदारहण मूर्ति (model) है क्योंकि इनके व्यवहार में बालकों की अपनी कल्पना का कुछ भी उपयोग नहीं करना पड़ता।

(४) प्रदर्शन-सामग्री को पाठ्य-विषय तथा बालकों की ग्रहण शक्ति के अनुकूल होना चाहिए। छोटे-छोटे बालकों के लिए मूर्तियाँ (models) तथा चित्र (pictures) तथा बड़े बालकों के लिए मान-चित्र (maps) तथा रेखा-चित्र (sketches) का प्रयोग किया जा सकता है।

(५) प्रदर्शक वस्तु को उस वस्तु से कम महत्वपूर्ण होना चाहिए, जिसका स्पष्टीकरण उसके द्वारा किया जा रहा है। ऐसा न हो कि पाठ्य-वस्तु तो पीछे रह जाए और सहायक वस्तु मुख्य बन जाए। पाठ्य-विषय को बोधगम्य बनाने के लिए प्रदर्शन-सामग्री का प्रयोग किया जाता है। इसलिए उसे सदैव ही विषय की अधीनता में रहना चाहिए।

प्रदर्शन सामग्री का प्रयोग कैसे किया जाए?

आवश्यकता पड़ने पर ही प्रदर्शन-सामग्री का प्रयोग करना चाहिए नहीं तो अवस्था यह हो जाएगी कि बालक पढ़ कुछ रहा है और प्रदर्शन सामग्री कुछ दिखाई जा रही है।

पर रख दिया जाए तो कक्षा के सभी बालक उसे सरलता से देख सके एक छोटी सी वस्तु को इधर से लेकर उधर तक घुमना ठीक नं प्रतीत होता।

(२) प्रदर्शन सामग्री रोचक तथा आकर्षक होनी चाहिए। बालक असुन्दर वस्तु को किसी भी हालत में पसन्द नहीं करते। चटकीले-भड़कीले रंग तथा सादगी उन्हें अच्छी लगती है। इस लिए वही प्रदर्शन सामग्री रोचक तथा आकर्षक होगी जिसमें यह गुण पाए जाएंगे।

(३) प्रदर्शन सामग्री का सबसे बड़ा गुण, उसका स्थूल होना है। छोटे-छोटे बालक जिनके लिए प्रदर्शन-सामग्री का प्रयोग किया जाता है, सूक्ष्म वस्तु को नहीं समझ सकते। इसलिए प्रदर्शन-सामग्री जितनी ही स्थूल होगी बालकों की ज्ञान इन्द्रियाँ उतनी ही सरलता से उसे ग्रहण करेंगी। स्थूल प्रदर्शन-सामग्री का सबसे सुन्दर उदाहरण मूर्ति (model) है क्योंकि इनके व्यवहार में बालकों को अपनी कल्पना का कुछ भी उपयोग नहीं करना पड़ता।

(४) प्रदर्शन-सामग्री को पाठ्य-विषय तथा बालकों की ग्रहण शक्ति के अनुकूल होना चाहिए। छोटे-छोटे बालकों के लिए मूर्तियाँ (models) तथ चित्र (pictures) तथा बड़े बालकों के लिए मान-चित्र (maps) तथ रेखा-चित्र (sketches) का प्रयोग किया जा सकता है।

(५) प्रदर्शक वस्तु को उस वस्तु से कम महत्वपूर्ण होना चाहिए, जिसका स्पष्टीकरण उसके द्वारा किया जा रहा है। ऐसा न हो कि पाठ्य-वस्तु तो पीछे रह जाए और सहायक वस्तु मुख्य बन जाए। पाठ्य-विषय को बोधगम्य बनाने के लिए प्रदर्शन-सामग्री का प्रयोग किया जाता है। इसलिए उसे सदैव ही विषय की प्रधानता में रहना चाहिए।

प्रदर्शन सामग्री का प्रयोग कैसे किया जाए?

आवश्यकता पड़ने पर ही प्रदर्शन-सामग्री का प्रयोग करना चाहिए न तो अवस्था यह हो जाएगी कि बालक पढ़ कुछ रहा है और प्रदर्शन साम

मोती और ३, मोती अथवा ६ कंकर और ३ कंकर, गिनवाए जाएँगे तो वे सरलता से समझ जाएँगे कि ६ और ३ मिलकर ९ होते हैं।

दृश्य साधन—

(क) चित्र—छोटे-छोटे बालकों को चित्र बहुत अच्छे लगते हैं। विरंगी वस्तुओं को बालक पसन्द करते हैं। इस लिए बालकों की पा पुस्तकों में चित्रों का आयोजन भी किया जाता है। शिक्षण के क्षेत्र में चित्रों का प्रयोग बहुत अच्छी प्रकार से कर सकते हैं। इतिहास में घटना के चित्र, ऐतिहासिक महापुरुषों के चित्र, प्राचीन काल के हथियारों के चि विषय को स्पष्ट करने के लिए काम में लाए जाते हैं। भूगोल के शिक्षण भिन्न-भिन्न देशों के निवासी, उनके मकान वस्त्र, हथियार आदि इन सब चित्र दिखाए जा सकते हैं। इसी प्रकार नदियों, पहाड़ों, जानवरों आदि चित्रों से पाठ बहुत मनोरंजक तथा सरल बन जाता है। ऐसे ही भाषा अध्यापन में भी चित्रों के प्रयोग से पाठ सफल बनाया जा सकता है।

(ख) मूर्ति ((model)—चित्रों की अपेक्षा मूर्ति का प्रभाव बालकों प कहीं अधिक पड़ता है क्योंकि चित्रों की तुलना में वह अधिक स्थूल होती है इस स्थूलता के कारण ही पाठ को अधिक सजीव तथा स्पष्ट किया जा सकता है। स्वेज नहर के भाव को स्पष्ट करने के लिए, भूगोल के पाठ में, उसकी छोटी सी मूर्ति दिखाई जा सकती है। इसी प्रकार इतिहास के पाठ में महा- पुरुषों की मूर्तियाँ, विविध जानवरों की मूर्तियाँ तथा ताजमहल जैसी प्रसिद्ध इमारतों की मूर्तियाँ दिखाई जा सकती हैं। मूर्तियाँ मिट्टी की, लकड़ी की, पत्थर की तथा धातु की हो सकती है। मूर्तियों में एक बड़ी कमी यह है कि वे चित्रों की भाँति घटनाओं तथा दृश्यों का भली भाँति प्रदर्शन नहीं कर सकतीं।

(ग) रेखा-चित्र (sketches)—रेखा चित्रों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन्हें अध्यापक स्वयं कक्षा में ही श्यामपट पर बना सकता है। इनके लिए उसे बाह्य-साधनों पर निर्भर नहीं रहना पड़ता। रेखा-चित्रों की सहायता से पाठ बड़ी सरलता से बोध गम्य बनाया जा सकता है। भूगोल में

मोती और ३, मोती अथवा ६ कंकर और ३ कंकर, गिनवाए जाएँगे तो सरलता से समझ जाएँगे कि ६ और ३ मिलकर ९ होते हैं।

दृश्य साधन—

(क) चित्र—छोटे-छोटे बालकों को चित्र बहुत अच्छे लगते हैं विरंगी वस्तुओं को बालक पसन्द करते हैं। इस लिए बालकों की पुस्तकों में चित्रों का प्रायोजन भी किया जाता है। शिक्षण के क्षेत्र चित्रों का प्रयोग बहुत अच्छी प्रकार से कर सकते हैं। इतिहास में घट के चित्र, ऐतिहासिक महापुरुषों के चित्र, प्राचीन काल के हथियारों के विषय को स्पष्ट करने के लिए काम में लाए जाते हैं। भूगोल के अधिक्षण भिन्न-भिन्न देशों के निवासी, उनके मकान वस्त्र, हथियार आदि इन स चित्र दिखाए जा सकते हैं। इसी प्रकार नदियों, पहाड़ों, जानवरों आदि चित्रों से पाठ बहुत मनोरंजक तथा सरल बन जाता है। ऐसे ही भाष अध्यापन में भी चित्रों के प्रयोग से पाठ सफल बनाया जा सकता है।

(ख) मूर्ति ((model)—चित्रों की अपेक्षा मूर्ति का प्रभाव बालकों कहीं अधिक पड़ता है क्योंकि चित्रों की तुलना में वह अधिक स्थूल होती इस स्थूलता के कारण ही पाठ को अधिक सजीव तथा स्पष्ट किया जा सक है। स्वेज नहर के भाव को स्पष्ट करने के लिए, भूगोल के पाठ में, उस छोटी सी मूर्ति दिखाई जा सकती है। इसी प्रकार इतिहास के पाठ में मह रुषों की मूर्तियाँ, विविध जानवरों की मूर्तियाँ तथा ताजमहल जैसी प्रसि मारतों की मूर्तियाँ दिखाई जा सकती हैं। मूर्तियाँ मिट्टी की, लकड़ी की त्थर की तथा धातु की हो सकती हैं। मूर्तियों में एक बड़ी कमी यह है चित्रों की भाँति घटनाओं तथा दृश्यों का भली भाँति प्रदर्शन नहीं क सकतीं।

(ग) रेखा-चित्र (sketches)—रेखा चित्रों की सबसे बड़ी विशेषत यह है कि इन्हें अध्यापक स्वयं कक्षा में ही श्यामपट पर बना सकता है। इनके लिए उसे बाह्य-साधनों पर निर्भर नहीं रहना पड़ता। रेखा-चित्रों की सहायता से पाठ बड़ी सरलता से बोध गम्य बनाया जा सकता है। भूगोल में

शिक्षा भी ग्रामोफोन के द्वारा दी जा सकती है। इसके साथ-साथ ग्रा
को शिक्षा का साधन भी बनाया जा सकता है। रिकार्डों का वाद्य-
बहुत पहले से ही, खेलो के लिए, नृत्य तथा लय क्रमानुसार गति की
के लिए प्रयुक्त किया जाता है। सुन्दर, उपयोगी तथा शिक्षा प्रद भा
रिकार्ड समय समय पर बडी सुगमता से विद्यार्थियो की सहायता कर
हैं। अध्यापक को इनका प्रयोग बडा चतुराई से करना चाहिए।

(ख) रेडियो (Radio)—वर्तमानकाल मे रेडियो शिक्षा का
महत्वपूर्ण साधन बन गया है। जहाँ रेडियो के द्वारा हमारा मनोरजन
है, वहाँ इस का प्रयोग शिक्षा के क्षेत्र मे भी बडी सरलता से किया जा स
है। आकाशवाणी के भिन्न-भिन्न केन्द्रो से छोटे बच्चो के लिए, विद्या
के लिए, स्त्रियो के लिए तथा ग्रामवासियो के लिए कार्यक्रम प्रसारित
जाते हैं। इस प्रकार, रेडियो के द्वारा बाल-शिक्षा, स्त्री-शिक्षा, प्रौढ़-शि
तथा ग्रामवासियो की शिक्षा मे पर्याप्त मात्रा मे योगदान मिला है। स
समय पर विश्वविद्यालयो के छात्रो के लिए भी कार्यक्रम प्रसारित किए
हैं। इसके अतिरिक्त रेडियो पर उत्तम भाषण, सारगर्भित वार्ताएँ, प
गोष्ठियाँ तथा नाटक आदि भी होते हैं जिनसे अनुपम शिक्षा प्राप्त होती
बच्चों तथा विद्यार्थियो के कार्यक्रमो मे बच्चे तथा छात्र स्वयं भी भाग
हैं। इस प्रकार रेडियो की सहायता से ज्ञानार्जन के साथ-साथ विद्यार्थी अ
लेखक तथा अच्छे वक्ता भी बन सकते हैं।

(ग) चल-चित्र (Cinema)—आजकल के वैज्ञानिक आविष्कारों
चल-चित्रो का स्थान बहुत ऊँचा है। शिक्षा के क्षेत्र मे भी इन से पर्या
सहायता मिल सकती है। चल-चित्रों की सहायता से भिन्न भिन्न देशो के रीति
रिवाजों आदि का भली-भाँति परिचय हो जाता है? ऐतिहासिक, धार्मि
तथा सामाजिक चित्र जनता को उत्तम मार्ग दिखाते हैं और उनके चरि
निर्माण मे सहायता देते हैं। इस के अतिरिक्त चल-चित्र हमारी भावनाओं
प्रवृत्तियों तथा उमंगों को भी शान्त करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

उपरोक्त साधनों के अतिरिक्त, समाचार-पत्र फिल्म-स्ट्रिप्स (Film

शिक्षा भी ग्रामोफोन के द्वारा दी जा सकती है। इसके साथ-साथ ग्रामो को शिक्षा का साधन भी बनाया जा सकता है। रिकार्डों का वाद्य-स बहुत पहले से ही, खेलो के लिए, नृत्य तथा लय क्रमानुसार गति की शि के लिए प्रयुक्त किया जाता है। सुन्दर, उपयोगी तथा शिक्षा प्रद भाषण रिकार्ड समय समय पर बडी सुगमता से विद्यार्थियो की सहायता कर स हैं। अध्यापक को इनका प्रयोग बडा चतुराई से करना चाहिए।

(ख) रेडियो (Radio)—वर्तमानकाल मे रेडियो शिक्षा का महत्वपूर्ण साधन बन गया है। जहाँ रेडियो के द्वारा हमारा मनोरजन हो है, वहाँ इस का प्रयोग शिक्षा के क्षेत्र मे भी बडी सरलता से किया जा सर है। आकाशवाणी के भिन्न-भिन्न केन्द्रो से छोटे बच्चो के लिए, विद्यार्थि के लिए, स्त्रियो के लिए तथा ग्रामवासियो के लिए कार्यक्रम प्रसारित कि जाते हैं। इस प्रकार, रेडियो के द्वारा बाल-शिक्षा, स्त्री-शिक्षा, प्रौढ़-शिक्ष तथा ग्रामवासियो की शिक्षा मे पर्याप्त मात्रा मे योगदान मिला है। समय समय पर विश्वविद्यालयो के छात्रो के लिए भी कार्यक्रम प्रसारित किए जा हैं। इसके अतिरिक्त रेडियो पर उत्तम भाषण, सारगर्भित वार्ताएँ, वरि गोष्ठियाँ तथा नाटक आदि भी होते हैं जिनसे अनुपम शिक्षा प्राप्त होती है। बच्चों तथा विद्यार्थियो के कार्यक्रमो मे बच्चे तथा छात्र स्वयं भी भाग लेते हैं। इस प्रकार रेडियो की सहायता से ज्ञानार्जन के साथ-साथ विद्यार्थी अच्छे लेखक तथा अच्छे वक्ता भी बन सकते हैं।

(ग) चल-चित्र (Cinema)—आजकल के वैज्ञानिक आविष्कारों में चल-चित्रो का स्थान बहुत ऊँचा है। शिक्षा के क्षेत्र मे भी इन से पर्याप्त सहायता मिल सकती है। चल-चित्रों की सहायता से भिन्न भिन्न देशों के रीति-रिवाजों आदि का भली-भाँति परिचय हो जाता है? ऐतिहासिक, धार्मिक तथा सामाजिक चित्र जनता को उत्तम मार्ग दिखाते हैं और उनके चरित्र निर्माण में सहायता देते हैं। इन के अतिरिक्त चल-चित्र हमारी भावनाओं, प्रवृत्तियों तथा उद्वेगों को भी शान्त करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

उपरोक्त साधनों के अतिरिक्त, समाचार-पत्र फिल्म-स्ट्रिप (Film

निपुणता की आवश्यकता है, इस प्रकार प्रवचन करने का भी, उसे अभ्यास करना होगा।

इतिहास, भूगोल आदि पढ़ाते समय, अध्यापक को अपनी ओर से बहुत कुछ बताना पड़ता है। परन्तु उसे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसके प्रवचन बहुत लम्बे न हों। कहीं वे व्याख्यान का रूप ही धारण कर लेवें। लम्बे-लम्बे प्रवचन अरुचिकर होते हैं। बालकों का उन में मन नहीं लगता और वे जल्दी ही ऊबने भी लगते हैं। उनका ध्यान विषय से परे चला जाता है। उनके थके मन को विश्राम देने के लिए बीच-बीच में प्रश्न करना आवश्यक हो जाता है। उत्तर देने के लिए भी बालकों को अपनी चिन्तन शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है परन्तु यहाँ अवधान का रूप बदल जाता है इसलिए बालक थकान महसूस नहीं करते।

प्रवचन अथवा वर्णन की नीरसता को दूर करने का दूसरा उपाय यह है कि बीच-बीच में प्रदर्शन सामग्री दिखाई जाए। इससे भी बालकों के मन को आराम मिलेगा।

प्रवचन का रूखापन दूर करने का तीसरा महत्वपूर्ण साधन यह है कि विद्यार्थियों को किसी न किसी रचनात्मक अथवा क्रियात्मक कार्यों में लगा दिया जाए। उदाहरण स्वरूप भूगोल के पाठ में विद्यार्थी साथ-साथ अपने मान चित्रों की पूर्ति करते चलें अथवा कक्षा में टंगे मान चित्र में नदी, पर्वत तथा नगर आदि दिखावें।

इतिहास तथा भाषा पढ़ाते समय, कहानियों का प्रयोग भी बड़े उत्तम ढंग से किया जा सकता है। बालक कहानियों में बड़ी रुचि लेते हैं। कहानियों की सहायता से बड़ा नीरस विषय भी मनोरंजक तथा रोचक बन सकता है। अच्छी कहानी में क्या गुण होने चाहिए, इस की चर्चा लेखक ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी भाषा शिक्षण" में की है। इतिहास तथा भाषा के अध्यापकों के लिए विशेष रूप से कहानी सुनाने की कला में निपुणता प्राप्त कर लेनी चाहिए। यद्यपि कहानी सुनाने का गुण जन्मजात ही होता है परन्तु फिर भी अभ्यास से बहुत कुछ सीखा जा सकता है। कहानी के द्वारा बालकों का अवधान भी स्थिर किया जा सकता है।

निपुणता की आवश्यकता है, इस प्रकार प्रवचन करने का भी, उसे अभ्यास करना होगा।

इतिहास, भूगोल आदि पढ़ाते समय, अध्यापक को अपनी ओर से भी बहुत कुछ बताना पड़ता है। परन्तु उसे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसके प्रवचन बहुत लम्बे न हो। कहीं वे व्याख्यान का रूप ही धारण कर लेवें। लम्बे-लम्बे प्रवचन अरुचिकर होते हैं। बालकों का उन में मन न लगता और वे जल्दी ही ऊबने भी लगते हैं। उनका ध्यान विषय से परे। जाता है। उनके थके मन को विश्राम देने के लिए बीच-बीच में प्रश्न करना आवश्यक हो जाता है। उत्तर देने के लिए भी बालको को अपनी विचार शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है परन्तु यहाँ अवधान का रूप बदल जाता इसलिए बालक थकान महसूस नही करते।

प्रवचन अथवा वर्णन की नीरसता को दूर करने का दूसरा उपाय यह है कि बीच-बीच मे प्रदर्शन सामग्री दिखाई जाए। इससे भी बालकों के मन को आराम मिलेगा।

प्रवचन का रूखापन दूर करने का तीसरा महत्वपूर्ण साधन यह है कि विद्यार्थियो को किसी न किसी रचनात्मक अथवा क्रियात्मक कार्यों में लगा दिया जाए। उदाहरण स्वरूप भूगोल के पाठ मे विद्यार्थी साथ-साथ अपने मान-चित्रों की पूर्ति करते चलें अथवा कक्षा मे टंगे मान चित्र मे नदी, पर्वत तथा नगर आदि दिखावें।

इतिहास तथा भाषा पढ़ाते समय, कहानियों का प्रयोग भी बड़े उत्तम ढंग से किया जा सकता है। बालक कहानियो मे बड़ी रुचि लेते हैं। कहानियों की सहायता से बड़ा नीरस विषय भी मनोरंजक तथा रोचक बन सकता है। अच्छी कहानी में क्या गुण होने चाहिए, इस की चर्चा लेखक ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी भाषा शिक्षण" में की है। इतिहास तथा भाषा के अध्यापकों के लिए विशेष रूप से कहानी सुनाने की कला में निपुणता प्राप्त कर लेनी चाहिए। यद्यपि कहानी सुनाने का गुण जन्मजात ही होता है परन्तु फिर भी अभ्यास से बहुत कुछ सीखा जा सकता है। कहानी के द्वारा बालकों का अवधान भी स्थिर किया जा सकता है।

(शिक्षा के क्षेत्र में प्रदर्शन सामग्री की दृष्टि से, श्यामपट का क्या म
है ?)
[आगरा १९५

उत्तर—शिक्षण की दृष्टि से श्यामपट का महत्व सबसे अधिक है। उपकरणों के बिना चाहे काम चल भी जाए परन्तु श्यामपट एक ऐसा करण है जिसके बिना सीखने की क्रिया अधूरी ही रहेगी। सफल अध्या के लिए यह आवश्यक है कि श्यामपट का प्रयोग किया जाए।

श्यामपट का प्रयोजन

(i) बालकों के अवधान का नियन्त्रण—श्यामपट के प्रयोग से बालक के अवधान पर नियन्त्रण करने में बड़ी सहायता मिलती है। अध्याप श्यामपट पर प्रस्तुत पाठ की मुख्य-मुख्य बातें लिखता रहता है इस लिए बालकों का ध्यान सदा उसकी ओर रहता है।

(ii) साधन की सरलता तथा उत्तमता—प्रदर्शन-सामग्री के अन्य उपकरणों को इकट्ठा करने के लिए काफी परिश्रम करना पड़ता है। फिर उन्हें कक्षा में लाना पड़ता है या छात्रों को वहाँ तक पहुँचाना होता है। रन्तु श्यामपट के साथ इस प्रकार की कोई समस्या नहीं। कक्षा के भीतर ो जब चाहे तभी अध्यापक इसका प्रयोग कर सकता है।

(iii) मुख्य-मुख्य बातों का चयन—अध्यापक श्यामपट पर प्रस्तुत पाठ सम्बन्धित सभी मुख्य बातें नोट करता जाता है। विद्यार्थी इन बातों को रनी कापियों पर लिख लेते हैं और परीक्षा के समय या जब भी आवश्यकता ं, उन्हें दोहरा लेते हैं। उन्हें पता चल जाता है कि पाठ की मुख्य-मुख्य तें क्या हैं ?

(iv) काठिन्य निवारण—भाषा आदि के पाठों में कठिन शब्दों की व्याख्या करने के लिए श्यामपट का ही प्रयोग किया जाता है।

(v) पाठ के सारांश का कथन—इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र आदि के कई पाठों में यह आवश्यक हो जाता है कि सारांश दिया जाए। इस दृष्टि से श्यामपट विशेष रूप से उपयोगी साधन है।

(शिक्षा के क्षेत्र में प्रदर्शन सामग्री की दृष्टि से, श्यामपट का क्या
है ?)
[आगरा १६

उत्तर—शिक्षण की दृष्टि से श्यामपट का महत्व सबसे अधिक है। उपकरणों के बिना चाहे काम चल भी जाए परन्तु श्यामपट एक ऐसा करण है जिसके बिना सीखने की क्रिया अधूरी हो रहेगी। सफल अध्य के लिए यह आवश्यक है कि श्यामपट का प्रयोग किया जाए।

श्यामपट का प्रयोजन

(i) **बालकों के अवधान का नियन्त्रण**—श्यामपट के प्रयोग से बाल के अवधान पर नियन्त्रण करने में बड़ी सहायता मिलती है। अध्याप श्यामपट पर प्रस्तुत पाठ की मुख्य-मुख्य बातें लिखता रहता है इस नि बालकों का ध्यान सदा उसकी ओर रहता है।

(ii) **साधन की सरलता तथा उत्तमता**—प्रदर्शन-सामग्री के अन्य उपकरणों को इकट्ठा करने के लिए काफी परिश्रम करना पड़ता है। फि उन्हें कक्षा में लाना पड़ता है या छात्रों को वहाँ तक पहुँचाना होता है। परन्तु श्यामपट के साथ इस प्रकार की कोई समस्या नहीं। कक्षा के भीतर ही जब चाहे तभी अध्यापक इसका प्रयोग कर सकता है।

(iii) **मुख्य-मुख्य बातों का चयन**—अध्यापक श्यामपट पर प्रस्तुत पाठ से सम्बन्धित सभी मुख्य बातें नोट करता जाता है। विद्यार्थी इन बातों को अपनी कापियों पर लिख लेते हैं और परीक्षा के समय या जब भी आवश्यकता पड़े, उन्हें दोहरा लेते हैं। उन्हें पता चल जाता है कि पाठ की मुख्य-मुख्य बातें क्या हैं ?

(iv) **काठिन्य निवारण**—भाषा आदि के पाठों में कठिन शब्दों की व्याख्या करने के लिए श्यामपट का ही प्रयोग किया जाता है।

(v) **पाठ के सारांश का कथन**—इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र आदि के कई पाठों में यह आवश्यक हो जाता है कि सारांश दिया जाए। इस दृष्टि से श्यामपट विशेष रूप से उपयोगी साधन है।

"पुस्तकों से चिपटाए रखने की बजाय, मैं बालक को वर्कशाप में व्यस्त रखता हूँ जहाँ उसके मन के साथ-साथ हाथ भी काम करें" (Instead of making the child stick to his books, I keep him busy in the workshop where his hands will work to the profit of his mind)। परन्तु उस समय इस बात पर कोई ध्यान दिया गया। फ्रोबेल (Froebel) ने पहले पहल अपनी किंडरगार्टन (Kindergarten) पद्धति में "क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन" नामक सिद्धान्त पर ध्यान देकर यह सिद्ध किया कि किस प्रकार इस सिद्धान्त को व्यवहृत किया जा सकता है। मोन्टेसरी (Montessori) पद्धति, प्रोजेक्ट (project) पद्धति तथा बुनियादी शिक्षा की वर्धा योजना (Wardha scheme of Basic Education) में भी यही "क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन" का सिद्धान्त काम करता है।

"क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन" नामक सिद्धान्त के मनोवैज्ञानिक आधार

(१) शरीर और मन का समन्वय—मनोविज्ञान तथा शिक्षा के क्षेत्र में किए गए भिन्न-भिन्न अनुसन्धानों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि शरीर और मन का सम्बन्ध बड़े निकट का है। केवल मानसिक क्रियाओं के आधार पर ही बालक का सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता। सीखने की क्रिया में सफलता प्राप्त करने के लिए हाथ तथा मस्तिष्क दोनों को साथ-साथ काम करना होगा।

(२) सीखने के भिन्न-भिन्न सिद्धान्तों का समन्वय—विद्वानों के मतानुसार सीखने की कई विधियाँ हैं—जैसे प्रयत्न और भूल द्वारा सीखना (learning by trial and error), अनुकरण के द्वारा सीखना (learning by imitation), तथा सूझ के द्वारा सीखना (learning by insight) इत्यादि। जब बालक किसी न किसी क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन करते हैं, तब वे इन सभी सिद्धान्तों को काम में लाते हैं। मान लीजिए बालकों को तकली पर सूत कातना सिखाया जा रहा है। अब वे सूत कातने की क्रिया (activity) में दूसरों का अनुकरण भी करेंगे, सीखते समय कितने ही

"पुस्तकों से लगाए रखने की अपेक्षा, मैं बालक को वर्कशाप में लगाए हूँ जहाँ उसके मन के साथ साथ हाथ भी काम करें" (Instead of making the child stick to his books, I keep him b in the workshop where his hands will work to profit of his mind)। परन्तु उस समय इस बात पर कोई ध्या दिया गया। फ्रोबेल (Froebel) ने पहले पहल अपनी किंडरगार्टन (Ki dergarten) पद्धति में "क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन" नामक सिद्धान्त स्थान देकर यह सिद्ध किया कि किस प्रकार इस सिद्धान्त को व्यवहा में लाया जा सकता है। मॉन्टेसरी (Montessori) पद्धति प्रो (project) पद्धति तथा बुनियादी शिक्षा की वर्धा योजना (Ward scheme of Basic Education) में भी यही "क्रिया द्वारा ज्ञानार्ज का सिद्धान्त काम करता है।

"क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन" नामक सिद्धान्त के मनोवैज्ञानिक आधार

(१) शरीर और मन का समन्वय—मनोविज्ञान तथा शिक्षा के क्षेत्र किए गए भिन्न-भिन्न अनुसन्धानों के आधार पर यह कहा जासकता है कि *शरीर और मन का सम्बन्ध बड़े निकट का है।* केवल मानसिक क्रियाओं के आधार पर ही बालक का सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता। सीखने की क्रिया में सफलता प्राप्त करने के लिए हाथ तथा मस्तिष्क दोनों को साथ-साथ काम करना होगा।

(२) सीखने के भिन्न-भिन्न सिद्धान्तों का समन्वय—विद्वानों के मतानुसार सीखने की कई विधियां हैं—जैसे प्रयत्न और भूल द्वारा सीखना (learning by trial and error), अनुकरण के द्वारा सीखना (learning by imitation), तथा सूझ के द्वारा सीखना (learning by insight) इत्यादि। जब बालक किसी न किसी क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन करते हैं, तब वे इन सभी सिद्धान्तों को काम में लाते हैं। मान लीजिए बालकों को तकली पर सूत कातना सिखाया जा रहा है। अब वे सूत कातने की क्रिया (activity) में दूसरों का अनुकरण भी करेंगे, सीखते समय कितने ही

क्रियाशील होता है। उसकी तर्क शक्ति का विकास अभी नहीं हुआ होता इस लिए इस अवस्था में जो भी शिक्षा दी जाए वह "क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन" के सिद्धान्त पर आधारित हो। किशोर अवस्था में बालक में तर्क शक्ति बढ़ने लगती है। अतएव माध्यमिक कक्षाओं में शारीरिक क्रियाओं के साथ ही साथ मानसिक क्रियाओं को भी स्थान दे सकते हैं।

क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन तथा पाठ्यक्रम के भिन्न भिन्न विषय

इस सिद्धान्त का प्रयोग पाठ्यक्रम के भिन्न-भिन्न विषयों में अच्छी प्रकार से किया जा सकता है। इतिहास में रुचि उत्पन्न करने के लिए अध्यापक को स्थानीय इतिहास से सहायता लेनी चाहिये। इतिहास की भिन्न-भिन्न घटनाओं को बालक नाटक के रूप में उपस्थित करें। बालकों से एतिहासिक मूर्तियां (models), मान-चित्र (maps) तथा अन्य वस्तुएँ बनवाई जाएं। भूगोल का विषय बालकों को बहुत नीरस लगता है क्योंकि उन्हें बहुत से तथ्यों को रटना पड़ता है। यदि बालकों को नदियों, पहाड़ों आदि भूगोल से सम्बन्धित वस्तुओं की यात्रा पर ले जाया जाए उन से भौगोलिक मान चित्र तथा मूर्तियां, चार्ट इत्यादि बनवाए जाएँ तो कोई भी कारण नहीं कि बालक भूगोल में रुचि न ले। 'क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन' के सिद्धान्त का प्रयोग भाषा शिक्षण में भी किया जा सकता है। उन्हें इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाए कि वे साप्ताहिक अथवा मासिक हस्त लिखित पत्र निकालें, कहानियों इत्यादि को नाटक का रूप दें, भाषण तैयार करें तथा वाद-विवाद जैसे क्रियाशीलनों में सक्रिय रूप से भाग लेवें।

Q. 103 Discuss the theory and working of the project method. Can we employ it succesfully in Indian schools ?
[Panjab 1948 suppl, 1952, 1954 suppl , 1955]

(प्रॉजेक्ट शिक्षण पद्धति के सिद्धान्तों तथा कार्य-विधि पर प्रकाश डालते हुए इस बात की चर्चा करो कि क्या इस विधि का प्रयोग भारतीय विद्यालयों में सफलतापूर्वक किया जा सकता है ?)

(पंजाब १९४८ सप्ली०, १९५२ १९५४ सप्ली०, १९५५)

Q 104 Discuss the psychological basis and merits of the Project Method.
[Panjab 1949 suppl]

क्रियाशील होता है। उसकी तर्क शक्ति का विकास अभी नहीं हुआ है इस लिए इस अवस्था में जो भी शिक्षा दी जाए वह "क्रिया द्वारा ज्ञाना के सिद्धान्त पर आधारित हो। किशोर अवस्था में बालक में तर्क शक्ति र लगती है। अतएव माध्यमिक कक्षाओं में शारीरिक क्रियाओं के साथ ही र मानसिक क्रियाओं को भी स्थान दे सकते हैं।

क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन तथा पाठ्यक्रम के भिन्न भिन्न विषय

इस सिद्धान्त का प्रयोग पाठ्यक्रम के भिन्न-भिन्न विषयों में अच्छी प्रक से किया जा सकता है। इतिहास में रुचि उत्पन्न करने के लिए अध्यापक न स्थानीय इतिहास से सहायता लेनी चाहिये। इतिहास की भिन्न-भिन्न घटनाओं को बालक नाटक के रूप में उपस्थित करें। बालकों से ऐतिहासिक मूर्तिय (models), मान-चित्र (maps) तथा अन्य वस्तुएँ बनवाई जाएँ। भूगोल का विषय बालकों को बहुत नीरस लगता है क्योंकि उन्हें बहुत से तथ्यों को रटना पड़ता है। यदि बालकों को नदियों, पहाड़ों आदि भूगोल से सम्बन्धित वस्तुओं की यात्रा पर ले जाया जाए उन से भौगोलिक मान चित्र तथा मूर्तियाँ, चार्ट इत्यादि बनवाए जाएँ तो कोई भी कारण नहीं कि बालक भूगोल में रुचि न ले। 'क्रिया द्वारा ज्ञानार्जन' के सिद्धान्त का प्रयोग भाषा शिक्षण में भी किया जा सकता है। उन्हें इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाए कि वे साप्ताहिक अथवा मासिक हस्त लिखित पत्र निकालें, कहानियों इत्यादि को नाटक का रूप दें, भाषण तैयार करें तथा वाद-विवाद जैसे क्रियाशीलनों में सक्रिय रूप से भाग लेवें।

Q. 103 Discuss the theory and working of the project method. Can we employ it succesfully in Indian schools ?
[Panjab 1948 suppl, 1952, 1954 suppl, 1955]

(प्रॉजेक्ट शिक्षण पद्धति के सिद्धान्तों तथा कार्य-विधि पर प्रकाश डालते हुए इस बात की चर्चा करो कि क्या इस विधि का प्रयोग भारतीय विद्यालयों में सफलतापूर्वक किया जा सकता है ?)

(पंजाब १६४८ सप्ली०, १६५२ १६५४ सप्ली०, १६५५)

Q 104 Discuss the psychological basis and merits of the Project Method.
[Panjab 1949 suppl]

अध्यापक इस कार्य में उनकी सहायता करे। अध्यापक का यह कार्य है कि वह बालकों की योग्यताओं तथा क्षमताओं के आधार पर ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करे जिनके द्वारा वे किसी न किसी समस्या या प्रॉजैक्ट को चुन सकें। अध्यापक बालकों को भिन्न-भिन्न मेलों (Fairs), प्रदर्शिनियों, दर्शनीय स्थानों इत्यादि पर ले जाएगा, तथा त्योहारों और अन्य सामाजिक गतिविधियों का परिचय कराएगा।

(२) प्रॉजैक्ट का चुनाव (Choosing and Purposing)—बालकों ने जिन-जिन परिस्थितियों का अध्ययन किया है, उसके आधार — उनके सामने भिन्न-भिन्न समस्याएं आएँगी। वे इन समस्याओं पर वादवि करेंगे और प्रॉजैक्ट के रूप में किसी ऐसी समस्या को चुनेंगे जिसमें अधिक बालकों की रुचि हो। परन्तु अध्यापक को इस बात की सावधानी रख होगी। कि बालक कहीं ऐसे कठिन प्रॉजैक्ट को न चुन लें जो उनकी क्षम से बाहिर हो अथवा जिस पर बहुत अधिक समय लगे और वे बीच में ही ० जाएं। ऐसा करते समय यह ध्यान रखा जाए कि कहीं बालक यह न सम लें कि कोई प्रॉजैक्ट उनकी इच्छा के विरुद्ध उन पर ठूंसा जारहा है। य अध्यापक चतुराई से काम लेगा तो ऐसी समस्या उपस्थित नहीं होगी प्रॉजैक्ट जो भी चुना जाए, बालक उसे अपना समझें। तभी वे उसमें रुचि लेंगे और उसे पूरा करने के लिए जी जान से जुट जाएंगे। इस सम्बन्ध में डाक्टर किलपैट्रिक (Kilpatrick) का कथन है कि "पाठशाला के कार्य में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अध्यापक और विद्यार्थी दोनों में से क्रिया को कौन चुनता है" (The part of the pupil and the part of the teacher in most of the school work depends largely on who does the purposing It is practically the whole thing)।

(३) प्रॉजैक्ट की योजना बनाना (Planning project)—यह प्रॉजैक्ट का तृतीय सोपान है। जब प्रॉजैक्ट का चुनाव हो जाता है तो उसे पूरा करने के लिए योजना बनाई जाती है। योजना बनाने में बालक अपनी-अपनी सम्मति देंगे। अध्यापक भी इस वाद विवाद में भाग लेगा। योजना

अध्यापक इन कार्य में उनकी सहायता करे। अध्यापक का यह कार्य है यह बालकों की योग्यताओं तथा क्षमताओं के प्रधार पर ऐसी परिस्थिति का निर्माण करे जिनके द्वारा वे किसी न किसी समस्या या प्रॉजेक्ट को चु सकें। अध्यापक बालकों को भिन्न-भिन्न मेलों (Fairs), प्रदर्शिनियों दर्शनीय स्थानों इत्यादि पर ले जाएगा, तथा त्यौहारों और अन्य सामाजिक गतिविधियों का परिचय कराएगा।

(२) प्रॉजेक्ट का चुनाव (Choosing and Purposing) बालकों ने जिन-जिन परिस्थितियों का अध्ययन किया है, उसके आधार उनके सामने भिन्न-भिन्न समस्याएँ आएँगी। वे इन समस्याओं पर वादवि करेंगे और प्रॉजेक्ट के रूप में किसी ऐसी समस्या को चुनेंगे जिसमें अधिक बालकों की रुचि हो। परन्तु अध्यापक को इस बात की सावधानी रख होगी। कि बालक कहीं ऐसे कठिन प्रॉजेक्ट को न चुन लें जो उनकी क्षमत से बाहिर हो अथवा जिस पर बहुत अधिक समय लगे और वे बीच में ही थ जाएँ। ऐसा करते समय यह ध्यान रखा जाए कि कहीं बालक यह न सम लें कि कोई प्रॉजेक्ट उनकी इच्छा के विरुद्ध उन पर ठूँसा जारहा है। यदि अध्यापक चतुराई से काम लेगा तो ऐसी समस्या उपस्थित नहीं होगी। प्रॉजेक्ट जो भी चुना जाए, बालक उसे अपना समझें। तभी वे उसमें रुचि लेंगे और उसे पूरा करने के लिए जी जान से जुट जाएँगे। इस सम्बन्ध मे डाक्टर किलपैट्रिक (Kilpatrick) का कथन है कि "पाठशाला के कार्य में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अध्यापक और विद्यार्थी दोनों में से क्रिया को कौन चुनता है" (The part of the pupil and the part of the teacher in most of the school work depends largely on who does the purposing It is practically the whole thing)।

(३) प्रॉजेक्ट की योजना बनाना (Planning project)—य प्रॉजेक्ट का तृतीय सोपान है। जब प्रॉजेक्ट का चुनाव हो जाता है तो उ पूरा करने के लिए योजना बनाई जाती है। योजना बनाने मे बालक अपनी अपनी सम्मति देंगे। अध्यापक भी इस वाद विवाद में भाग लेगा। योजन

यम (Law of Readiness), (ii) अभ्यास का नियम (Law of Exercise) तथा (iii) परिणाम का नियम (Law of Effect) जैक्ट पद्धति में इन तीनों नियमों को अमल में लाया जाता है।

(२) जीवन से सम्बन्धित—प्रॉजैक्ट पद्धति में शिक्षा का आधार पुस्त है। शिक्षा का सम्बन्ध बालकों के वास्तविक जीवन से है। बालक जीव वास्तविक समस्याओं को हल करते हैं और प्राप्त ज्ञान का प्रयोग न रिस्थितियों में करते हैं।

(३) प्रजातन्त्रवादी भावना का विकास—किसी भी प्रॉजैक्ट के द्वारा क, प्रजातन्त्रवादी ढंग से रहना सीखते हैं। प्रॉजैक्ट को पूरा करने के सब मिल कर काम करते हैं इस से उन में सहयोग की भावना बढ़ती वे मिल कर सोचते हैं तथा मिल कर कार्य करते हैं। उन सब श्य एक ही है। उन्हें अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों का ज्ञान हो ा है।

(४) चरित्र-निर्माण में सहायता—प्रॉजैक्ट के द्वारा बालकों के ्वीण विकास में पर्याप्त सहायता मिलती है। उन में आत्म-विश्वास तथा -निर्भरता की भावना का विकास होता है।

(५) हाथ के काम से प्रेम—प्रॉजैक्ट पद्धति के द्वारा बालक सीखते हैं ाथ से काम करना कोई लज्जा की बात नहीं। जब वे स्वयं हाथ से काम हैं तो श्रम के महत्व को समझ जाते हैं।

(६) पिछड़े बालकों की समस्या—कक्षा के साधारण अध्यापन में हम हैं कि कई बालक पढ़ाई में पिछड़ जाते हैं। परन्तु प्रॉजैक्ट पद्धति में भी अभिव्यक्ति के अनेकों अवसर प्रदान किए जाते हैं।

(७) समवायी पद्धति का अवलम्बन—प्रॉजैक्ट पद्धति में भिन्न-भिन्न अलग से न पढ़ाए जाकर सम्बन्धित रूप से पढ़ाए जाते हैं। प्रॉजैक्ट य विषय है और उसके आधार पर अन्य विषयों की शिक्षा प्रदान की है। इस प्रकार बालक ज्ञान को एक इकाई के रूप में ही ग्रहण

नियम (Law of Readiness), (ii) अभ्यास का नियम (Law of Exercise) तथा (iii) परिणाम का नियम (Law of Effect) प्रॉजेक्ट पद्धति में इन तीनों नियमों को अमल में लाया जाता है।

(२) जीवन से सम्बन्धित—प्रॉजेक्ट पद्धति में शिक्षा का आधार पुस्तकें नहीं। शिक्षा का सम्बन्ध बालकों के वास्तविक जीवन से है। बालक जीवन की वास्तविक समस्याओं को हल करते हैं और प्राप्त ज्ञान का प्रयोग नई परिस्थितियों में करते हैं।

(३) प्रजातन्त्रवादी भावना का विकास—किसी भी प्रॉजेक्ट के द्वारा बालक, प्रजातन्त्रवादी ढंग से रहना सीखते हैं। प्रॉजेक्ट को पूरा करने के लिए सब मिल कर काम करते हैं इस से उन में सहयोग की भावना बढ़ती है। वे मिल कर सोचते हैं तथा मिल कर कार्य करते हैं। उन सब का ध्येय एक ही है। उन्हें अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों का ज्ञान हो जाता है।

(४) चरित्र-निर्माण में सहायता—प्रॉजेक्ट के द्वारा बालकों के सर्वाङ्गीण विकास में पर्याप्त सहायता मिलती है। उन में आत्म-विश्वास तथा आत्म-निर्भरता की भावना का विकास होता है।

(५) हाथ के काम से प्रेम—प्रॉजेक्ट पद्धति के द्वारा बालक सीखते हैं कि हाथ से काम करना कोई लज्जा की बात नहीं। जब वे स्वयं हाथ से काम करते हैं तो श्रम के महत्त्व को समझ जाते हैं।

(६) पिछड़े बालकों की समस्या—कक्षा के साधारण अध्यापन में हम देखते हैं कि कई बालक पढ़ाई में पिछड़ जाते हैं। परन्तु प्रॉजेक्ट पद्धति में उनको भी अभिव्यक्ति के अनेकों अवसर प्रदान किए जाते हैं।

(७) समवायी पद्धति का अवलम्बन—प्रॉजेक्ट पद्धति में भिन्न-भिन्न विषय अलग से न पढ़ाए जाकर सम्बन्धित रूप से पढ़ाए जाते हैं। प्रॉजेक्ट केन्द्रीय विषय है और उसके आधार पर अन्य विषयों की शिक्षा प्रदान की जाती है। इस प्रकार बालक ज्ञान को एक इकाई के रूप में ही ग्रहण करते हैं।

ट में तो वर्धा योजना, प्रोजेक्ट

मनोवैज्ञानिक आधार :—
में सीखने के सभी नियमो (laws of learning)

में जो जिज्ञासा (Curiousity) रचना (Constru-
acquisition), आत्म गौरव (Self-assertion)
है उनका उपयोग शिक्षा की दृष्टि से किया जाता है।
को आत्म-अभिव्यक्ति के अनेको अवसर प्रदान किए

जिन परिस्थितियो मे काम करते हैं, उनके द्वारा हीनता
feriority Complex) को दूर किया जाता है।

Describe the Heuristic Method, mentioning the
inciples on which this method is based.
[Agra 1953]

टिक पद्धति की चर्चा करते हुए लिखें कि इस के आधारभूत
कौन से हैं ?)
[आगरा १९५३]

. Discuss the value of Heuristic Method of teaching.
[Panjab 1948 Suppl]

रिस्टिक शिक्षण-पद्धति की प्रमुख-प्रमुख विशेषताओं पर विस्तार से
।)
[पंजाब १९४८ सप्ली०]

. What do you understand by the Heuristic Method ?
can this method be used in our schools ?
[Panjab 1948, 1950 Suppl]

रिस्टिक शिक्षण-पद्धति से आपका क्या अभिप्राय है ? इस विधि का
री पाठशालाओं में कहाँ तक किया जा सकता है))
[पंजाब १९४८, १९५० सप्ली]

र—ह्यूरिस्टिक (Heuristo) शब्द ग्रीक (Greek) भाषा के
(Heurisco) शब्द से निकला है, जिसका शाब्दिक

है। हमारे विचार में तो वर्धा योजना, प्रॉजैक्ट पद्धति का ही परिवर्तित रूप है।

जैक्ट पद्धति का मनोवैज्ञानिक आधार :—

(१) इस पद्धति में सीखने के सभी नियमों (laws of learning) पालन होता है।

(२) बालकों में जो जिज्ञासा (Curiousity) रचना (Construction), संग्रह (acquisition), आत्म गौरव (Self-assertion) आदि की वृत्तियाँ हैं उनका उपयोग शिक्षा की दृष्टि से किया जाता है।

(३) बालकों को आत्म-अभिव्यक्ति के अनेकों अवसर प्रदान किए जाते है।

(४) बालक जिन परिस्थितियों में काम करते हैं, उनके द्वारा हीनता की भावना (inferiority Complex) को दूर किया जाता है।

Q. 106. Describe the Heuristic Method, mentioning th educational principles on which this method is based. [Agra 1953]

(ह्यूरिस्टिक पद्धति की चर्चा करते हुए लिखें कि इस के आधारभूत सिद्धान्त कौन-कौन से हैं ?) [आगरा १९५३]

Q. 107. Discuss the value of Heuristic Method of teaching. [Panjab 1948 Suppl]

(ह्यूरिस्टिक शिक्षण-पद्धति की प्रमुख-प्रमुख विशेषताओं पर विस्तार से प्रकाश डालो।) [पंजाब १९४८ सप्ली०]

Q. 108. What do you understand by the Heuristic Method? How far can this method be used in our schools? [Panjab 1948, 1950 Suppl]

(ह्यूरिस्टिक शिक्षण-पद्धति से आपका क्या अभिप्राय: है ? इस विधि का प्रयोग हमारे पाठशालाओं में कहाँ तक किया जा सकता है ?) [पंजाब १९४८, १९५० सप्ली]

... रिस्टिक (Heuristo) शब्द ग्रीक (Greek) भाषा के ... से निकला है, जिसका शाब्दिक

के

ह्यूरिस्टिक पद्धति और अध्यापक :—

इस शिक्षण-विधि में अध्यापक का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है। उसे प्राप्त करने का तीव्र इच्छुक होना चाहिए। अध्यापक में जिज्ञासा आदि तथा वैज्ञानिक भावना होनी चाहिए। ऐसा होने पर ही वह इन गुणं विकास, बालकों में कर सकेगा। बालकों को उनकी आयु, रुचि और क्ष के अनुसार अन्वेषण की समस्याएँ देना, अध्यापक का ही काम है। अध्य इस बात को देखता है कि कक्षा में स्वतन्त्रता का वातावरण है।

ह्यूरिस्टिक पद्धति और पाठ्यक्रम के भिन्न-भिन्न विषय :—

यद्यपि ह्यूरिस्टिक पद्धति का आयोजन वैज्ञानिक विषयों जैसे गणि भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र तथा प्रकृति-विज्ञान आदि के लिए हुआ परन्तु फिर भी पाठ्यक्रम के अन्य विषयों की शिक्षा इस पद्धति के द्वारा जा सकती है। जो विषय भी वैज्ञानिक भावना तथा खोज के अभिप्राय पढ़ाया जाए, वह इस विधि के अनुसार ही पढ़ाया जाता है। यह वि आगमनात्मक (Inductive) पाठों तथा निगमनात्मक (Deductive अध्ययन, दोनों के अध्यापन में सहायक हो सकती है।

ह्यूरिष्टिक प्रणाली की विशेषताएँ :—

(१) यह विधि मनोविज्ञान के सिद्धान्तों के अनुसार है क्योंकि इस के द्वारा विद्यार्थियों में जिज्ञासा आदि भावनाओं का विकास होता है।

(२) बालक तथ्यों की खोज स्वयं करते हैं, इसलिए वे उन्हें सुगमता से याद रख सकने में समर्थ हो सकते हैं।

(३) इस विधि के द्वारा अध्यापक पूरी कक्षा के सम्पर्क में आता है और उनका व्यक्तिगत ध्यान रख सकता है।

(४) इस प्रणाली के प्रयोग से गृह कार्य की कोई समस्या नहीं रहती क्योंकि बालकों ने कक्षा में जो कार्य किया है उस का अन्वेषण स्वयं किया है।

(५) यह विधि बालकों में वैज्ञानिक भावना का विकास करती है। बालकों को निरीक्षण करने (Observation) तथा प्रयोग करने (experimentation) के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

ह्यूरिस्टिक पद्धति और अध्यापक :—

इस शिक्षण-विधि में अध्यापक का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है। उसे ज्ञान प्राप्त करने का तीव्र इच्छुक होना चाहिए। अध्यापक में जिज्ञासा आदि गुण तथा वैज्ञानिक भावना होनी चाहिए। ऐसा होने पर ही वह इन गुणों का विकास, बालकों में कर सकेगा। बालकों को उनकी आयु, रुचि और क्षमता के अनुसार अन्वेषण की समस्याएँ देना, अध्यापक का ही काम है। अध्यापक इस बात को देखता है कि कक्षा में स्वतन्त्रता का वातावरण है।

ह्यूरिस्टिक पद्धति और पाठ्यक्रम के भिन्न-भिन्न विषय :—

यद्यपि ह्यूरिस्टिक पद्धति का आयोजन वैज्ञानिक विषयों जैसे गणित, भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र तथा प्रकृति-विज्ञान आदि के लिए हुआ था परन्तु फिर भी पाठ्यक्रम के अन्य विषयों की शिक्षा इस पद्धति के द्वारा दी जा सकती है। जो विषय भी वैज्ञानिक भावना तथा खोज के अभिप्राय से पढ़ाया जाए, वह इस विधि के अनुसार ही पढ़ाया जाता है। यह विधि आगमनात्मक (Inductive) पाठों तथा निगमनात्मक (Deductive) अध्ययन, दोनों के अध्यापन में सहायक हो सकती है।

ह्यूरिस्टिक प्रणाली की विशेषताएँ :—

(१) यह विधि मनोविज्ञान के सिद्धान्तों के अनुसार है क्योंकि इस के द्वारा विद्यार्थियों में जिज्ञासा आदि भावनाओं का विकास होता है।

(२) बालक तथ्यों की खोज स्वयं करते हैं, इसलिए वे उन्हें सुगमता से याद रख सकने में समर्थ हो सकते हैं।

(३) इस विधि के द्वारा अध्यापक पूरी कक्षा के सम्पर्क में आता है और उनका व्यक्तिगत ध्यान रख सकता है।

(४) इस प्रणाली के प्रयोग से गृह कार्य की कोई समस्या नहीं रहती क्योंकि बालकों ने कक्षा में जो कार्य किया है उस का अन्वेषण स्वयं किया है।

(५) यह विधि बालकों में वैज्ञानिक भावना का विकास करती है। बालकों को निरीक्षण करने (Observation) तथा प्रयोग करने (experimentation) के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

Critically examine the above views of Mahatama Gandhi and state how far the Basic Scheme of Education has succeeded in remedying above mentioned defects.

(मुझे इस बात का पूरा विश्वास है कि शिक्षा की वर्तमान पद्धति केवल दोषपूर्ण ही नहीं हानि कारक भी है। बालक अपने माता-पिता तथा पैतृक व्यवसाय का त्याग कर देते हैं। शहर में रहने वालों के समान उन में बुरी आदतें घर कर लेती हैं। वे जो कुछ सीखते हैं। उसे शिक्षा के अतिरिक्त कुछ भी कह सकते हैं—महात्मा गान्धी के इस कथन का विवेचन करते हुए लिखो कि बुनियादी शिक्षा उपरोक्त कमियों को दूर करने में कहां तक समर्थ हो सकी है।)

वर्तमान शिक्षा प्रणाली की त्रुटियां :—

वर्धा योजना का जन्म, वर्तमान शिक्षा प्रणाली की त्रुटियों को दूर करने के लिए हुआ। इसके प्रेणताओं के अनुसार वर्तमान शिक्षा-पद्धति में नी[illegible] लिखे दोष पाए जाते हैं —

(१) वर्तमान शिक्षा प्रणाली व्यक्ति को स्वावलम्बन का पाठ नहीं पढ़ाती। अध्ययन की समाप्ति के पश्चात् व्यक्ति आत्म-निर्भर नहीं हो पाता, किसी कार्यालय में सिवाय चाकरी करने के, वह कुछ और कर सकने में समर्थ है।

(२) यह शिक्षा बहुत शाब्दिक है। शिक्षा के व्यवहारिक पक्ष पर बल दिया जाता।

(३) इस शिक्षा के द्वारा विद्यार्थियों के चरित्र-निर्माण में किसी प्रकार कोई सहायता नहीं मिलती।

(४) यह शिक्षा बहुत महंगी है, इस लिए केवल गिने चुने लोग ही इस उठा सकते हैं।

(५) यह शिक्षा देश की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करती क्योंकि किसी प्रकार की व्यवहारिक शिक्षा का आयोजन नहीं।

(६) वर्तमान शिक्षा अपूर्ण होने के कारण विद्यार्थियों के सर्वांगीण किसी प्रकार की कोई सहायता नहीं मिलती।

Critically examine the above views of Mahatama Gandhi and how far the Basic Scheme of Education has succeeded in remed above mentioned defects.

(मुझे इस बात का पूरा विश्वास है कि शिक्षा की वर्तमान पद्धति के दोषपूर्ण ही नहीं हानि कारक भी है। बालक अपने माता-पिता तथा पैतृ व्यवसाय का त्याग कर देते हैं। शहर में रहने वालों के समान उन में बुरी आदतें घर कर लेती हैं। वे जो कुछ सीखते हैं। उसे शिक्षा के अतिरिक्त कुछ भी कह सकते हैं—महात्मा गान्धी के इस कथन का विवेचन करते हुए लिखो कि बुनियादी शिक्षा उपरोक्त कमियों को दूर करने में कहाँ तक समर्थ हो सकी है।)

वर्तमान शिक्षा प्रणाली की त्रुटियाँ :—

वर्धा योजना का जन्म, वर्तमान शिक्षा प्रणाली की त्रुटियों को दूर करने के लिए हुआ। इसके प्रणेताओं के अनुसार वर्तमान शिक्षा-पद्धति में नीचे लिखे दोष पाए जाते हैं —

(१) वर्तमान शिक्षा प्रणाली व्यक्ति को स्वावलम्बन का पाठ नहीं पढ़ाती। अध्ययन की समाप्ति के पश्चात् व्यक्ति आत्म-निर्भर नहीं हो पाता, किसी कार्यालय में सिवाय बाबूगीरी करने के, वह कुछ और कर सकने मे असमर्थ है।

(२) यह शिक्षा बहुत सैद्धान्तिक है। शिक्षा के व्यवहारिक पक्ष पर बल नहीं दिया जाता।

(३) इस शिक्षा के द्वारा विद्यार्थियों के चरित्र-निर्माण में किसी प्रकार कोई सहायता नहीं मिलती।

(४) यह शिक्षा बहुत महँगी है, इस लिए केवल गिने चुने लोग ही इस लाभ उठा सकते हैं।

(५) यह शिक्षा देश की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करती क्योंकि किसी प्रकार की व्यावसायिक शिक्षा का आयोजन नहीं।

(६) वर्तमान शिक्षा अपूर्ण होने के कारण ... किसी प्रकार की कोई सहायता नहीं

सर्वांगीण

यह तभी हो सकता है जब कि आगे बढ़ने के लिए सब को
मिलें। फिर लोकतन्त्रीय शासन का भार तो नागरिकों पर
अशिक्षित व्यक्तियों द्वारा शासन व्यवस्था सुचारु रूप से न
अतएव सिद्धान्ततः प्रारम्भिक शिक्षा सब के लिए अनिवार्य तथा
चाहिए।

(२) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा—योजना में मातृभाषा
के रूप में स्वीकार किया गया है। शिक्षा का माध्यम अ
विद्यार्थियों का बहुत सा समय, भाषा की जटिलता दूर करने
था। गान्धी जी के शब्दों में "विदेशी माध्यम सिर दर्द का का
बालकों पर अनावश्यक दबाव डालता है और उन्हें रट्टू और
देता है। उन में इतनी क्षमता नहीं रहती कि वे कोई मौलिक
अथवा मौलिक रूप से किसी बात पर विचार कर सकें। उनकी
लाभ उनके परिवार या जन साधारण को नहीं हो सकत
foreign medium has caused a brain fag,
undue strain upon the nerves of our childre
them crammers and imitators, unfitted t
original work and thought and disabled t
filtrating their learning to their family or the n

(३) उद्योग-केन्द्रीत शिक्षा—जाकिर हुसैन समिति ने गान्धी
विचारधारा से सहमत होते हुए शिक्षा को उद्योग-केन्द्रित करने
दी। उद्योग का चुनाव शिक्षा के भिन्न-भिन्न विषयों को परस्पर सम
की सम्भावना पर ही होना चाहिये। शिक्षा की सक्रियता में
रुचियों का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए। निर्वाचित उद्योग का
क्रमपूर्वक तथा वैज्ञानिक ढग से होना चाहिए जिससे कि बालकों मे
बढ़े और परिणाम लाभप्रद रहे। प्रयत्न यह होना चाहिए कि उद्यो
का साधन भी हो और साध्य भी।

(४) शिक्षा को स्वावलम्बी बनाना—इस योजना की एक अन्य
यह भी है कि जहाँ तक सम्भव हो सके, शिक्षा को स्वावलम्बी बनाय

यह तभी हो सकता है जब कि आगे बढ़ने के लिए सब को समान अवसर मिलें। फिर लोकतन्त्रीय शासन का भार तो नागरिकों पर ही रहता है। अशिक्षित व्यक्तियों द्वारा शासन व्यवस्था सुचारु रूप से न चल सकेगी। अतएव सिद्धान्ततः प्रारम्भिक शिक्षा सब के लिए अनिवार्य तथा नि.शुल्क होनी चाहिए।

(२) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा—योजना में मातृभाषा को माध्यम के रूप मे स्वीकार किया गया है। शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी होने से विद्यार्थियो का बहुत सा समय, भाषा की जटिलता दूर करने मे लग जाता था। गान्धी जी के शब्दों मे "विदेशी माध्यम सिर दर्द का कारण है। वह बालको पर अनावश्यक दबाव डालता है और उन्हे रट्टू और नकलची बना देता है। उन मे इतनी क्षमता नहीं रहती कि वे कोई मौलिक कार्य कर स अथवा मौलिक रूप से किसी बात पर विचार कर सकें। उनकी शिक्षा लाभ उनके परिवार या जन साधारण को नही हो सकता" (Th foreign medium has caused a brain fag, put a undue strain upon the nerves of our children, mad them crammers and imitators, unfitted them fo original work and thought and disabled them fo filtrating their learning to their family or the masses)

(३) उद्योग-केंद्रीत शिक्षा—जाकिर हुसैन समिति ने गान्धी जी की विचारधारा से सहमत होते हुए शिक्षा को उद्योग-केन्द्रत करने की सम्मति दी। उद्योग का चुनाव शिक्षा के भिन्न-भिन्न विषयो को परस्पर सम्बन्ध करने की सम्भावना पर ही होना चाहिये। शिक्षा की सक्रियता मे बालको की रुचियो का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए। निर्वाचित उद्योग का अध्यापन क्रमपूर्वक तथा वैज्ञानिक ढग से होना चाहिए जिससे कि बालको मे कुशलता बढ़े और परिणाम लाभप्रद रहे। प्रयत्न यह होना चाहिए कि उद्योग शिक्षा का साधन भी हो और साध्य भी।

(४) शिक्षा को स्वावलम्बी बनाना—इस योजना की एक अन्य विशेषता यह भी है कि जहाँ तक सम्भव हो सके, शिक्षा को स्वावलम्बी बनाया जाए।

(४) नागरिकता की शिक्षा—इस योजना के अनुसार बालको मे नागरिकता के गुणो का विकास किया जाता है। शोषण के स्थान पर प्रेम और अहिंसा पर बल दिया जाता है। पाठशाला का कार्यक्रम प्रजातन्त्रवादी सिद्धान्तो पर आधारित है।

बुनियादी शिक्षा के दोष—

(१) शिक्षा बाल-केन्द्रित नहीं—वर्धा योजना बाल-केन्द्रित न होकर उद्योग-केंद्रित है। फलस्वरूप बहुत छोटी अवस्था मे ही बालकों पर किसी व्यवसाय का बोझ लाद दिया जाता है।

(२) स्वावलम्बन का सिद्धान्त अव्यवहारिक तथा हानिकारक है।—पिछले २३ वर्षों का अनुभव तो यही बताता है कि शिक्षा को स्वालम्बी नही बनाया जा सकता। ऐसा करने पर विद्यालय और कारखाने मे क्या अन्तर रह जाएगा? अध्यापक अपने वेतन का खर्च निकालने के लिए बालको का शोषण करेंगे।

(३) पाठ्य-पुस्तकों का अभाव—इस योजना मे पाठ्य-पुस्तको की कमी है। बालको को सभी वस्तुओ का ज्ञान वास्तविक रूप से ही नहीं कराया जा सकता। उसके लिए पुस्तको तथा अन्य उपकरणो आदि की भी आवश्यकता पड़ती है।

(४) उद्योग के चुनाव में कठिनाई—छोटी अवस्था में बालकों की रुचियो का पर्याप्त विकास नही हुआ होता। वे माता, पिता अथवा अध्यापक की सम्मति मे जो भी उद्योग चुनते हैं उसे अन्त तक निबाहना ही पड़ता है। बाद मे चाहे उनकी रुचि उसमे हो या न हो।

(५) पाठशाला परिवर्तन में कठिनाई—यदि बुनियादी पाठशालाओ के बालक अन्य पाठशालाओ मे तथा वहाँ के बालक यहाँ आना चाहे तो बड़ी कठिनाई उपस्थित होगी क्योंकि दोनों के पाठ्यक्रमो में बड़ा अन्तर है।

Q 111. Upon what fundamental principles is the Dalton Plan based? Evaluate them. [Punjab 1953]

(डाल्टन योजना के आधारभूत सिद्धान्त कौन कौन से हैं? उनका मूल्यांकन करो।) [पंजाब १९५३]

(४) नागरिकता की शिक्षा—इस योजना के अनुसार बालको मे नागरिकता के गुणो का विकास किया जाता है। शोषण के स्थान पर प्रेम और अहिंसा पर बल दिया जाता है। पाठशाला का कार्यक्रम प्रजातन्त्रवादी सिद्धान्तो पर आधारित है।

बुनियादी शिक्षा के दोष—

(१) शिक्षा बाल-केन्द्रित नहीं—वर्धा योजना बाल-केन्द्रित न होकर उद्योग-केन्द्रित है। फलस्वरूप बहुत छोटी अवस्था मे ही बालकों पर व्यवसाय का बोझ लाद दिया जाता है।

(२) स्वावलम्बन का सिद्धान्त अव्यवहारिक तथा हानिकारक है पिछले २३ वर्षों का अनुभव तो यही बताता है कि शिक्षा को स्वाल नही बनाया जा सकता। ऐसा करने पर विद्यालय और कारखाने मे अन्तर रह जाएगा? अध्यापक अपने वेतन का खर्च निकालने के लिए बा का शोषण करेंगे।

(३) पाठ्य-पुस्तकों का अभाव—इस योजना मे पाठ्य-पुस्तको की है। बालको को सभी वस्तुओ का ज्ञान वास्तविक रूप से ही नहीं कर जा सकता। उसके लिए पुस्तको तथा अन्य उपकरणो आदि की भी श्यकता पड़ती है।

(४) उद्योग के चुनाव में कठिनाई—छोटी अवस्था में बालकों रुचियो का पर्याप्त विकास नही हुआ होता। वे माता, पिता अथवा अध्या की सम्मति से जो भी उद्योग चुनते हैं उसे अन्त तक निबाहना ही पड़ता है बाद मे चाहे उनकी रुचि उसमे हो या न हो।

(५) पाठशाला परिवर्तन में कठिनाई—यदि बुनियादी पाठशाला बालक अन्य पाठशालाओ मे तथा वहाँ के बालक यहाँ आना चाहे ही कठिनाई उपस्थित होगी क्योंकि दोनों के पाठ्यक्रमो में बड़ा अन्तर है

Q III. Upon what fundamental principles is the Dalton Pla sed? Evaluate them. [Punjab 195

(डाल्टन योजना के आधारभूत सिद्धान्त कौन कौन से हैं? उनक

उत्तर—डाल्टन पद्धति का जन्म—

डाल्टन पद्धति अथवा प्रयोगशाला योजना (Laboratory Plan) की रचना का श्रेय प्रसिद्ध अमेरिकन शिक्षा-शास्त्रिणी कुमारी हेलन पार्खर्स्ट (Helen Parkhurst) को दिया जा सकता है। कुमारी पार्खर्स्ट, इससे पूर्व १९१५ से १९१८ ई० तक श्रीमती मौंटेसरी के साथ काम कर चुकी थी और वैयक्तिक शिक्षा के महत्व से भलीभाँति परिचित थी। इस पद्धति का प्रारम्भ १९२० ई० में अमेरिका के मेसेच्यूट्स (Massachusetts) राज्य के डाल्टन (Dalton) नामक नगर में हुआ।

कुमारी पार्खर्स्ट को तीस विद्यार्थी पढ़ाने के लिए दिए गए। इन इन बालकों को इस नई विधि द्वारा शिक्षा प्रदान की और इन्हे महत्व सफलता मिली। यह अपनी पद्धति को माटेसरी योजना का एक समझती थी। इस योजना के अनुसार पाठ्यक्रम में किसी प्रकार के परिव की आवश्यकता नहीं। केवल विद्यालय का संगठन नए ढङ्ग से करना पड़ है। यह प्रणाली अध्ययन की समस्या को व्यक्तिगत विद्यार्थी के दृष्टिकोण देखती है और माध्यमिक तथा उच्च कक्षाओं में विशेष रूप से लाभकारी सि हो सकती है।

डाल्टन योजना के सिद्धान्त—

(१) व्यक्तिगत भेदों के अनुसार कार्य—बालकों में परस्पर शारीरि तथा मानसिक रूप से अन्तर होता है। इस योजना के अनुसार बालकों को अपने व्यक्तिगत भेदों और क्षमताओं के अनुसार प्रगति करने का पूरा-पूर अवसर प्रदान किया जाता है। मेधावी बालक को तीव्र गति से आगे बढ़ने तथा मतिमन्द बालक को मन्द गति से चलने की पूरी-पूरी सुविधा है। यदि कोई बालक किसी विशेष विषय में कमजोर है तो वह उस विषय में अधिक समय तक कार्य कर सकता है।

(२) शिक्षा में पूर्ण स्वतन्त्रता—पाठशाला में पूर्ण-स्वतन्त्रता का वाता-वरण होता है। बालक के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए यह अत्यन्त

उत्तर—डाल्टन पद्धति का जन्म—

डाल्टन पद्धति अथवा प्रयोगशाला योजना (Laboratory Pl
की रचना का श्रेय प्रसिद्ध अमेरिकन शिक्षा-शास्त्रिणी कुमारी
पार्खर्स्ट (Helen Parkhurst) को दिया जा सकता है। कु
पार्खर्स्ट, इससे पूर्व १९१५ से १९१८ ई० तक श्रीमती मौंटेसरी के साथ
कर चुकी थी और वैयक्तिक शिक्षा के महत्व से भलीभाँति परि
थी। इस पद्धति का प्रारम्भ १९२० ई० में अमेरिका के मेसेच्यु
(Massachusetts) राज्य के डाल्टन (Dalton) नामक नगर
हुआ।

कुमारी पार्खर्स्ट को तीस विद्यार्थी पढ़ाने के लिए दिए गए। इन्हें
इन बालकों को इस नई विधि द्वारा शिक्षा प्रदान की और इन्हें महत्वपू
सफलता मिली। यह अपनी पद्धति को माटेसरी योजना का एक भ
समझती थी। इस योजना के अनुसार पाठ्यक्रम में किसी प्रकार के परिवर्त
की आवश्यकता नहीं। केवल विद्यालय का संगठन नए ढङ्ग से करना पड़त
है। यह प्रणाली अध्ययन की समस्या को व्यक्तिगत विद्यार्थी के दृष्टिकोण
देखती है और माध्यमिक तथा उच्च कक्षाओं में विशेष रूप से लाभकारी सि
हो सकती है।

डाल्टन योजना के सिद्धान्त—

(१) व्यक्तिगत भेदों के अनुसार कार्य—बालकों में परस्पर शारीरिक
तथा मानसिक रूप से अन्तर होता है। इस योजना के अनुसार बालकों को
अपने व्यक्तिगत भेदों और क्षमताओं के अनुसार प्रगति करने का पूरा-पूरा
अवसर प्रदान किया जाता है। मेधावी बालक को तीव्र गति से आगे बढ़ने
तथा मतिमन्द बालक को मन्द गति से चलने की पूरी-पूरी सुविधा है। यदि
कोई बालक किसी विशेष विषय में कमजोर है तो वह उस विषय में अधिक
समय तक कार्य कर सकता है।

(२) शिक्षा में पूर्ण स्वतन्त्रता—पाठशाला में पूर्ण-स्वतन्त्रता का वाता-
वरण होता है। बालक के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए यह अत्यन्त

को निश्चित समय में पूरा करते है। प्रत्येक विद्यार्थी अपनी गति
करता है। यदि उस की इच्छा हो तो एक महीने का कार्य जल्दी
कर सकता है। परन्तु अगले मास का कार्य उसे तब तक नहीं दिया
जाता जब तक कि वह उस मास के लिए निर्दिष्ट सभी विषयों के कार्य
नहीं कर लेता।

(ख) वर्ग कक्षाओं के स्थान पर विषय प्रयोगशालाएं (Subject
laboratories in place of class-rooms)—इस योजना
अनुसार कक्षाओं को समाप्त कर दिया गया है और उनके स्थान पर भिन्न
विषयों की प्रयोगशालाओं का आयोजन किया गया है। इन प्रयोग
शालाओं में अपने-अपने विषय के समस्त उपकरण—पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएं
मान चित्र, रेखा चित्र तथा मूर्तियां (models), इत्यादि, रखे रहते
विभिन्न कक्षाओं के बालक जिस विषय के कार्य को पूरा करना चाहते हैं
विषय की प्रयोगशाला में जाकर अध्ययन करते हैं। उन्हें इस बात की
स्वतन्त्रता होती है कि वे किसी भी प्रयोगशाला में जाएं और जितना
चाहें वहां बैठें। इन्हीं सब कारणों से वहां समय-विभाग-चक्र (Time
table) नाम की कोई वस्तु नहीं होती और न ही हर चालीस मिनट
बाद घण्टियां ही बजती हैं। इस प्रकार विद्यार्थी अपनी-अपनी कक्षाओं में
जाकर गणित प्रयोगशाला, विज्ञान-प्रयोगशाला, इतिहास प्रयोगशाला,
...-प्रयोगशाला आदि स्थानों में जाते हैं।

(ग) डाल्टन योजना में अध्यापक का स्थान (Place of the teacher)—डाल्टन योजना के अनुसार कक्षा-अध्यापकों (Class-teachers)
के स्थान पर विषय-विशेषज्ञ (Subject specialists) होते हैं। इन का
कार्य यह होता है कि अपनी प्रयोगशाला में अध्ययन के उपयुक्त वातावरण
बनाए रखें। वे अन्य विषय-विशेषज्ञों से मिलकर वर्ष भर के लिए मासिक
योजना तैयार करते हैं, ताकि विद्यार्थियों के समय का अपव्यय न हो
और विषयों की अनावश्यक आवृत्ति न हो। विद्यार्थियों की आवश्यकता के
अनुसार उन्हें उचित परामर्श देते हैं तथा उनकी शंकाओं का समाधान करते
हैं। वे प्रत्येक विद्यार्थी के कार्य का लेखा (record) रखते हैं और यह

कार्य को निश्चित समय में पूरा करते हैं। प्रत्येक विद्यार्थी अपनी गति से कार्य करता है। यदि उस की इच्छा हो तो एक महीने का कार्य जल्दी भी पूरा कर सकता है। परन्तु अगले मास का कार्य उसे तब तक नहीं दिया जाएगा जब तक कि वह उस मास के लिए निर्दिष्ट सभी विषयों के कार्य को पूरा नहीं कर लेता।

(ख) वर्ग कक्षाओं के स्थान पर विषय प्रयोगशालाएं (Subject Laboratories in place of class-rooms)—इस योजना के अनुसार कक्षाओं को समाप्त कर दिया गया है और उनके स्थान पर भिन्न-भिन्न विषयों की प्रयोगशालाओं का आयोजन किया गया है। इन प्रयोगशालाओं में अपने-अपने विषय के समस्त उपकरण—पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ, चित्र, मान चित्र, रेखा चित्र तथा मूर्तियां (models), इत्यादि, रखे रहते हैं। विभिन्न कक्षाओं के बालक जिस विषय के कार्य को पूरा करना चाहते हैं, उस विषय की प्रयोगशाला में जाकर अध्ययन करते हैं। उन्हें इस बात की पूरी स्वतन्त्रता होती है कि वे किसी भी प्रयोगशाला में जाएँ और जितना समय चाहें वहां बैठें। इन्हीं सब कारणों से वहाँ समय-विभाग-चक्र (Time Table) नाम की कोई वस्तु नहीं होती और न ही हर चालीस मिनट पश्चात् घण्टियां ही बजती हैं। इस प्रकार विद्यार्थी अपनी-अपनी कक्षाओं में न जाकर गणित प्रयोगशाला, विज्ञान-प्रयोगशाला, इतिहास प्रयोगशाला, हिन्दी-प्रयोगशाला आदि स्थानों में जाते हैं।

(ग) डाल्टन योजना में अध्यापक का स्थान (Place of the teacher) —डाल्टन योजना के अनुसार कक्षा-अध्यापकों (Class-teachers) के स्थान पर विषय-विशेषज्ञ (Subject specialists) होते हैं। इन का कार्य यह होता है कि अपनी प्रयोगशाला में अध्ययन के उपयुक्त वातावरण बनाए रखें। वे अन्य विषय-विशेषज्ञों से मिलकर वर्ष भर के लिए मासिक कार्य-योजना तैयार करते हैं, ताकि विद्यार्थियों के समय का अपव्यय न हो और विषयों की अनावश्यक आवृत्ति न हो। विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुसार उन्हें उचित परामर्श देते हैं तथा उनकी शंकाओं का समाधान करते हैं। वे प्रत्येक विद्यार्थी के कार्य का लेखा (record) रखते हैं और यह

(४) यदि किसी कारण विद्यार्थी पाठशाला में कुछ दिन के लिए अनुपस्थित रहता है तो भी उसे किसी प्रकार की हानि नहीं उठानी पड़ती। वह छूटे कार्य को बाद में पूरा कर सकता है।

(५) इस बात की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती कि विद्यार्थियों को अतिरिक्त कार्य गृह काम दिया जाए क्योंकि वह प्रयोगशाला में जितना समय लगाना चाहे लगा सकता है।

(७) प्रयोगशाला में सामाजिक व्यवहार और सहयोग की भावना को ग्रहण करके, विद्यार्थी जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी, इसका प्रयोग करते हैं।

डाल्टन योजना की सीमाएँ—

(१) यह प्रथा तो कमजोर अथवा पढ़ाई में जी चुराने वाले विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त नहीं है। वे दूसरे विद्यार्थियों के किए गए कार्य की नकल करके काम को पूरा कर सकते हैं।

(२) इस योजना में छात्रों को मौखिक शिक्षण के लिए अवसर नहीं मिलता। प्रश्नोत्तर पद्धति से बालकों का मस्तिष्क सजग रहता है।

(३) डाल्टन योजना के अनुसार रसानुभूति के पाठ नहीं पढ़ाए जा सकते।

(४) प्रत्येक विषय के लिए अलग-अलग प्रयोगशालाएँ बनवाना और उन्हें उपयुक्त उपकरणों से सुसज्जित करना बड़ा व्ययसाध्य कार्य है। भारत-वर्ष में सार्वजनिक पाठशालाओं के पास इतना धन नहीं होता कि वे सब कार्य सुचारु रूप से कर सकें।

(५) अवलोकन एवं निर्देशन ग्रन्थों (Reference Books) के अतिरिक्त प्रत्येक विषय में पाठ्य-पुस्तकों की आवश्यकता होती है। डाल्टन योजना के अनुसार उपयुक्त पुस्तकें प्राप्त करना कठिन काम है।

(६) इस योजना की सफलता के लिए जिस प्रकार के विषय-विशेषज्ञों (Subject specialists) की आवश्यकता पड़ती है वैसे प्रायः नहीं मिल पाते।

(४) यदि किसी कारण विद्यार्थी पाठशाला से कुछ दिन के लिए अनुपस्थित रहता है तो भी उसे किसी प्रकार की हानि नहीं उठानी पड़ती। वह अपने कार्य को बाद में पूरा कर सकता है।

(५) इस बात की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती कि विद्यार्थियों को अधिकांश काम गृह कार्य दिया जाए क्योंकि वह प्रयोगशाला में जितना समय लगाना चाहे लगा सकता है।

(६) प्रयोगशाला में सामाजिक व्यवहार और सहयोग की भावना को उदय करके, विद्यार्थी जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी, इसका प्रयोग करते हैं।

डाल्टन योजना की सीमाएँ—

(१) यह प्रणाली कमज़ोर अथवा पढ़ाई में धीमे चलने वाले विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त नहीं है। वे दूसरे विद्यार्थियों के किए गए कार्य की नकल करके काम को पूरा कर सकते हैं।

(२) इस योजना में छात्रों को मौखिक चिंतन के लिए अवसर नहीं मिलता। प्रश्नोत्तर पद्धति से बालकों का मस्तिष्क सजग रहता है।

(३) डाल्टन योजना के अनुसार रसानुभूति के पाठ नहीं पढ़ाए जा सकते।

(४) प्रत्येक विषय के लिए अलग-अलग प्रयोगशालाएँ बनवाना और उन्हें उपयुक्त उपकरणों से सुसज्जित करना बड़ा व्ययसाध्य कार्य है। भारतवर्ष में सार्वजनिक पाठशालाओं के पास इतना धन नहीं होता कि वे सब कार्य सुचारु रूप से कर सकें।

(५) अवलोकन एवं निर्देशन ग्रन्थों (Reference Books) के अतिरिक्त प्रत्येक विषय में पाठ्य-पुस्तकों की आवश्यकता होती है। डाल्टन योजना के अनुसार उपयुक्त पुस्तकें प्राप्त करना कठिन काम है।

(६) इस योजना की सफलता के लिए जिस प्रकार के विषय-विशेषज्ञों (*Subject specialists*) की आवश्यकता पड़ती है वैसे प्रायः नहीं

Q 120 Write short notes on

(a) Gifts and occupations

(b) Play in kindergarten [Punjab 1955

(c) Symbolism of Froebel [Punjab 1952

(संक्षिप्त टिप्पणी लिखो)—

(i)—उपहार तथा व्यापार

(ii)—बालोद्यान और खेल [पंजाब १९५५]

(iii)—फ्रोबेल का प्रतीकवाद [पंजाब १९५२]

उत्तर—फ्रोबेल की जीवनी .—

फ्रोबेल (Froebel) का जन्म १७८२ ई० में जर्मनी में हुआ। छोटी अवस्था में ही उसकी माता का देहान्त हो गया और उसके पिता ने दूसरा विवाह कर लिया। अब बालक का पालन-पोषण उसके मामा के घर होने लगा। मामा ने उसे गाँव की पाठशाला में भेजा परन्तु बालक शिक्षा प्राप्त करने में सफल न हुआ।

पन्द्रह वर्ष की अवस्था में उसे वनों में काम करने के लिए भेजा गया। यहाँ वह प्रकृति के निकट सम्पर्क में दो वर्ष तक रहा। उसके मन में प्रकृति के प्रति प्रेम की भावना जाग उठी। उसका पिता एक धार्मिक प्रवृत्ति का पादरी था। अपनी प्रारम्भिक अवस्था में वह अपने पिता के पास रहा था। इस प्रकार प्राकृतिक प्रेम तथा धार्मिक भावना के सम्मिलित प्रभाव से उस में एक आदर्शवादी और रहस्यवादी चेतना का प्रस्फुटन हुआ। प्रकृति के भिन्न-भिन्न नियमों तथा व्यापारों में उसे एकता का भान हुआ।

सत्तरह वर्ष की अवस्था में उसने जेना विश्वविद्यालय (University of Jena) में प्रवेश किया। वहाँ उस पर फिश्टे (Fichte) तथा शैलिंग (Schelling) आदि दार्शनिकों का प्रभाव पड़ा। वह पेस्टालाजी (Pestalozzi) से मिलने यवरदन (Yverdun) भी गया जहाँ उसने पेस्तालाजी की शिक्षण पद्धति का अध्ययन किया। फ्रोबेल की निम्नलिखित

Q 120 Write short notes on

(a) Gifts and occupations

(b) Play in kindergarten [Punjab 1955

(c) Symbolism of Froebel [Punjab 1952

(संक्षिप्त टिप्पणी लिखो)--

(i)—उपहार तथा व्यापार

(ii)—बालोद्यान और खेल [पंजाब १९५५]

(iii)—फ्रोबेल का प्रतीकवाद [पंजाब १९५२]

उत्तर—फ्रोबेल की जीवनी :—

फ्रोबेल (Froebel) का जन्म १७८२ ई० में जर्मनी में हुआ। छोटी अवस्था में ही उसकी माता का देहान्त हो गया और उसके पिता ने दूसरा विवाह कर लिया। अब बालक का पालन-पोषण उसके मामा के घर होने लगा। मामा ने उसे गाँव की पाठशाला में भेजा परन्तु बालक शिक्षा प्राप्त करने में सफल न हुआ।

पन्द्रह वर्ष की अवस्था में उसे वनों में काम करने के लिए भेजा गया। वहाँ वह प्रकृति के निकट सम्पर्क में दो वर्ष तक रहा। उसके मन में प्रकृति के प्रति प्रेम की भावना जाग उठी। उसका पिता एक धार्मिक प्रवृत्ति का पादरी था। अपनी प्रारम्भिक अवस्था में वह अपने पिता के पास रहा था। इस प्रकार प्राकृतिक प्रेम तथा धार्मिक भावना के सम्मिलित प्रभाव से उस में एक आदर्शवादी और रहस्यवादी चेतना का प्रस्फुटन हुआ। प्रकृति के भिन्न-भिन्न नियमों तथा व्यापारों में उसे एकता का भान हुआ।

सत्तरह वर्ष की अवस्था में उसने जेना विश्वविद्यालय (University of Jena) में प्रवेश किया। वहाँ उस पर फिश्टे (Fichte) तथा शैलिंग (Schelling) आदि दार्शनिकों का प्रभाव पड़ा। वह पेस्टालाजी (Pestalozzi) से मिलने यवरदन (Yverdun) भी गया जहाँ उसने पेस्टालाजी की शिक्षण पद्धति का अध्ययन किया। फ्रोबेल की निम्नलिखित पुस्तकें बहुत प्रसिद्ध हैं —

(i) The Education of Man

इस लिए वह बालकों की प्रवृत्तियों और आत्म-प्रेरणाओं की पूर्ण तथा स्वतन्त्र अभिव्यक्ति का समर्थक था।

(३) विकास का सिद्धान्त—फ्रोबेल बालकों के व्यक्तित्व को बीज की समता देता था। जिस प्रकार वृक्ष का विकास बीज में छिपा रहता है उसी प्रकार बालक का विकास, उसी में निहित होता है। अध्यापक माली के समान है। उसे शिशु रूपी पौदे में ऊपर से कुछ नहीं करना वरन् इसके अंतर को बाह्य रूप प्रस्फुटित करना है। इस लिए अध्यापक को अनुकूल वातावरण की सृष्टि करके बालक के विकास में सहायता करनी चाहिए।

(४) स्वत: क्रिया का सिद्धान्त—(Self activity) उसके मतानुसार बालक का विकास आत्म-प्रेरित स्वत. क्रिया द्वारा होना चाहिए। अपनी स्वतः प्रेरणाओं और भावनाओं को पूरा करने के लिए बालक स्वयं अपने मन से सक्रिय होकर काम करता है। इसलिए काम करने में उसे पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए।

बालक के प्रारम्भिक वर्षों में विकास का सब से उत्तम साधन खेल-कूद हैं। बालक खेल-कूद में रुचि लेता है और आनन्द का अनुभव करता है। इसी लिए फ्रोबेल ने अपनी किण्डरगार्टन पद्धति में खेल कूद को प्रमुख स्थान दिया।

(५) *सामाजिक भावना का विकास*—*बालक पहले* अपने परिवार में और इसके पश्चात समाज में अपनी क्रियात्मक अभिव्यक्ति करता है। सामाजिक सम्पर्क के द्वारा ही उसे भिन्नता और समानता का बोध होता है। फ्रोबेल के विचारानुसार स्वत क्रिया द्वारा जो अनुभूति होती है, प्रकटीकरण सामाजिकता के द्वारा ही होना चाहिए क्योंकि शिशु बड़ा सामाजिक क्रियाओं में भाग लेगा। *किण्डरगार्टन बालकों का एक ऐसा* सा समाज है, जिस में बालक, एक दूसरे की सुविधा का ध्यान रखते हु स्वतन्त्रता के वातावरण में भिन्न-भिन्न क्रियाएँ करते हैं।

बालोद्यान (Kindergarten) शिक्षण पद्धति—

... ... अभिव्यक्ति के तीन प्रमुख साधन हैं—

इस लिए यह बालकों की प्रवृत्तियों और आत्म-प्रेरणाओं की पूर्ण तथा स्वतन्त्र अभिव्यक्ति का समर्थक था।

(३) विकास का सिद्धान्त—फ्रोबेल बालकों के व्यक्तित्व को बीज की समता देता था। जिस प्रकार वृक्ष का विकास बीज में छिपा रहता है उसी प्रकार बालक का विकास, उसी में निहित होता है। अध्यापक माली के समान है। उसे शिशु रूपी पौदे में ऊपर से कुछ नहीं करना वरन् उसके अतर को बाह्य रूप प्रस्फुटित करना है। इस लिए अध्यापक को अनुकूल वातावरण की सृष्टि करके बालक के विकास में सहायता करनी चाहिए।

(४) स्वतः क्रिया का सिद्धान्त—(Self activity) उसके मतानुसार बालक का विकास आत्म-प्रेरित स्वत. क्रिया द्वारा होना चाहिए। अपनी स्वतः प्रेरणाओं और भावनाओं को पूरा करने के लिए बालक स्वयं अपने मन से सक्रिय होकर काम करता है। इसलिए काम करने में उसे पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए।

बालक के प्रारम्भिक वर्षों में विकास का सब से उत्तम साधन खेल-कूद हैं। बालक खेल-कूद में रुचि लेता है और आनन्द का अनुभव करता है। इसी लिए फ्रोबेल ने अपनी किण्डरगार्टन पद्धति में खेल कूद को प्रमुख स्थान दिया।

(५) *सामाजिक भावना का विकास*—*बालक पहले* अपने परिवार में और इसके पश्चात समाज में अपनी क्रियात्मक अभिव्यक्ति करता है। सामाजिक सम्पर्क के द्वारा ही उसे भिन्नता और समानता का बोध होता है। फ्रोबेल के विचारानुसार स्वत क्रिया द्वारा जो अनुभूति होती है, उसका प्रकटीकरण सामाजिकता के द्वारा ही होना चाहिए क्योंकि शिशु बड़ा होकर सामाजिक क्रियाओं में भाग लेगा। *किण्डरगार्टन बालकों का एक ऐसा छोटा* सा समाज है, जिस में बालक, एक दूसरे की सुविधा का ध्यान रखते हुए पूर्ण स्वतन्त्रता के वातावरण में भिन्न-भिन्न क्रियाएँ करते हैं।

बालोद्यान (Kindergarten) शिक्षण पद्धति—

इस शिक्षण-पद्धति में अभिव्यक्ति के तीन प्रमुख साधन हैं—

(i) गीत (ii) गति और

(Cylinder) होते हैं। गोल में गतिशीलता और घनवर्ग में स्थायित्व का ज्ञान होता है। बेलन में गतिशीलता और स्थायित्व दोनों विशेषताएँ एक साथ सम्मिलित है।

तीसरा उपहार—यह लकड़ी का एक बड़ा घनवर्ग है जो आठ छन घन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। इसके द्वारा अंगों का पूर्ण से सम्बन्ध तथा अंगों का परस्पर सम्बन्ध स्पष्ट किया जा सकता है।

चौथा, पाँचवाँ तथा छठा उपहार यह उपहार भी तीसरे उपहार के समान है। इनके द्वारा संख्या, सम्बन्ध तथा रूप के विषय में बालकों को जानकारी कराई जाती है।

सातवाँ उपहार—इस उपहार में दो रंगों में सुन्दर लकड़ी के बने हुए चौकोर और त्रिभुजाकार टुकड़ों का सेट होता है। इसमें रेखागणित के आकारों और मीनाकारी के काम का अच्छा अभ्यास हो जाता है।

इसी प्रकार अन्य उपहार भी हैं जो कई व्यवसायों में लाभप्रद हो सकते हैं।

व्यापार—इन व्यापारों के द्वारा पदार्थों का आकार बदलने, सुधारने और दूसरा रूप देने की क्रिया हो सकती है। व्यापारों में कागज, मिट्टी, लकड़ी इत्यादि की भिन्न-भिन्न वस्तुएँ बनवाई जाती हैं। आजकल उपहारों की अपेक्षा व्यापारों को अधिक महत्त्व प्रदान किया जाता है।

फ्रोबेल का संकेतवाद—

फ्रोबेल ने अपनी शिक्षण पद्धति में संकेतवाद (Symbolism) पर बहुत अधिक बल दिया है। वह इस बात की आशा करता है कि बालक उस एकता के सिद्धान्त को तथा दैवी चेतना को, उसके उपहारों द्वारा समझ लेवें। इसी लिए वह उपहारों की भिन्न-भिन्न आकृतियों में, रहस्यवादी अर्थ देखता है। वह इतना अध्यात्मवादी है कि सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ को वह भगवान का ही दूसरा रूप समझता है।

वर्तमान शिक्षण-पद्धति पर फ्रोबेल का प्रभाव—

(१) खेल द्वारा शिक्षा—आजकल के सभी शिक्षा-शास्त्रियों तथा मनो-

(Cylinder) होते हैं। गोल में गतिशीलता और घनवर्ग में स्थायित्व का ज्ञान होता है। बेलन में गतिशीलता और स्थायित्व दोनों विशेषताएँ एक साथ सम्मिलित हैं।

तीसरा उपहार—यह लकड़ी का एक बड़ा घनवर्ग है जो आठ सम घनवर्गों में विभाजित किया जा सकता है। इसके द्वारा अंगों का पूर्ण से सम्बन्ध तथा अंगों का परस्पर सम्बन्ध स्पष्ट किया जा सकता है।

चौथा, पाँचवाँ तथा छठा उपहार यह उपहार भी तीसरे उपहार के समान है। इनके द्वारा संख्या, सम्बन्ध तथा रूप के विषय में बालकों को जानकारी कराई जाती है।

सातवाँ उपहार—इस उपहार में दो रंगों में सुन्दर लकड़ी के बने हुए चौकोर और त्रिभुजाकार टुकड़ों का सेट होता है। इसमें रेखागणित के आकारों और मीनाकारी के काम का अच्छा अभ्यास हो जाता है।

इसी प्रकार अन्य उपहार भी हैं जो कई व्यवसायों में लाभप्रद हो सकते हैं।

व्यापार—इन व्यापारों के द्वारा पदार्थों का आकार बदलने, सुधारने और दूसरा रूप देने की क्रिया हो सकती है। व्यापारों में कागज, मिट्टी, लकड़ी इत्यादि की भिन्न-भिन्न वस्तुएँ बनवाई जाती हैं। आजकल उपहारों की अपेक्षा व्यापारों को अधिक महत्व प्रदान किया जाता है।

फ्रोबेल का संकेतवाद—

फ्रोबेल ने अपनी शिक्षण पद्धति में संकेतवाद (Symbolism) पर बहुत अधिक बल दिया है। वह इस बात की आशा करता है कि बालक उस एकता के सिद्धान्त को तथा दैवी चेतना को, उसके उपहारों द्वारा समझ लेवें। इसी लिए वह उपहारों की भिन्न-भिन्न आकृतियों में, रहस्यवादी अर्थ देखता है। वह इतना अध्यात्मवादी है कि सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ को वह भगवान का ही दूसरा रूप समझता है।

वर्तमान शिक्षण-पद्धति पर फ्रोबेल का प्रभाव—

(१) **खेल द्वारा शिक्षा**—आजकल के सभी शिक्षा-शास्त्रियों तथा मनो-

। कि आत्म-विकास, समाज में रहकर सम्भव हो सकता है। आज स
शास्त्री फ्रोबेल के इस विचार से सहमत हैं और इसे क्रियान्वित क
ाग में लगे हुए हैं।

ान शिक्षण-पद्धति की सीमाएँ—

1) फ्रोबेल ने शिक्षा के दार्शनिक पक्ष पर बहुत अधिक बल दिया है
ोटे बालकों के लिये इन दार्शनिक सिद्धान्तों का समझना अत्यन्त
है।

२) फ्रोबेल के दिए हुए चित्र और गीत बहुत पुराने हो गए हैं। अभी
पर उन्हें लागू नहीं किया जा सकता।

।) आन्तरिक विकास पर बहुत अधिक बल देने से बाह्य-विकास की
ार दी गई है।

) फ्रोबेल के किण्डर गार्टन में विषयों के परस्पर समन्वय का कोई
हीं है। वर्तमान शिक्षा-शास्त्रियों के मतानुसार विषयों में परस्पर
ध स्थापित करके ही अच्छी प्रकार से शिक्षा दी जा सकती है।

21. Describe the method of sense Training, auto-education
tical activities in the Montessori system of teaching.

त्रियों को शिक्षा, आत्म-शिक्षण तथा व्यावहारिक क्रियाओं को
के लिए मांटेसरी शिक्षण-पद्धति में किन विधियों का अवलम्बन
ता है?)

122. Write a short note on Dr. Maria Montessori and
ibution to the science and practice of education Criticize
ate her work. [Agra. 1953]

मेरिया मांटेसरी पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखो, और इस
र्चा करो कि शिक्षा विज्ञान तथा शिक्षा के व्यावहारिक पक्ष को
ुनका क्या योग दान है? श्रीमती मांटेसरी के कार्य का विवेचन
न करो।) [आगरा १९५३]

123. Discuss the basic principles of the Montessori
ow have they influenced school practice generally?
[Panjab 1955, 1956]

समता कि आत्म-विकास, समाज में रहकर सम्भव हो सकता है। आज सभी शिक्षा शास्त्री फ्रोबेल के इस विचार से सहमत हैं और इसे क्रियान्वित करने के प्रयास में लगे हुए हैं।

बालोद्यान शिक्षण-पद्धति की सीमाएँ—

(१) फ्रोबेल ने शिक्षा के दार्शनिक पक्ष पर बहुत अधिक बल दिया है। छोटे-छोटे बालकों के लिये इन दार्शनिक सिद्धान्तों का समझना अत्यन्त कठिन है।

(२) फ्रोबेल के दिए हुए चित्र और गीत बहुत पुराने हो गए हैं। सभी स्थानों पर उन्हें लागू नहीं किया जा सकता।

(३) आन्तरिक विकास पर बहुत अधिक बल देने से बाह्य-विकास की उपेक्षा कर दी गई है।

(४) फ्रोबेल के किण्डर गार्टन में विषयों के परस्पर समन्वय का कोई प्रबन्ध नहीं है। वर्तमान शिक्षा-शास्त्रियों के मतानुसार विषयों में परस्पर सह-सम्बन्ध स्थापित करके ही अच्छी प्रकार से शिक्षा दी जा सकती है।

Q. 121. Describe the method of sense Training, auto-education and practical activities in the Montessori system of teaching.

(इन्द्रियों को शिक्षा, आत्म-शिक्षण तथा व्यावहारिक क्रियाओं की शिक्षा देने के लिए मांटेसरी शिक्षण-पद्धति में किन विधियों का अवलम्बन किया जाता है?)

Q. 122. Write a short note on Dr. Maria Montessori and her contribution to the science and practice of education. Criticize and evaluate her work. [Agra. 1953]

(डा० मेरिया मांटेसरी पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखो, और इस बात की चर्चा करो कि शिक्षा विज्ञान तथा शिक्षा के व्यावहारिक पक्ष को दिशा में उसका क्या योग दान है? श्रीमती मांटेसरी के कार्य का विवेचन तथा मूल्यांकन करो।) [आगरा १९५३]

Q. 123. Discuss the basic principles of the Montessori system. How have they influenced school practice generally? [Panjab 1955, 1956]

शरीर है जो बढ़ता है, एक आत्मा है जो विकसित होता है" Chil
body which grows and a soul which develops) ।
के इन दो स्वरूपों को न हमें दबाना चाहिए, न कुरूप बनाना च
उन्होंने भी अध्यापक की तुलना माली से की है।

(२) स्वतन्त्रता का सिद्धान्त—श्रीमती मांटेसरी का कहना है कि
शिक्षा बालक के व्यक्तित्व के पूर्ण प्रस्फुटन में सहायक होगी, वही शि
दृष्टि से उपयोगी कही जासकती है" (If any educational
s to be efficacious, it will be only that which t
o help towards the complete unfolding of the ch
ndividuality) । इस लिए प्रत्येक बालक को स्वयं विकास कर
यथासम्भव पूर्ण स्वतन्त्रता दी जाए। बालक स्वेच्छा से उठें, बैठें, खेलें,
रें। उन्हें दूसरा कोई आदेश न दे।

(३) बालक के व्यक्तित्व का आदर—मांटेसरी शिक्षण-पद्धति में बा
व्यक्तित्व को बड़ा महत्व दिया जाता है। उनके साथ कोई ऐसा व्य
ही किया जाता जिसमें कि उनके मन और हृदय को चोट लगने
म्भावना हो। उनके प्रत्येक कार्य का वैसा ही आदर किया जाता है जैसा
स्कों के कार्य का।

(४) ज्ञानेन्द्रियों का प्रशिक्षण—श्रीमती मांटेसरी के कथनानुसार शि
प्रक्रिया में ज्ञानेन्द्रियों का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इन्द्रियाँ
न के द्वार हैं। बालकों का अध्ययन करके वे इस परिणाम पर पहुँची
न से लेकर सात वर्ष तक बालकों की इन्द्रियाँ विशेष रूप से सक्रिय हो
और यही समय है जब कि बालक बहुत कुछ सीख सकते हैं। ज्ञानेन्द्रि
शिक्षा बालकों को मानसिक शिक्षा के लिए तैयार करती है।

(५) स्वयं-शिक्षा (Auto-education) का सिद्धान्त—श्रीम
सरी के मतानुसार बालकों को बिना अध्यापिका की सहायता के स्वयं
कुछ सीखना चाहिए। उन्होंने ऐसे शिक्षात्मक उपकरणों (Didact
paratus) का निर्माण किया है जो बालकों की भूलें स्वयं ही उन्हें बत

शरीर है जो बढ़ता है, एक आत्मा है जो विकसित होता है" Child i body which grows and a soul which develops) । वि के इन दो स्वरूपों को न हमें दबाना चाहिए, न कुरूप बनाना चाहि उन्होंने भी अध्यापक की तुलना माली से की है।

(२) स्वतन्त्रता का सिद्धान्त—श्रीमती मांटेसरी का कहना है कि " शिक्षा बालक के व्यक्तित्व के पूर्ण प्रस्फुटन में सहायक होगी, वही शिक्षा दृष्टि से उपयोगी कही जासकती है" (If any educational a is to be efficacious, it will be only that which tend to help towards the complete unfolding of the child individuality) । इस लिए प्रत्येक बालक को स्वयं विकास करने क यथासम्भव पूर्ण स्वतन्त्रता दी जाए । बालक स्वेच्छा से उठें, बैठें, खेलें, का करें । उन्हें दूसरा कोई आदेश न दे।

(३) बालक के व्यक्तित्व का आदर—मांटेसरी शिक्षण-पद्धति में बालकों के व्यक्तित्व को बड़ा महत्व दिया जाता है । उनके साथ कोई ऐसा व्यवहार नहीं किया जाता जिसमें कि उनके मन और हृदय को चोट लगने की सम्भावना हो। उनके प्रत्येक कार्य का वैसा ही आदर किया जाता है जैसा कि व्यस्कों के कार्य का।

(४) ज्ञानेन्द्रियों का प्रशिक्षण—श्रीमती मांटेसरी के कथनानुसार शिक्षा की प्रक्रिया में ज्ञानेन्द्रियों का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इन्द्रियाँ ही ज्ञान के द्वार हैं । बालकों का अध्ययन करके वे इस परिणाम पर पहुँची कि तीन से लेकर सात वर्ष तक बालकों की इन्द्रियाँ विशेष रूप से सक्रिय होती हैं और यही समय है जब कि बालक बहुत कुछ सीख सकते हैं । ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा बालकों को मानसिक शिक्षा के लिए तैयार करती है।

(५) स्वयं-शिक्षा (Auto-education) का सिद्धान्त—श्रीमती मांटेसरी के मतानुसार बालकों को बिना अध्यापिका की सहायता के स्वयं ही सब कुछ सीखना चाहिए । उन्होंने ऐसे शिक्षात्मक उपकरणों (Didactic apparatus) का निर्माण किया है जो बालकों की भूलें स्वयं ही उन्हें बता देते हैं । इस प्रकार की स्वयं-शिक्षा से बालकों में आत्म-विश्वास और आत्म-

को पहचानता होता है। [illegible] करते हैं [illegible]
बालक [illegible] करता है। [illegible]
द्वारा नाम को याद [illegible] जाती है। जैसे—"इसका क्या रंग है?"
बालक उत्तर देता—"यह लाल रंग है।"

(ख) शारीरिक [illegible] विषय (i) लिखना—इस पद्धति में पहले लिखना सिखाया जाता है [illegible] पढ़ने की [illegible] है। [illegible] लिखने [illegible] करती है। [illegible] लिखना सिखाने में [illegible] जाती है—

(१) [illegible] का अभ्यास—कागज पर [illegible] रेखाचित्र को [illegible] बनाकर उनमें [illegible] भरवाई जाती है और बालक लेखनी को ठीक ठीक पकड़ना सीख जाता है।

(२) अक्षरों का [illegible]—रेगमाल कागज पर कटे अक्षरों पर बालक उंगली फेरता है और, और अक्षरों के रूप को जानने का प्रयत्न करता है।

(३) अक्षरों का ध्वन्यात्मक विश्लेषण—बालक रेगमाल कागज के अक्षरों पर उंग [illegible] फेरते समय उनकी ध्वनि का भी उच्चारण करते हैं।

(ii) पढ़ना—इस पद्धति में पहले ध्वन्यात्मक ढंग पर कागज पर लिखी परिचित वस्तुओं का वाचन करवाया जाता है। जब बालक शब्द को ध्वनियों का ठीक-ठीक उच्चारण करने लगता है तब अध्यापिका उस पूरे शब्द को कई बार आवृत्ति करवाती है। इसके पश्चात् अध्यापिका उस वस्तु के सम्बन्ध में बालक को आदेश देती है।

(iii) गणित—गिनती सिखाने के लिए विभिन्न लम्बाइयों के छोटे बड़े दस डण्डों का प्रयोग किया जाता है। इन डण्डों की लम्बाई को कई भागों में विभाजित कर कुछ भागों को लाल और कुछ को नीला रंग दिया गया है। बालक पहले लम्बाई के क्रम में डण्डों को रखता है और फिर उनके लाल नीले भागों को गिनता है। इसी प्रकार अन्य उपकरणों द्वारा जोड़ना, घटाना, गुणा, [illegible]

Q. 124. Compare and contrast the method of infant teaching advocated by Froebel with that adopted by Montessori.

[Panjab 1955 Suppl]

(फ्रोबेल तथा श्रीमती माण्टेसरी ने शिशु-शिक्षण के लिए जिन विधियों का समर्थन किया है, उनकी आपस में तुलना करो।) [पंजाब १९५५ सप्ली०]

उत्तर—दोनों विधियों में समानताएँ—

(i) शिशु शिक्षा का आयोजन—फ्रोबेल तथा माण्टेसरी दोनो शिक्षा विशेषज्ञों ने तीन से लेकर सात वर्ष तक के बालकों के लिए शिक्षा-विधि का निर्माण किया है। फ्रोबेल से पूर्व इस प्रकार का कोई आयोजन नहीं था।

(ii) आन्तरिक विकास पर बल—दोनों ही विधियों में बालक की अन्तः प्रकृति के विकास पर बल दिया गया है। विकास के बीज तो प्रत्येक बालक में जन्मजात होते हैं। शिक्षा का कार्य है उपयुक्त वातावरण द्वारा उनका प्रस्फुटन करना।

(iii) ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा—फ्रोबेल तथा श्रीमती माण्टेसरी दोनो ने ही प्रारम्भिक अवस्था में ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण का समर्थन किया है और इस के लिए भिन्न-भिन्न उपकरणों का आयोजन किया। इन उपकरणों के प्रयोग के लिए ही प्रस्तुत विधियाँ बनाई गई।

(iv) समुचित वातावरण—दोनों ही शिक्षा विशेषज्ञों ने पाठशाला के समुचित वातावरण पर बल दिया है। पाठशाला का वातावरण सुन्दर तथा आकर्षक होना चाहिए।

(v) बालक के व्यक्तित्व का आदर—फ्रोबेल तथा श्रीमती माण्टेसरी दोनों ने ही इस बात पर जोर दिया है कि बालक के प्रति प्रेम, सहानुभूति तथा आदर का भाव प्रकट किया जाए।

दोनों विधियों में विभिन्नताएँ

किण्डरगार्टन विधि	माण्टेसरी विधि
(१) फ्रोबेल एक दार्शनिक था। वह शिक्षा को दार्शनिक दृष्टिकोण से देखता है। उसकी	*(१) श्रीमती माण्टेसरी डाक्टर* थी अतः उस का दृष्टिकोण वैज्ञानिक है। जब उस ने शिक्षा के क्षेत्र में
बालोद्यान	

Q. 124. Compare and contrast the method of Infant teachi[ng] advocated by Froebel with that adopted by Montessori.

(Panjab 1955 Sup[p.])

(फ्रोबेल तथा श्रीमती माण्टेसरी ने शिशु-शिक्षण के लिए जिन विधियों क[ा] समर्थन किया है, उनकी आपस में तुलना करो।) [पंजाब १९५५ सप्ली॰]

उत्तर—दोनों विधियों में समानताएँ—

(i) **शिशु शिक्षा का आयोजन**—फ्रोबेल तथा माण्टेसरी दोनों शिक्ष[ा] विशेषज्ञों ने तीन से लेकर सात वर्ष तक के बालकों के लिए शिक्षा-विधि क[ा] निर्माण किया है। फ्रोबेल से पूर्व इस प्रकार का कोई आयोजन नहीं था।

(ii) आन्तरिक विकास पर बल—दोनों ही विधियों में बालक की अन्त: प्रकृति के विकास पर बल दिया गया है। विकास के बीज तो प्रत्येक बालक में जन्मजात होते हैं। शिक्षा का कार्य है उपयुक्त वातावरण द्वारा उनका प्रस्फुटन करना।

(iii) **ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा**—फ्रोबेल तथा श्रीमती माण्टेसरी दोनों ने ही प्रारम्भिक अवस्था में ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण का समर्थन किया है और इस के लिए भिन्न-भिन्न उपकरणों का आयोजन किया। इन उपकरणों के प्रयोग के लिए ही प्रस्तुत विधियाँ बनाई गईं।

(iv) समुचित वातावरण—दोनों ही शिक्षा विशेषज्ञों ने पाठशाला के समुचित वातावरण पर बल दिया है। पाठशाला का वातावरण सुन्दर तथा आकर्षक होना चाहिए।

(v) **बालक के व्यक्तित्व का आदर**—फ्रोबेल तथा श्रीमती माण्टेसरी दोनों ने ही इस बात पर जोर दिया है कि बालक के प्रति प्रेम, सहानुभूति तथा आदर का भाव प्रकट किया जाए।

दोनों विधियों में विभिन्नताएँ

किण्डरगार्टन विधि	माण्टेसरी विधि
(१) फ्रोबेल एक दार्शनिक था। वह शिक्षा को दार्शनिक दृष्टिकोण से देखता है। उसकी बालोद्यान	*(१) श्रीमती माण्टेसरी डाक्टर* थी अत: उस का दृष्टिकोण वैज्ञानिक है। जब उस ने शिक्षा के क्षेत्र में

	समय-विभाग-चक्र का कोई बन्धन नहीं। वह एक कमरे से दूसरे कमरे में इच्छानुसार आ जा सकते हैं।
(५) बालकों की ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण के लिए फ्रोबेल ने बीस उपहारों (gifts) और कई व्यापारों (occupations) का आयोजन किया है।	(५) श्रीमती मान्टेसरी ने शिक्षात्मक-उपकरणों (Diductic apparatus) का निर्माण किया है। श्रवण, दर्शन तथा स्पर्श के लिए भिन्न-भिन्न उपकरण हैं। इसी प्रकार लिखना, पढ़ना तथा गिनना सिखाने के लिए भी भिन्न-भिन्न यन्त्र हैं। यह यन्त्र अशुद्धियों का संशोधन करते हैं और फ्रोबेल के उपहारों (gifts) से यह सर्वथा भिन्न होते हैं।
(६) फ्रोबेल ने शिक्षण में खेल को बहुत महत्व दिया है। बालकों की सभी क्रियाओं (activities) का सम्बन्ध खेलों से है। कोई भी पाठ हो उस में गीत (Song), गति (movement) तथा हाव भाव (gesture) अवश्य रहेंगे।	(६) मांटेसरी स्कूलों में बालक खेलते तो हैं परन्तु खेलों को इतना महत्व नहीं दिया जाता जितना कि शिक्षात्मक उपकरणों (Didactic apparatus) को।
(७) शारीरिक क्रियाओं (Manual activities) पर बहुत अधिक बल दिया जाता है उदाहरण स्वरूप बागबानी का काम (gardening) प्रकृति अध्ययन (nature study) मिट्टी के खिलौने बनाना (clay modelling) इत्यादि	(७) यद्यपि मान्टेसरी स्कूलों के पाठ्यक्रम में भी इस प्रकार की क्रियाओं का समावेश किया गया है परन्तु इनके अध्यापन के सम्बन्ध में कोई विशेष आदेश नहीं दिये गए। श्रीमती मान्टेसरी उन क्रियाओं पर बल देती है जो दैनिक जीवन

समय-विभाग-चक्र का कोई बन्धन नहीं। वह एक कमरे से दूसरे कमरे में इच्छानुसार आ जा सकते हैं।

(५) बालकों की ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण के लिए फ्रोबेल ने बीस उपहारों (gifts) और कई व्यापारों (occupations) का आयोजन किया है।

(५) श्रीमती मान्टेसरी ने शिक्षात्मक-उपकरणों (Diductic apparatus) का निर्माण किया है। श्रवण, दर्शन तथा स्पर्श के लिए भिन्न-भिन्न उपकरण हैं। इसी प्रकार लिखना, पढ़ना तथा गिनना सिखाने के लिए भी भिन्न-भिन्न यन्त्र हैं। यह यन्त्र अशुद्धियों का संशोधन करते हैं और फ्रोबेल के उपहारों (gifts) से यह सर्वथा भिन्न होते हैं।

(६) फ्रोबेल ने शिक्षण में खेल को बहुत महत्व दिया है। बालकों की सभी क्रियाओं (activities) का सम्बन्ध खेलों से है। कोई भी पाठ हो उस में गीत (Song), गति (movement) तथा हाव भाव (gesture) अवश्य रहेंगे।

(६) मांटेसरी स्कूलों में बालक खेलते तो हैं परन्तु खेलों को इतना महत्व नहीं दिया जाता जितना कि शिक्षात्मक उपकरणों (Didactic apparatus) को।

(७) शारीरिक क्रियाओं (Manual activities) पर बहुत अधिक बल दिया जाता है उदाहरण स्वरूप बागबानी का काम (gardening) प्रकृति अध्ययन (nature study) मिट्टी के खिलौने बनाना (clay modelling) इत्यादि

(७) यद्यपि मान्टेसरी स्कूलों के पाठ्यक्रम में भी इस प्रकार की क्रियाओं का समावेश किया गया है परन्तु इनके अध्यापन के सम्बन्ध में कोई विशेष आदेश नहीं दिये गए। श्रीमती मान्टेसरी उन क्रियाओं पर अधिक बल देती है जो दैनिक जीवन के लिए

प्रयोग साधारण (normal) बालकों पर भी किया गया। आज बेल्जियम के अधिकांश विद्यालयों में इसी पद्धति को अपनाया जा रहा है।

डेक्रॉली शिक्षण पद्धति के सिद्धान्त—

डेक्रॉली शिक्षण-पद्धति का मूल सिद्धान्त यह है कि बालकों को जीवन के लिए जीवन के द्वारा शिक्षा दी जाए (Child should be educat[illegible] for life by life)। इसका तात्पर्य यह है कि शिक्षा को जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करनी चाहिए। डा० डेक्रॉली के मतानुसार बालक आदिम जाति (primitive) के व्यक्ति के समान है, इसलिए उसकी आवश्यकताएँ भी वैसी ही हैं। बालक की स्वाभाविक रुचियाँ, चार आवश्यकताओं (needs) पर निर्भर है। वे चार आवश्यकताएं हैं भोजन की आवश्यकता (the need for food), रहने के स्थान की आवश्यकता (the need for shelter), सुरक्षा की आवश्यकता (the need for defence) तथा काम की आवश्यकता (the need for work)।

पाठ्यक्रम में जिन क्रियाओं (activities) का आयोजन किया गया है उनका सम्बन्ध बालकों की रुचियों (interests) से है और बालकों की रुचियों का आधार उपरोक्त चार आवश्यकताएँ है। पाठ्यक्रम में आयोजित क्रियाएँ (activities), बालकों की आयु (age) विकास की अवस्थाओं (Stages of Development) तथा पारिवारिक वातावरण (home environment) के अनुसार बदलती रहती हैं।

बालक उपरोक्त क्रियाओं (activities) को करते हुए खेल (play) विधि द्वारा लिखना (writing), पढ़ना (reading), तथा अंक गणित (arithmetic) सीखते हैं।

Q. 126. Describe the main characteristics of the Winnetka technique.

(विनेटिका शिक्षण-पद्धति की मुख्य-मुख्य विशेषताओं की चर्चा करो।)

उत्तर—विनेटिका योजना का जन्म—

इस योजना का निर्माण अमेरिका निवासी डाक्टर कार्लटन वाशबर्न (Dr. Carleton Washburne) ने किया। डा० वाशबर्न ने इस योजना

प्रयोग साधारण (normal) बालकों पर भी किया गया। आज बैलजियम के अधिकांश विद्यालयों में इसी पद्धति को अपनाया जा रहा है।

डेक्रालो शिक्षण पद्धति के सिद्धान्त—

डेक्रालो शिक्षण-पद्धति का मूल सिद्धान्त यह है कि बालकों को जीवन के लिए जीवन के द्वारा शिक्षा दी जाए (Child should be educated) for life by life)। इसका तात्पर्य यह है कि शिक्षा को जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करनी चाहिए। डा० डेक्रालो के मतानुसार बालक आदिम जाति (primitive) के व्यक्ति के समान है, इसलिए उसकी आवश्यकताएँ भी वैसी ही हैं। बालक की स्वाभाविक रुचियाँ, चार मूल आवश्यकताओं (needs) पर निर्भर है। वे चार आवश्यकताएं हैं भोजन की आवश्यकता (the need for food), रहने के स्थान की आवश्यकता (the need for shelter), सुरक्षा की आवश्यकता (the need for defence) तथा काम की आवश्यकता (the need for work)।

पाठ्यक्रम में जिन क्रियाओं (activities) का आयोजन किया गया है, उनका सम्बन्ध बालकों की रुचियों (interests) से है और बालकों की रुचियों का आधार उपरोक्त चार आवश्यकताएँ हैं। पाठ्यक्रम में आयोजित क्रियाएँ (activities), बालकों की आयु (age) विकास की अवस्थाओं (Stages of Development) तथा पारिवारिक वातावरण (home environment) के अनुसार बदलती रहती हैं।

बालक उपरोक्त क्रियाओं (activities) को करते हुए खेल (play) विधि द्वारा लिखना (writing), पढ़ना (reading), तथा अंक गणित (arithmetic) सीखते हैं।

Q. 126. Describe the main characteristics of the Winnetka Technique.

(विनेटिका शिक्षण-पद्धति की मुख्य-मुख्य विशेषताओं की चर्चा करो।)

उत्तर—विनेटिका योजना का जन्म—

इस योजना का निर्माण अमेरिका निवासी डाक्टर कार्लटन वाशबर्न (*Dr. Carleton Washburne*) ने किया। डा० वाशबर्न ने इस योजना

विनेटिका योजना के प्रधान तत्व :—

पाठशाला के कार्य को बालकों के व्यक्तिगत भेदो के अनुरूप बनाने लिए, इस योजना मे तीन मुख्य बातें हैं :—

(क) **समय इकाई के स्थल पर कार्य इकाई**—बालको को यह मालूम होना चाहिए कि उन्होने कितना कार्य करना है। प्रत्येक बालक अपनी गति से कार्य करेगा। कार्य की दृष्टि से पाठ्यक्रम को दो भागो मे विभाजित किया गया है :—

(i) व्यक्तिगत अध्ययन (Individualized studies)

(ii) सामूहिक अध्ययन (Socialized studies)

व्यक्तिगत अध्ययन—यहाँ पर विषयो को बालको की प्रगति-क्रम के अनुसार रखा गया है। इस योजना के अनुसार विषय दो प्रकार के हैं :—

(i) अनिवार्य विषय, जैसे :—लिखना, पढ़ना, गणित, भूगोल इतिहास इत्यादि।

(ii) एच्छिक विषय, जैसे :—कला, सगीत, साहित्य इत्यादि।

सामूहिक अध्ययन—इसमे भाषण, वादविवाद, अभिनय, खेल-कूद, पाठशाला-पत्रिका इत्यादि कार्य आजाएँगे।

(ख) **निदानात्मक जांच** (Diagnostic Tests)—इस जाँच का उद्देश्य परीक्षा लेना नही वरन् बालको की त्रुटियो तथा कमियो की खोज करनी है ताकि उन्हे दूर किया जा सके।

(ग) **स्वतः अध्ययन एव स्वत. संशोधन की सामग्री का प्रयोग** (Proper use of self-instruction text-books)—यदि बालको ने अपनी गति के अनुसार प्रगति करना है तो उन्हे ऐसे उपकरणो की आवश्यकता है जिन मे वे स्व-शिक्षा प्राप्त कर सकें। इस शिक्षण पद्धति मे ऐसी सामग्री प्रस्तुत की गई है जिसकी सहायता से बालक स्वय अध्ययन कर सकें।

विनेटिका योजना के प्रधान तत्व :—

पाठशाला के कार्य को बालकों क व्यक्तिगत भेदो के अनुरूप बनाने के लिए, इस योजना मे तीन मुख्य बातें हैं .—

(क) समय इकाई के स्थल पर कार्य इकाई—बालकों को यह मालूम होना चाहिए कि उन्होंने कितना कार्य करना है। प्रत्येक बालक अपनी गति से कार्य करेगा। कार्य की दृष्टि से पाठ्यक्रम को दो भागो मे विभाजित किया गया है :—

(i) व्यक्तिगत अध्ययन (Individualized studies)

(ii) सामूहिक अध्ययन (Socialized studies)

व्यक्तिगत अध्ययन—यहाँ पर विषयो को बालको की प्रगति-क्रम के अनुसार रखा गया है। इस योजना के अनुसार विषय दो प्रकार के हैं —

(i) अनिवार्य विषय, जैसे :—लिखना, पढ़ना, गणित, भूगोल इतिहास इत्यादि।

(ii) एच्छिक विषय, जैसे .—कला, सगीत, साहित्य इत्यादि।

सामूहिक अध्ययन—इसमे भाषण, वादविवाद, अभिनय, खेल-कूद, पाठशाला-पत्रिका इत्यादि कार्य आजाएँगे।

(ख) निदानात्मक जाँच (Diagnostic Tests)—इस जाँच का उद्देश्य परीक्षा लेना नही वरन् बालको की त्रुटियो तथा कमियो की खोज करनी है ताकि उन्हे दूर किया जा सके।

(ग) स्वतः अध्ययन एव स्वत. संशोधन की सामग्री का प्रयोग (Proper use of self-instruction text-books)—यदि बालको ने अपनी गति के अनुसार प्रगति करना है तो उन्हे ऐसे उपकरणो की आवश्यकता है जिन मे वे स्व-शिक्षा प्राप्त कर सकें। इस शिक्षण पद्धति मे ऐसी सामग्री प्रस्तुत की गई है जिसकी सहायता से बालक स्वय अध्ययन कर सकें।